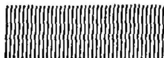
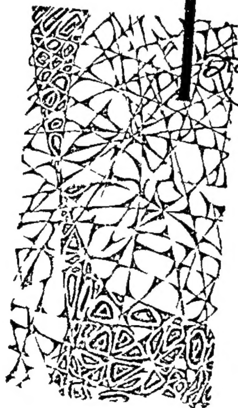
इक्कीस
बहुरगी
एकाकी

साहित्य भवन प्रा० लि०
इलाहाबाद

मयूर पंख

रामकुमार वर्मा





प्रथम संस्करण	१९६४
प्रकाशक	साहित्य भवन प्रा० लिमिटेड इलाहाबाद–३
मुद्रक	पियरलेस प्रिंटर्स इलाहाबाद–३
आवरण	शि० गो० पाण्डेय
मूल्य	ग्यारह रुपये

लक्ष्मी
और
राजलक्ष्मो
को

सूची

साहित्यिक



भूमिका

पात्र
भाषा
कथानक
शैली
चरित्र
लेखक

[कमरे मे हलका सा उजाला है। एक सोफे पर 'कथानक' उदास बैठा है। भापा' एक झाडन लेकर कमरा साफ कर रही है। कुछ क्षण बाद साफ करते हुए भापा' कथानक की ओर देखती है।]

भापा (आलमारी पोंछते हुए) बाबा ! अब तबियत कैसी है ?

कथानक बिखरते हुए बादल का आकार कब एक-सा रहा है बेटी भापा ! अब जीवन भी (खाँसता है।) जीवन भी बिखर रहा है। (खाँसता है।) एक बार यक्ष ने युधिष्ठिर से पूछा कि जीवन का सबसे बड़ा आश्चर्य आश्चर्य क्या है ? (खाँसता है।) युधिष्ठिर ने कहा कि क्षण भंगुर जीवन में भी क्षण भंगुर जीवन में भी मनुष्य चिरकाल तक जीने की बातें सोचता है। आश्चर्य नहीं है ?

भापा हाँ बाबा ! बहुत बड़ा आश्चर्य है।

कथानक उसी तरह मेरा स्वस्थ रहना भी आश्चर्य है। मेरी तबियत का हाल पूछती हो ? अब कितने दिन यह कथानक रहेगा ! अब तो कथानक का समाप्त होना ही अच्छा है।

भापा ऐसी बातें न करो बाबा ! इतनी निराशा की बातें न करो।

कथानक निराशा ? संसार में आशा ही कहाँ है जो उसकी बातें करूं ? और अगर है तो उससे बढ़कर निशाचिनी कोई नहीं है। दिन शाचि नी (खाँसता है। भापा समीप आती है।)

भापा बाबा अधिक बातें न करो। खाँसी बढ़ जायगी। देखो पहले से खाँसी और भी ज्यादा बढ़ रही है (बैठ जाती है।)

कथानक कोई चीज तो बढ़ रही है बेटी ! खाँसी ही सही। अगर इस खाँसी को भी कोई लिख सकता तो मेरे जीवन की पुस्तक पूरी हो

जाती। (खाँसता है।) जीवन को पुस्तक (रहता) अभी लेखक नहीं आया बेटी ?

भाषा (द्वार की ओर देखकर) अभी तक तो नहीं आए।

कथानक बड़ी देर से प्रतीक्षा कर रहा हूँ। कोई कह रहा था कि अब आते हैं तब आते हैं लेकिन आन का नाम नहीं। महात्मा के आगमन के समान उनके आगमन के लिए भी बन्दनवार लगवाऊँ प्रवेश द्वार बनवाऊँ ?

भाषा नहीं बाबा ! व आते ही होंगे।

कथानक लेकिन आन का नाम नहीं। इधर खाँसी भी जोर से आने लगी—(खाँसता है।) लेखक तो न आया खाँसी आ गई।

भाषा बाबा ! आपने ओज की ओजपूर्ण दवा ली थी उससे कुछ लाभ नहीं हुआ ? (पंखा झलती है।)

कथानक लाभ हो भी जाय तो उससे क्या होगा भाषा बेटी ? जब तक वह लेखक डॉक्टर न देख ले तब तक क्या भरोसा ! आगे खाँसी फिर बढ़ सकती है। और अब तो उठा भी नहीं जाता। बस चरित्र कहाँ गया सहारा देता—उठाता !

भाषा उनकी कुछ न पूछो बाबा ! जाने कहाँ कहाँ घूमते फिरते हैं सब जगह अपने को आपका उत्तराधिकारी घोषित करते हैं किन्तु आपकी जरा भी चिन्ता नहीं करते। बड़े बसे हैं !

कथानक बूड़ा बंस कबीर का उपजा पूत कमाल (खाँसता है।) जमाना ऐसा ही आ गया बेटी ! जीवन के मूल्यों में फर्क आ गया ! आज बेटा बाप बन गया है और बाप बेटा। अब मुझे पूछनेवाला कौन है ? लेखक ने भी मुझे छोड़ दिया अपने भाग्य पर ! गला सूख रहा है बेटी ! पानी

भाषा इस मधुर रस से आपको लाभ होगा ! लीजिए। (पात्र से रस भर कर देती है।) पीजिए।

कथानक (पोकर) खुश रहो बेटा। कितना अच्छा होता अगर लेखक भी तुम्हारी तरह

भाषा नहीं बाबा। लेखक महोदय तो आपकी काफी खोज-खबर रखते हैं। जब आज की दवा का असर कम होने लगता है तो वे माधुर्य और प्रसाद की दवा देते हैं। उन्होंने तो संकलन त्रय नाम के तीन वैद्यों को भी बना रखा है।

कथानक लेकिन उससे फायदा क्या! पौष्टिक दवा देते हैं लेकिन मेरी खाँसी तो दूर नहीं होती।

भाषा लेखक महोदय कहते थे कि मनोविज्ञान की औषधि से आपकी खाँसी दूर हो जायगी। उन्होंने न जाने कहाँ-कहाँ से आपके लिए मनोविज्ञान की औषधियाँ मँगवाई हैं।

कथानक चाहे जहाँ से मँगवाएँ—कुछ तो आता नहीं।

भाषा क्या करें बेचारे। आजकल रिसर्च के विद्यार्थी उन्हें बहुत घेरे रहते हैं। कहते थे कि आपकी ओर जैसे ही आने को तैयार होता हूँ वैसे ही उनके विद्यार्थी आ जाते हैं। यह भी कहते थे कि जैसे वैराग्य लेते समय मोह ममता के बंधन मजबूत हो जाते हैं वैसे ही आपके कमरे में आते समय ये रिसर्च के विद्यार्थी घेर लेते हैं।

कथानक तो फिर वे लेखक क्या बनते हैं प्रोफेसर बने रहें। दोनों रूप क्यों धारण किए हुए हैं! बहुरूपिए कहीं के। कह दो कि जिन्दगी भर मुझे मुँह न दिखाएँ।

भाषा बाबा! क्रोध न करो। बेचारे करें भी क्या! किसी के सामने आ जाने पर बेचारे संकोच नहीं तोड़ सकते

कथानक (बीच ही में) और यहाँ मेरी कमर टूट जाय। निर्मोही निर्मम (खाँसता है।)

भाषा क्षमा करो उन्हें बाबा! दोनों रस पान से खाँसी कुछ रुक

गई थी वह फिर बद गई। यह शाला वहिन आ गई।
आओ वहिन ।

(शैली का प्रवेश)

शैली बाबा ! प्रणाम ! वहिन ! नमस्कार।

भाषा नमस्कार बहिन ! आओ बैठो। लेखक महोदय अभी तक नहीं आए।

शैली आ रहे हैं बाबा ! वे अभी आ रहे हैं। (बैठती है।)

कथानक वह दो मेरे पास आने की आवश्यकता नहीं है। मैं यों ही खाँसता हुआ मर जाऊँगा। कह देना कि अब मुझ कथानक के वियोग में एक कविता लिख दें। कवि भी बनते हैं लेखक महोदय और कवि आज कौन नहीं है? छन्दोबद्ध कविता लिखने में कष्ट होता तो मुक्तवृत्त में ही सही! उसे भी कविता का नाम मिल गया है!

शैली बाबा! क्रोध करने से आपका मन स्थिर नहीं है! लेखक महोदय तो सदैव आपका चिन्तन करते रहते हैं। जैसे ध्रुव सूचक यंत्र की सुई उत्तर की ओर ही संकेत करती है उसी भाँति हर बात में वे आपका संकेत करते हैं। (भाषा से) भाषा बहिन ! बाबा का कुछ मनोरंजन करो। वे बहुत अशान्त हैं।

भाषा मुझमें तो कोई कला नहीं है बहिन ! तुमने तो संगीत का अच्छा अभ्यास किया है! तुम्हीं कोई सुन्दर सा आलाप लो।

शैली बाबा ! कवि ने विजयपर्व नाटक में एक बहुत सुन्दर गीत लिखा है। सुनाऊँ ? वही सुनाती हूँ —

(मधुर स्वर में आलाप लेती हुई गाती है।)

भली पहिचान गया कलि को।
मन्द-पवन धीरे बहा उर में भर अनुराग।
कलित कुंज में केतकी मौन रही है जाग॥
किलन का सम्मान कौन
देता कुसुमावलि को।
भली पहिचान गया कलि को।

भाषा वाह! बहुत ही मधुर गाया बहिन! भली पहिचान

कथानक हाँ! मैं भी प्रसन्न हुआ। तुम्हें गान का अभ्यास अच्छा है शैली दवि! देखो तुम्हारे संगीत से मेरी खाँसी भी अच्छी हो चली।

शैली बाबा! आपकी खाँसी बिलकुल अच्छी करने के लिए लक्षक महोदय बड़े प्रयत्नशील हैं। उन्होंने सज्जन वय की सहमति से मनोविज्ञान का औषधि देने का निश्चय किया है। उनका प्रयोग वे पाँच प्रकार से करेंगे। आहा! जैसे पंच प्राण हों जग वर्षा-काल में सूर्योदय हो। बादलों की राशि जैसे नाना रंगों की प्रदर्शिनी बन जाय। मान बादलों के मानस में इन्द्रधनुष किसी नारी के हँसते हुए मुख की भाँति तिरछा हो जाय।

कथानक कविता कर दी तुमने तो मुख की भाँति तिरछा हो जाय और मैं भी तो तिरछा खड़ा हो गया हूँ।

शैली बाबा! मेरे मान पर आपको विनोद भी सूझ गया। लक्षक अब आपको उसी प्रकार स्वस्थ कर देंगे जैसे अश्विनी कुमारों ने च्यवन ऋषि को स्वस्थ और युवक बना दिया था।

कथानक तो च्यवन ऋषि को भी कभी खाँसी आती थी जो लक्षक महोदय ठीक कर देंगे? (खाँसता है।)

शैली अवश्य ठीक कर देंगे वे आज ही बात है। एक सज्जन से बातें कर रहे थे। उन्होंने अनेक बार आपका नाम लेकर कहा

था कि शीघ्र ही मुझे उनके पास पहुँचना है। विश्राम करिए बाबा! वे आपको बिल्कुल ठीक कर देंगे। आते ही होंगे।

कथानक अच्छी बात है तो उनका स्वागत करने के लिए मैं भी तैयार हो जाऊँ। कुछ वस्त्र बिन्यास ठीक कर लूँ।

भाषा मैं आपके वस्त्र ले आऊँ।

कथानक नहीं भाषा बेटी! तुम्हें न मिलेंगे। मेरे वस्त्र मुझे ही मिलेंगे उन्हें तुम क्या जानो। मैं ही जाऊँगा अभी आता हूँ।

(उठने का उपक्रम करता है। भाषा सहारा देकर उठाती है। द्वार तक पहुँचा कर लौटती है।)

भाषा बड़े निर्बल हो गए हैं बाबा!

शैली नाटक महोदय के मनोविज्ञान से ऐसे स्वस्थ हो जावेंगे जैसे प्रथम दृष्टि में ही दुष्यन्त का शकुंतला से अनुरक्ति हो गई थी।

भाषा अनुरक्ति हो हुई विरक्ति न हो?

शैली ऐसी विरक्ति जो आगे चलकर फिर अनुरक्ति में परिणत हो जाय अधिक अभिनन्दनीय है भाषा!

भाषा होगी! बीती बातों की स्मृति बड़ा मोहक हुआ करती है।

शैली तुम तो जानती होगी बहिन! अनुरक्ति कभी बीती बात नहीं बनती। वह तो चिर-नवीन है। क्या मेनका और उर्वशी भी कभी बूढ़ी बनी हैं? वे तो प्रीति की आराध्या और आराधिका दोनों ही हैं। इसमें तो तुम सहमत होगी ही।

भाषा मेरा अनुभव उतना नहीं है बहिन जितना तुम्हारा है और फिर तुम तो नाटक महोदय के साथ सदैव ही रहती हो।

शैली और तुम? नाटक महोदय तो तुम्हारी इतनी प्रशंसा करते हैं कि कभी-कभी मुझे ईर्ष्या होने लगती है। लगता है जैसे तुम्हारे सामने मेरी कोई हस्ती ही नहीं। यदि आज के युग

में शत पुरों की परम्परा होती तो तुम्हारे चरणों पर न जाने कितने हृदय समर्पित होते।

(चरित्र का प्रवेश)

चरित्र (आते ही) हृदय समर्पण की बात कैसी ? जहाँ मैं आया कि हृदय-समर्पण हुआ। वाह ! यह अच्छा सौभाग्य है ? लेकिन यह सौभाग्य है या संयोग ?

शैली दोनों।

चरित्र भाषा रानी ? तुम क्या समझती हो ?

भाषा सौभाग्य का संयोग अथवा संयोग का सौभाग्य !

चरित्र ठीक है मुझमें इतनी शक्ति है कि मैं सौभाग्य को संयोग बना लेता हूँ और संयोग को सौभाग्य ! (देखकर) हाँ ! बाबा कहाँ हैं ?

भाषा भीतर वेश भूषा ठीक करने गए हैं।

चरित्र अपनी या किसी और की ?

शैली अब इस अवस्था में वे किसकी वेश भूषा ठीक करेंगे !

भाषा शैली बहिन ! व्यंग्य न करो। यदि तुम्हारी वेश भूषा ठीक न होती तो वे मुझे आज्ञा देते कि मैं तुम्हारी वेश भूषा ठीक करूँ। वह तो लेखक महोदय आ रहे हैं इसलिए उन्होंने समझा कि लेखक महोदय के समक्ष उन्हें अव्यवस्थित नहीं रहना चाहिए।

चरित्र अच्छा क्या लेखक महोदय आ रहे हैं ?

शैली हाँ वे किसी भी समय यहाँ आ सकते हैं।

चरित्र आ सकते हैं ! तब मुझे यहाँ नहीं रहना चाहिए। मुझे उनसे बड़ा डर लगता है। उन्होंने जिस काम के लिए मुझे भेजा था वह तो हुआ ही नहीं लेकिन डर के साथ उनके प्रति श्रद्धा भी उमड़ आती है। वे जीवन में इतने गहरे उतरते हैं

जैसे किसी पेड़ की जड़ें पृथ्वी के प्राणों में प्रवेश करती हैं और उन जड़ों से मनोविकार का अथवा रस खींचते हैं कि परिस्थितियों के रंग बिरंगे फूल खिल उठते हैं और उनसे वे मेरा शृंगार करते हैं।

शैली तब फिर डर किस बात का ?

चरित्र आह ! डर की बात न पूछो शमी रानी ! जब मैं किसी पुरुष या स्त्री का अभिनय करता हूं तो मैं चक्कर में पड़ जाता हूं कि किस कंठ से बोलूं ! एं ! बांस से बांसुरी बनने में कुछ समय तो लगता है। मालो तुम्हीं जब राजकुमार मूमल ने विभावरी का रूप धारण किया तो हजार पतला कंठ करने पर भी ढोल का स्वर निकल ही गया। (हंसता है।) ढोल का। कैसा पतला—(पतले कंठ से) दिन भर रुदन करने के कारण (मोटे कंठ से) मेरे कंठ की विकृति हो गई है !

शैली (मुस्कराकर) तो आप स्त्री का अभिनय करते समय यह क्या सोचते हैं कि आप पुरुष हैं ? बाबा इसीलिए तो आपसे विनत हूं कि जिस क्षेत्र में आप पहुंचते हैं वहां स्त्री पुरुष में कोई अन्तर ही नहीं रखते।

पापा और मुझ भी उलझा देते हैं। संवाद का वाक्य स्त्री के कंठ का है और आप उसे बना देते हैं पुरुष के कंठ का। उच्छृंखल होकर घमते हैं इसीलिए वे आप पर क्रुद्ध हो रहे थे। देखिए—बाबा आ ही पहुंचे।

(कथानक का नई वेशभूषा में प्रवेश)

चरित्र ओ हो ! बाबा तो बहुत सज हुए हैं ! कौन कहेगा कि बाबा की तबियत अच्छी नहीं है !

कथानक (चिढ़कर) तुम्हें इससे क्या ! मैं जिऊं ! या मरूं ! (खांसता

है।) तुम तो दुनियाँ भर के बीन छानकर आवारागर्दी में नाम लिखाओ (भाया से) भाया बेटी! इस चरित्र' नाम के बच्चे का इतनी भी समझ नहीं आई कि मेरे सामने आने पर वह मुझे प्रणाम करता! आजकल के बच्चे भी क्या हैं! हद है, इन लोगों की भी।

भाया प्रणाम कर लीजिए चरित्र जी!

चरित्र प्रणाम? (कथानक से) देखो बाबा! हृदय में श्रद्धा है तो वह हजार प्रणामों के बराबर है। हाथ जोड़कर प्रणाम करना अभिनय है दिखावा है। मैं दिखावे में विश्वास नहीं करता। मैं वास्तविकता का समर्थक हूँ।

कथानक तो तू वास्तविकता का बेटा है? मैं यहाँ बीमार पड़ा हूँ और तुझे वास्तविकता सूझ रही है! (भाया से) सुन रही बेटी! एक क्षण मेरे पास बैठने का अवकाश नहीं है इसे। अच्छा तुम दोनों भीतर जाओ बच्चियो। इसे मैं आज सुधार कर ही रहूँगा। (भाया और शैली भीतर चली जाती हैं।) मैं इसे आज सुधार कर ही रहूँगा।

चरित्र मुझे आप किस तरह सुधारियेगा?

कथानक सब तरह से। सबसे पहिले यह बताओ कि तुम मेरी बीमारी में मेरे पास बैठे क्यों नहीं?

चरित्र मैं बैठकर ही क्या करता बाबा? मैं कोई डॉक्टर तो हूँ नहीं और फिर बुढ़ापे में आपको करना ही क्या है? आराम कीजिए राम का नाम लीजिए। जानते हैं जीवन कितना संघर्षमय है? कितना कष्टमय है? आप इस शरीर से संघर्ष करेंगे? इस शरीर से कष्ट सहेंगे? आप तो इस जीवन संघर्ष से दूर ही रहें तो अच्छा! आप बिस्तर पर लेटिए भगवान् पतित पावन उबारेंगे।

कथानक (चिढ़ कर) आनन्द उठाना ! बीमारी में आनन्द उठाया जाता है ! बदचरित्र ! तू संसार में लोगों से मिलन लगा तो मुझे मज़दूर समझकर मेरी हिमाकत करता है ? मैं राम और कृष्ण की कथाओं का विस्तार कर चुका हूँ—विक्रमादित्य और हर्षवर्द्धन की कीर्ति का गायक हूँ, गांधी और जवाहर की जीवन-कथा का उद्घाटक हूँ—मुझे तू समझता क्या है ? (खाँसता है ।) खाँसी आने लगी तो मैं कमज़ोर हो गया ? नीच ऊँच का भेद मिटाकर कूचा-गली में तू घूमता है तो समझता है कि तू गद्य के सिर का मौर हो गया है—जो नहीं है।

चरित्र अच्छा मैं कुछ नहीं। आप सब कुछ हैं। (हाथ जोड़कर) कृपा कीजिए। अब तो आप प्रसन्न हैं ? आप सब गुण निधान कृपा निधान अतुलित बल धाम सब कुछ हैं। प्रसन्न हुए ?

कथानक तू मुझ पर व्यंग्य करता जा और मैं तुझ पर प्रसन्न होऊँ !

चरित्र अच्छा प्रसन्न मत हों। मैं एक आवश्यक काम से आया हूँ। कहूँ ? मुझे एक हजार चाहिए।

कथानक (आँखें फाड़कर) एक हजार ! चोरी और ... और उस पर सीनाज़ोरी ? मैं तुझे कुछ नहीं दे सकता। मेरी खाँसी इसीलिए खतम हो गई है कि तुझे कुछ न दूँ।

चरित्र मत दीजिए। ठीक है ! आज के साहित्य में आपका एकाउंट भी खत्म हो रहा है ! जाने दीजिए। अब मैं एक एक आदमी से माँग कर अपना हजार पूरा करूँगा। फिर न कहियेगा कि मैं दुनियाँ भर की खाक छानता हूँ !

यही ठीक है। (पुकारकर) शैली रानी !

शैली (नेपथ्य से) आई।

कथानक (चिढ़ाता हुआ मुँह बनाकर) आ ... ई !

(शैली का प्रवेश)

शैली कहिए।

चरित्र चलो मेरे साथ। हम लोग दरिद्र-नारायण का व्रत लेंगे। एक एक व्यक्ति से माँग कर अपना हजार पूरा करेंगे।

शैली बाबा ! मैं भी जाती हूँ। आप बुरा न मानिएगा। मुझे चरित्र जी का साथ देना है। लेखक महोदय शीघ्र ही आने को कह रहे थे आते होंगे—(देखकर) वे आ भी गए ! अच्छा हम लोग चलें। चलो चरित्र !

चरित्र चलो—बाबा को हम दोनों अच्छे नहीं लगते। (दोनों का प्रस्थान)

कथानक (देखकर) बड़े स्वच्छन्द हो गए हैं साथ साथ जायेंगे। जैसे इन्होंने सारा जग जीत लिया है। आवारा कहीं के। (दासी) आवारा

(पुकारकर) भाषा रानी !

भाषा (आकर) कहिए।

कथानक (खाँसता हुआ) चरित्र और शैली गए। चरित्र आया था एक हजार रुपया माँगने। (आँखें फाड़कर) एक हजार। इसकी शिकायत लेखक महोदय से करनी होगी। इनकी उच्छृङ्खलता मुझे पसन्द नहीं है। शैली को साथ लेकर एक हजार फुर से उड़ा देगा। ये रंग-ढंग मुझे पसन्द नहीं है !

भाषा मुझे भी पसन्द नहीं है, बाबा !

(लेखक का प्रवेश)

लेखक नमस्कार कथानक जी ! नमस्ते भाषा देवी ! क्षमा कीजिए मुझे आने में देर हो गई। प्रकाशक महोदय मिल गए थे— श्री भावार शरद। बड़ी मीठी बातें करते हैं। वे हृदयधन से साथ आप सबका स्वागत करने के लिए बड़े उत्सुक हैं। उसी साज सज्जा में मुझे भी देर लग गई।

भाषा बाबा बड़ी देर से आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। इनकी खाँसी बल की अपेक्षा मात्र बढ़ गई है।

लेखक खाँसी बढ़ गई है? देखा मैंने सब प्रकार से मनोविज्ञान की औषधि तैयार की है। उसमें संस्मरण यश का सहायता भी मैं ली है। उससे खाँसी शीघ्र दूर हो जायगी। जानना चाहती हो भाषा? कैसी औषधि है? बाबा तुम भी सुनो! मैं चरित्र को आज्ञा दी थी कि वह संसार में घूम कर प्रत्येक परिस्थिति की भावनाओं की क्रिया और प्रतिक्रिया जान ले। उससे ही घटना का रूप बनेगा और घटना जितनी ही प्रखर होगी उतनी ही पुष्टि आपके शरीर को मिलेगी। यह पौष्टिक सत्व ही आपको दीर्घजीवन प्रदान करेगा।

कथानक चरित्र तो अभी आया था। बड़ा उच्छृङ्खल हो गया है कहता था—बाबा! आराम करो राम का नाम लो!

लेखक राम का नाम लेने की बात में उसका एक अर्थ है। पौराणिक क्षेत्र में आपका जितना अधिकार रहा है उतना ऐतिहासिक और सामाजिक क्षेत्र में नहीं। साहित्यिक क्षेत्र में तो चरित्र का ही अधिकार है। और मर्यादा बाबा! इसी में है कि अपने अपने क्षेत्र में सभी स्वाधीन रहें। हाँ मर्यादा के लिए मैंने आपको इतना महत्व अवश्य दिया है कि आपका संकेत मात्र हो और चरित्र उसी पर काम करे। और जब आप चरित्र के संकेत पर चलेंगे तो मैं इसे चरित्र के लिए आपका आशीर्वाद ही समझूँगा।

कथानक उसे मैं आशीर्वाद क्या दूँगा! वह उसकी चिन्ता ही क्या करेगा!

लेखक अवश्य करेगा। वह आपका आशीर्वाद लेने आया था?

कथानक आशीर्वाद? (हँसता है।) आशीर्वाद? वह तो इतना उद्दण्ड

ह कि एक हज़ार रुपया माँगता था।

लेखक एक हज़ार रुपया ? (हँसता है।) रुपया ? (ज़ोर से हँसता है।) अरे, उसे तो दस हज़ार माँगना चाहिए था। वह एक हज़ार रुपया नहीं एक हज़ार आशीर्वाद चाहता था।

कथानक एक हज़ार आशीर्वाद ?

लेखक हाँ, एक हज़ार आशीर्वाद। उसने रुपये का नाम लिया था ?

कथानक (सोचता है।) ए रुपये का नाम तो नहीं लिया—सिर्फ यही कहा था कि म एक आवश्यक काय से आया हूँ। मुझे एक हज़ार चाहिए।

लेखक तो वह एक हज़ार आशीर्वाद था।

भाषा मन भी एक हज़ार का रुपया ही समझा था।

लेखक तुम बेचारी भाषा! अभिधा में ही सब बातें नहीं होतीं। लक्षणा और व्यंजना में भी विहार किया करो। मैंने ही उसे भेजा था कि वह भावों से एक हज़ार आशीर्वाद लेकर आए।

कथानक एक हज़ार आशीर्वाद ? तो तुमने ही उसे भेजा था ?

लेखक हाँ मैंने ही। वह सकलन त्रय को भी अपने साथ लाया था। वे द्वार पर खड़े हैं।

कथानक शिव शिव मैंने उसकी बातों का दूसरा ही अर्थ लगाया था। वह भी क्रुद्ध होकर शैली के साथ चला गया।

लेखक चला नहीं गया शैली के साथ मेरे पास आया। मैंने ही आप का आशीर्वाद लेकर उन दोनों को अपने पास आने का आदेश दिया था। बात यह है कि मेरा एक नया एकांकी-संग्रह प्रस्तुत होने जा रहा है— मयूरपंख। जिस तरह मयूरपंख में प्रमुख रूप से पाँच रंगों का विस्तार है उसी प्रकार उस एकांकी-संग्रह में पौराणिक ऐतिहासिक वैज्ञानिक सामाजिक

और साहित्यिक कोष प्रकार के ग्रन्थों की कोटियाँ हैं। उन्हीं के लिए मन पवित्र और शरीर को शोधन की आने का आदेश दिया था। आपका गरम तो मन प्रत्यक्ष कोटि में किया है।

कथानक तुम्हारे साथ का स्मरण बड़ी सुकुमारमय है। तो ये सारी बातें मर दित के लिए हो हुई ?

लेखक और क्या ! मुझे आपका प्यार रखना तो बहुत आवश्यक है बाबा !

कथानक तुमसे बातें करते समय मेरी खाँसी भी रुक गई।

लेखक मनोविज्ञान की औषधि से आपको स्थायी लाभ होगा बाबा ! वह सज्जन जब वह औषधि आपको अभी देंगे।

कथानक तुम मेरा कितना ध्यान रखते हो डाक्टर ! शतायु बनो।

भाषा मैं भी यही कामना दुहराती हूँ।

लेखक धन्यवाद !

भाषा मैं भी आपके साथ चलूँ ? शैली तो चरित्र के साथ चली गई।

लेखक तुम ? तुम अप्रत्यक्ष रूप से तो सदैव ही मेरे साथ हो किन्तु प्रत्यक्ष रूप से तुम बाबा के पास ही रहो। इन्हें तुम्हारी आवश्यकता होगी। अच्छा मैं चलूँ। फिर मिलूँगा। सम्भवतः मैं अभी उसी को भाषा में बातें करती हूँ। बाबा नमस्कार !

भाषा देवा नमस्ते !

(प्रस्थान)

० ० ०

पौराणिक

शैल शिखर

[एक देव-सृष्टि रूपक]

पात्र

प्रभास विभास	} अश्विनी कुमार
वनचर	शैल शिखर का निवासी
उर्वशी	इन्द्र की अप्सरा
कुमार कार्तिकेय	देवताओं के सेनापति
विश्वकर्मा	शिल्पी
इन्द्र	सुरपति
शची	इन्द्र की पत्नी
दधीच	भूलोक के महर्षि
देवदूत	

प्रभात काल ।

महर्षि दधीच का आश्रम ।

प्रथम रश्मि के आलोक में लता-गुल्मों से आवेष्ठित कुटी । पक्षियों का कूजन । होम धूप । समस्त वातावरण में एक पवित्रता ।

प्रभास फूलों की माला बना रहा है । विभास नेपथ्य में *यज्ञ के लिए समिधा बीन रहा है । प्रभास माला गूथते हुए स्फुट स्वर में कह रहा है 'यह कमल फिर यह जही फिर पाटल माला का यह क्रम '*

नेपथ्य से विविध स्वरों में क्रम से आग्रह भरे वाक्य सुनायी देते हैं

पुरुष स्वर मुझे शक्ति चाहिए ।

पुरुष स्वर और मुझे विस्तार चाहिए ।

नारी स्वर और—मुझे सुगंधि दे दो प्रभास ।

नारी स्वर मैं ऊचे से ऊचे उठना चाहती हूँ ।

पुरुष स्वर मुझे कीचड से मुक्त करो प्रभु ।

प्रभास (मुक्त कंठ से हसते हुए) ह ह ह ह ह ह ह ह ह सबको सब कुछ चाहिए । (हसता है) ह ह ह ह ह ह ह । इस चाहना की भी कोई सीमा है ? ससार सीमित है किन्तु इच्छाए ? इच्छाएँ असीम हैं । महर्षि दधीच के इस आश्रम में भी इच्छाए ! शक्ति विस्तार सुगंधि उच्चता मुक्ति यहाँ तो इच्छाए समाप्त हो जानी चाहिए किन्तु यदि इच्छाए हैं तो उनकी पूर्ति होनी चाहिए और यह पूर्ति मैं मैं अश्विनीकुमार पूरी करूँगा ।

विभास (नेपथ्य से) क्या पूरी करोगे प्रभास ? माला तो अभी पूरी की न होगी ?

प्रभास तुम तो इतनी दूर हो विभास ! तुम क्या समझो ! यदि मन माला पूरी नहीं की तो सुमन भी मन के लिए समिधा इकट्ठी नहीं की । इनसे अधिक आवश्यक बातें यहाँ हो रही हैं । ये प्रार्थनाएं सुनो ।

विभास (समीप आकर) कैसी प्रार्थनाएं ?

प्रभास शक्ति विस्तार सुगन्धि उच्चता और मुक्ति की प्रार्थनाएं । देखो यह देवदारु का पेड़—यह शक्ति चाहता है । यह वट वृक्ष यह विस्तार चाहता है । यह नन्ही-सी जुही की कली—यह सुगन्धि चाहती है सुगन्धि । सोचती है इतनी छोटी होने पर इसे कौन पूछेगा ? (हंसता है) कौन पूछेगा ? इसलिए यह सबसे मीठी सुगन्धि चाहती है और यह लोमलता । ऊँची से ऊंची उठान चाहती है । देवता भी इसकी मादकता से विह्वल हो जायें । और देखो यह कमल यह कीचड़ से मुक्ति चाहता है । मुक्ति ! (हंसता है) और मैं ? मैं क्या चाहता हूं ? मैं चाहता हूँ कि इनकी ये सभी प्रार्थनाएं पूरी कर दूं । अभी पूरी कर दूँ । (हंसता है) ।

विभास ऊंचे स्वर से मत हंसो प्रभास ! महर्षि की समाधि भंग हो जायगी ।

प्रभास यदि प्रार्थनाएं समाधि भंग नहीं कर सकती तो हंसी क्या समाधि भंग करेगी ? महर्षि की समाधि सामान्य समाधि नहीं है । वह इन्द्रियों से परे है । फिर इन्द्रियों की पुकार कैसे समाधि भंग करेगी ?

विभास तो तुम इन्द्रियों की पुकार सुन रहे हो ?

प्रभास पुकार नहीं प्रार्थनाएं ! वनस्पति जगत की प्रार्थनाएं और मैं ये

प्रार्थनाएँ पूरी करना चाहता हूँ।

विभास यदि इन्हें पूरी कर दोगे तो प्रार्थनाओं के पर निकल आयेंगे प्रभास! वे संसार की सीमाएं पीछे छोड़ देंगी।

प्रभास सीमाएं पीछे छोड़ देंगी? (हँसता है) अरे, संसार तो छोटा बड़ा होता ही रहता है। किन्तु जबसे मैंने पशु-पक्षियों और वृक्ष-लताओं की भाषा जान ली है तब से मैं इन सबकी इच्छाएँ जान लेता हूँ। इस नये ज्ञान से मुझे संसार की विचित्रताओं को बढ़ाने में आनन्द आने लगा है। विचित्रताएँ, विषमताएँ क्या, जानते हो क्या?

विभास क्यों? किसलिए?

प्रभास मैं इच्छाओं की शक्ति जानना चाहता हूँ। शक्ति। ये कहाँ तक बढ़ सकती हैं। ये वृक्ष ये लताएँ, ये फूल क्या चाहते हैं?

विभास तो अब तुम अश्विनीकुमार न रह कर ब्रह्मा बनना चाहते हो?

प्रभास तो क्या बुराई है विभास, ब्रह्मा बनने में? किन्तु हाँ मैं ब्रह्मा से दूर ही रहना चाहता हूँ। ब्रह्मा वृद्ध और हम लोग चिर कुमार। (हँसता है) चिर कुमार (हँसता है) सम्भव है ब्रह्मा ही हम लोगों से ये सब काम कराना चाहता है। तुम भी यही करो। तुम भी तो मेरे साथ अश्विनीकुमार हो! मेरे पूरक! मुझमें और तुममें यही अन्तर है यों कोई अन्तर नहीं है किन्तु यही अन्तर हो सकता है कि मैं क्रिया का संचालक हूँ और तुम सन्ध्या के! मैं संघर्ष चाहता हूँ और तुम तुम शान्ति।

विभास हाँ मैं शान्ति चाहता हूँ और शान्ति में ही विश्व का सुख है।

प्रभास शान्ति तो संघर्ष का विश्राम है विभास! विश्व का विकास तो संघर्ष में होता है विषमता में।

विभास विषमता में?

प्रभास हाँ विषमता में। यह सुनो (कोकिल का कूजन होता है) यह कोकिल ! यह कोकिल का कूजन सुना ? अहा ! कितना मधुर कूजा है ? (फिर कूजन) सुना यह मधुर स्वर ? ऐसा ज्ञात होता है कि काम सारे मय को और यम का दमन कर मोक्ष को पुकार रहा है।

विभास वाह ! कहीं काम भी मोक्ष को पुकार सकता है ?

प्रभास संसार यही तो कर रहा है। इसीलिए मैंने भी कोकिल को मीठा स्वर दे दिया। उस दिन कोकिल मेरे पास आयी। बेचारी कहने लगी—सभी पक्षी मुझसे घृणा करते हैं, मैं इतनी काली हूँ—उद्धार करो।

विभास और तुमने उद्धार कर दिया !

प्रभास हाँ मैंने उसी क्षण उसे मीठा स्वर दे दिया। आज उस काली कोयल के पास उज्जवल स्वर है। इसी प्रकार पाटल ने मुझसे प्रार्थना की कि मेरा समस्त शरीर कंटकों से भरा हुआ है मेरी रक्षा कीजिए। मैंने उसके कंटकित शरीर में इतना सुन्दर पुष्प उत्पन्न किया कि वही पाटल समस्त पुष्पों का अधिराज है।

विभास तुम तो विदूषक की भाँति कार्य कर रहे हो प्रभास ! कुछ दिनों में संसार एक विचित्र पहेली बन जायगा।

प्रभास जैसे अभी पहेली नहीं बना है। सम्पत्तिशाली के घर में पुत्र नहीं है और पुत्रवान के पास सम्पत्ति नहीं है। गुणवती नारी का पति स्वच्छाचारी और विद्वान पति की भार्या मूर्खा। महा मूर्खा। (हँसता है) साधु पुरुष को भयानक कष्ट और पापी और अत्याचारी के पास अनंत वैभव। कपट से बातें करने वाले के अनेक मित्र और मित्रता और शान्ति चाहने वाले के पड़ोसी भी भयानक शत्रु ! कैसा संयोग है ! क्या यह संसार की समस्या नहीं है ?

(नेपथ्य मे भयानक विस्फोट और बड जोर की गडगडाहट। तीव्र शब्द, जसे कोई भारी चीज गिरी हो।)

प्रभास (चौंककर नपथ्य म देखते हुए) यह कसा भयानक विस्फोट।

विभास सारी प्रकृति काँप रही ह ? देखो प्रभास। बाहर क्या हो गया ?

प्रभास म बाहर जाता हूँ।

(नेपथ्य म आर्त नाद। बचाओ बचाओ। एक वनचर का हाँफते हुए प्रवेश)

वनचर दवकुमार। बचाओ बचाओ रक्षा करो।

विभास रक्षा करो ? तुम कौन हो पुरुष ?

वनचर म म हिम शिखर की तराई में रहन वाला वनवासी हू प्रभो ! प्राणा पर भयानक भयानक सकट आ गया ह स्वामी।

प्रभास सकट ! किस प्रकार का सकट ? सकट लान वाला कौन ह ?

वनचर हिम शिखर क उस पार रहनवाला कोई दुष्ट और अत्याचारी होगा प्रभो। भयानक अस्त्र शस्त्र का प्रहार कर रहा ह। हम कहाँ जाय प्रभो ?

प्रभास शान्त शान्त स्थिर रहो वनचर ! साहसी बनो।

वनचर उत्तर के शल शिखर पर भयानक बादल उठ रह ह बादल उठ रह हैं बार-बार बिजली तडपती ह ? आँधियाँ स आँधियाँ से पड उखड कर गिर रह ह। धरा की दुदशा हो गयी ह प्रभो।

विभास यहाँ तपोवन में तो कुछ अशान्ति नहीं ह।

वनचर महर्षि क आश्रम में आँधी भी ध्यान स डरती ह। इस तपोवन के वृक्षा और लताओं को छून का साहस भी उसमें नहीं ह किन्तु इस तपोवन क बाहर इसके बाहर पृथ्वी काँप रही ह। पेड टूट-टूटकर गिर रहे ह। प्रलय क बादल उमड रह ह।

विभास प्रलय के बादल उमड़ रहे हैं ?

वनचर हाँ, प्रभो ! शान्त शिखर चूर चूर हो गये। उनसे बीच से दैत्यगण निकल निकल कर जनपदवासियों के घर जला रहे हैं। आप अपनी मन्त्र शक्ति से जनपदवासियों की रक्षा कीजिए। महर्षि जी से महर्षि जी से प्रार्थना कीजिए कि वे हमारी रक्षा करें। (करुण-स्वर से) महर्षि ! हमें बचाइए (नेपथ्य में देखकर) वह देखिए वह देखिए ! एक काला बादल उठ रहा है वह वह बिजली चमकी हाय ! मेरे घर पर गिरना चाहती है। कुछ दैत्य भी शस्त्र लेकर भयंकर ! ओह मैं जाऊँ बचाऊँ अपनी पत्नी को भान बच्चे को मैं आ रहा हूँ ! दुष्टो तुम दूर हटो पहले मुझसे युद्ध करो युद्ध करो युद्ध करो

(जल्दी से भाग कर जाता है उसका शब्द धीरे धीरे धीमा होता हुआ वायु में लीन हो जाता है।)

प्रभास सचमुच ! बहुत भयानक घटना घटित होने वाली है। मैंने कहा था न कि संसार कितनी विचित्र पहेली है ! सुख में दुःख शान्ति में युद्ध ! सम्भवतः इसीलिए ये देवगण और वन वृक्ष शक्ति प्राप्त करने की प्रार्थना कर रहे थे ! जैसे ये भविष्य जान रहे हैं !

विभास तो क्या भविष्य भयानक है ? यह प्रलय का आगमन काले बादलों का उठना बिजली का गिरना (देखते हुए) सचमुच आकाश काला हो रहा है। कोई भयानक दुर्घटना होने को है !

प्रभास वह वनचर कितना घबराया हुआ था। वह देख रहा था कि बिजली उसके घर गिरना चाहती है। उसकी स्त्री उसके बच्चे !

(नेपथ्य मे फिर विस्फोट)

प्रभास यह फिर विस्फोट हुआ ! कोई शल शिखर चूर चूर होकर गिरा । विभास ! तुम बाहर जाकर देखा ! तुम तो शान्ति के अग्रदूत हो ! अपनी मन्त्र शक्ति से इस विस्फोट को शान्त करा !

विभास मं अभी जाता हूँ । जब तक महर्षि अपनी समाधि में ह मैं बाहर जाकर दुखिया की रक्षा करता हूँ और अपनी मन्त्र शक्ति का प्रयोग करता हूँ । मैं चला !

(शीघ्रता से प्रस्थान)

प्रभास विचित्र ससार ह । अभी वभव अभी विनाश कौन जानता ह किस क्षण सृजन में प्रलय और प्रलय में सृजन हो जाय !

(नुपूर के शब्द । उवशी का प्रवेश)

उर्वशी महर्षि दधीच के तपोवन की पुण्य भूमि यही ह ?

प्रभास यही ह ! कौन ? देवि उवशी । तुम यहाँ ! महर्षि के आश्रम में ? प्रणाम करता हूँ देवि !

उर्वशी प्रणाम स्वीकार करने का अवकाश नही ह अश्विनीकुमार !

प्रभास बडी शीघ्रता में हैं देवि । तपोवन के बाहर प्रलय हो रहा ह ।

उर्वशी म जानती हूँ । महर्षि आश्रम में हैं ?

प्रभास आश्रम में तो हैं किन्तु आश्रम में नहीं हैं ।

उर्वशी परिहास का समय नही ह अश्विनीकुमार ! स्पष्ट उत्तर दो।

प्रभास मैं स्पष्ट ही उत्तर दे रहा हूँ देवि ! महर्षि आश्रम में तो हैं, किन्तु समाधि में लीन होकर आश्रम के बन्धन में नहीं ह । कहा ह कौन जानता ह ?

उर्वशी मैं जानती हूँ । वे समाधि में मेरे नृत्य की प्रतीक्षा कर रहे

प्रभास तब तो दूसरी भाँति का प्रलय होगा। महाप्रभु इन्द्र की इच्छा कौन नहीं जानता! महर्षि गौतम का शाप

उर्वशी (तीव्रता से) शान्त! दुःसाहसी, अश्विनीकुमार! महाप्रभु का अपमान? मैं भी तुम्हें शाप दे सकती हूँ।

प्रभास (हँस कर) मेरा सौभाग्य होगा देवि! आप मुझे कोई शाप तो दें। (विभास के आने का शब्द) यह कौन आया?

(विभास का शीघ्रता से प्रवेश)

विभास यह मेरा सौभाग्य है प्रभास! कि मैंने कुछ समय के लिए प्रलय रोका। (उर्वशी को देखकर) महाप्रज्ञा देवि उर्वशी! प्रणाम!

उर्वशी कौन? दूसरे अश्विनीकुमार मैं नृत्य करने की इतनी शीघ्रता में हूँ और इन प्रथम अश्विनीकुमार ने मेरा समय नष्ट कर मेरे कार्य में बाधा डाली है! मैं इन्हें शाप दूँगी!

विभास यदि शाप देना है देवि! तो उस वृत्रासुर को शाप दो जिसने यह प्रलय उत्पन्न किया है। शैल शिखरों को कुचलता हुआ वह आग बरसाना चाहता है जनपद वासियों के घरों में आग लगाता हुआ वह बेचारे दीनों को आतंकित करना चाहता है। प्रभास! मैंने अपनी मन्त्र शक्ति से उसे रोका है। वह अपने आप बीस धनुष पीछे हट गया है किन्तु मुझे आशंका है कि वह वर्जित प्रदेश में भी अपने शिविर बनायेगा। (उर्वशी से) देवि! क्षमा करें! यह नृत्य का समय नहीं है।

उर्वशी महाप्रभु! इन्द्र की आज्ञा सर्वोपरि है। नृत्य होगा और अवश्य होगा।

प्रभास देवि! क्षमा करें। महर्षियों के तपोवन में महाप्रभु इन्द्र की आज्ञा का कोई महत्त्व नहीं है!

उर्वशी महाप्रभु इन्द्र शीघ्र ही यहाँ आने वाले हैं। उन्हें उत्तर दे

सकोगे ?

प्रभास इस आश्रम में सभी का स्वगत ह देवि !

उर्वशी मैं शीघ्र ही महषि के समीप जाना चाहती हूँ।

विभास महषि अतिथि का स्वागत करेंग, किन्तु व समाधि में हाग।

उर्वशी म समाधि में ही उनके समीप जाना चाहती हूँ!

प्रभास ऐसा साहस न करें देवि !

विभास आप आसीन हा। म आश्रम में देखूँ कि महर्षि समाधि में हं अथवा जाग्रत अवस्था में। (प्रस्थान)

उर्वशी मं भी आश्रम में जाऊगी। महषि समाधि में हा अथवा जाग्रत अवस्था में। म वायु वन कर उनके ब्रह्म रन्ध्र में प्रवश करू गी। मरे प्रभु की आज्ञा प्रत्येक परिस्थिति में पूण हो!

प्रभास देवि! शान्त हा। आपका स्वामि भक्ति सराहनीय ह। किन्तु यदि ब्रह्मर्षि ने आप को शाप दे दिया तो वह आपके शाप से अधिक भयानक होगा।

(कुमार कार्तिकेय और विश्वकर्मा का प्रवेश)

कार्तिकेय वृत्रासुरके क्रोध से भयानक न होगा। कौन अश्विनीकुमार ?

प्रभास प्रभु!

कार्तिकेय महषि दधीच आश्रम में हैं। मैं सेनापति कार्तिकेय और ये शिल्पी विश्वकर्मा हं।

प्रभास दोना प्रभुआ को प्रणाम। यदि महषि समाधि से जागे हाते तो मं आप दोना के आगमन का सन्देश दूँ।

(प्रस्थानक लिए उद्यत)

कार्तिकेय और सुना! यह भी सूचना दना कि महाप्रभु इन्द्र और महा देवी शची आ आ रही ह।

अश्विनी कुमार जो आज्ञा। (प्रस्थान)

कार्तिकेय कौन? देवी उर्वशा ह ?

उर्वशी सेनापति को उवशी का प्रणाम। शिल्पी विश्वकर्मा को नमस्कार।

विश्वकर्मा नमस्कार देवि!

कार्तिकेय उवशी! युद्ध की ऋतु में तुम बहुत शीघ्र शात होती हो!

उर्वशी सेनापति! म जितन शीघ्र महर्षि के दशन करना चाहती थी, उतना ही अधिक विलम्ब हो गया।

कार्तिकेय हम भी महर्षि क दशन करन आय ह उवशी! महापुरुषा के दशन में विलम्ब हो जाना तो स्वाभाविक ह। किन्तु महर्षि और नारी की भेंट नही हानी चाहिए।

उवशी कारण?

कार्तिकेय अत कारण और इन्द्रिया में विरोध ह।

उवशी आप महर्षिया के अन्त करण को निबल समझत ह सेनापति!

कार्तिकेय नही नारिया को सबल समझता हूँ। उनके पास बहुत बडा धनुर्वेद ह। उनके तरकस म न्द्रिय बाणा के समूह ह। जब व मौन होती ह तो एक बाण का सधान होता ह गहरी साँस नती ह तो कए से दस बाण बनत ह गहरी साँस के साथ सिसकी सौ बाणा का निर्माण करती ह और उसके साथ दो आँसुआ में सहस्र बाणा को गति मिलती ह। यह विचित्र धनुर्वेद ह। मर धनुर्वेद से यह धनुर्वेद महान ह!

उर्वशी सेनापति क्षमा करें। इस धनुर्वेद का प्रयोग सदव एक-सा नही होता। सभी नारिया एक सी नही होती।

कार्तिकेय और सभी अप्सराए?

उर्वशी व महाप्रभ इन्द्र की सेविकाए ह। महाप्रभु की आज्ञा ही उनके काय की दिशा ह!

कार्तिकेय महाप्रभु की आज्ञा से उवशी! तुम मरी सेना में सम्मिलित हो सकती हो?

हो।
ो की

ा के
पि

उर्वशी सेनापति ! मुझ सेना के योग्य समझते हैं ?

कार्तिकेय यदि अप्सरा अप्सरा न रह कर नारी बन जाय तो वह शक्ति है ! दुर्गा है !

विश्वकर्मा अप्सरा भी तो शक्ति है सेनापति ! महाप्रभु इन्द्र महर्षियों पर इसी शक्ति का प्रयोग करते हैं।

कार्तिकेय शक्ति जब विलास की सामग्री बनती है विश्वकर्मा तो वह समाप्त हो जाती है। शक्ति वह है जो सदैव एक-सी बनी रहे। अग्नि और वायु की शक्तियाँ क्या कभी क्षीण होती हैं ? अग्नि और वायु को लेकर ही मैंने तारकासुर का वध किया। आज वृत्रासुर का वध करना है तो उर्वशी अग्नि की शक्ति क्या नहीं बन सकती ?

विश्वकर्मा किन्तु महाभागा उर्वशी तो सर्वश्रेष्ठ नर्तकी है।

कार्तिकेय नर्तकी ? जब देवता रणभूमि में यन्त्रणा से कराह रहे हैं तब नर्तकी नूपुरों में नाद भर स्वप्नों के जाल बुने ? जब धनुषों पर बाणों का संधान होना चाहिए तब वह नृत्य के छन्द धनुषों पर प्राणों का संधान करे ? जीवन का अपने मोहपाश में बाँधकर सारी इन्द्रियों को कुण्ठित कर दे !

उर्वशी मैं ऐसी अप्सरा नहीं हूँ सेनापति।

कार्तिकेय तो तुम महर्षि दधीचि के आश्रम में किसलिए आयी हो ?

उर्वशी महाप्रभु इन्द्र की आज्ञा से उनके अनाहत नाद पर इसलिए नृत्य करूँ कि वे प्रसन्न होकर देवताओं की रक्षा में अपनी शक्तियों का उपयोग करें।

कार्तिकेय और उनका अनाहत नाद भंग हो गया तो ? यदि उन्होंने क्रुद्ध होकर शाप दे दिया तो ? जिस प्रकार सभी नारियाँ एक सी नहीं होतीं उसी प्रकार सभी महर्षि समान नहीं होते। वे शाप भी दे सकते हैं।

उर्वशी मैं आज शाप भोग रही हूँ सेनापति! महाप्रभु की सभा में एक शाप और भोगूँगी।

कार्तिकेय नहीं उर्वशी! तुम शाप नहीं भोगोगी। संकट काल में परस्पर का अभिशाप घातक है। महर्षि की शक्ति शाप देने में नष्ट नहीं होनी चाहिए।

उर्वशी महाप्रभु! इन्द्र मुझ पर रुष्ट होंगे।

कार्तिकेय वज्रासुर के आक्रमण से वे बहुत सन्त्रस्त हो गये हैं। उनकी बुद्धि स्थिर नहीं है। उनका सन्तुलन खो गया है। जाओ इसका भार मुझ पर है। हिम शिखर पर युद्ध और आश्रम में नृत्य! असम्भव!

विश्वकर्मा आज के युग में असम्भव बातें ही हो रही हैं।

कार्तिकेय इसलिए कि हम असावधान हैं! बिना सोचे-समझे हम अप्सराओं से नृत्य कराते हैं। उर्वशी! यदि नृत्य करना है तो युद्ध भूमि में भैरवी नृत्य करो! जगज्जननी पार्वती बनो माता गंगा बनो! वसुमती कृत्तिका बनो—मेरी माँ बनो। देवताओं में ऐसा साहस भरो कि वे शत्रु का विनाश करने में अग्रसर हों।

विश्वकर्मा सेनापति! मोहिनी रूप से भी असुरों का नाश किया गया है! अपने नृत्य कौशल से महाभागा उर्वशी ऐसा नृत्य करें कि असुर इन्हें देखते ही रह जायें! आक्रमण करना ही भूल जायें!

कार्तिकेय विश्वकर्मा! तुम शिल्पी हो। तुम्हें सौंदर्य मात्र की पहचान है। शक्ति की पहचान नहीं है? मोहिनी रूप से दो असुरों में ईर्ष्या उत्पन्न कर उनका नाश किया गया था सेना का नहीं। यहाँ हमें असुरों के साथ सेना का भी नाश करना है! सेना का भी। सेना मोहिनी रूप से नहीं शक्ति के रूप से पराजित

होगी ! उवशी ! तुम शक्ति बना ।

उर्वशी शक्ति बनू गी सेनापति ता म महाप्रभु की सभा में अपना पद खो दूगी !

कार्तिकेय इस सक्टकाल में तुम्हें अपन पद का मोह ह, उवशी ? प" क्या ह ? अपन अधिकार और वभव का मिहासन ! जब हम शत्रु स आक्रान्त हो रह ह ता किस वभव का हमें अधिकार ह । और किस अधिकार का वभव हमारे पास ह उवशी ! सावधान ! अपन प" क माह में तुम कही शत्रु से पद दलित न हो जाओ ! अपना शक्ति का पूण उपयोग हो ! तुम नारी हो और नारी ही एसी शक्ति ह जो अपना आ"श पूरा करती ह । निर्माण में जग जननी पावता और विनाश में महादुगा । पावता ही दुर्गा ह और दुर्गा ही पार्वती और दोना की पूणता अपने अपन क्षेत्र में अद्वितीय ह ।

विश्वकर्मा मन दोना के ही चित्र बनाये हैं सेनापति ! पावती और दुर्गा ! आहा ! कितने भ"य रूप ह ?

उवशी मैं कृताथ हुई सनापति !

कार्तिकेय म सुनकर प्रसन्न हूं । और सुनो । य" महाप्रभु इन्द्र तुम्हें अपन पद से हटा भी दें, तो मरी सेना में तुम्हारा स्थान सुरक्षित ह ।

उर्वशी ठीक ह सेनापति ! मैं तुम्हारी सना में घायना की सेवा शुश्रूषा करूगी । उन्हें सजीविना दूंगी और अमृत का पान कराऊगी ।

कार्तिकेय ता तुम जाओ । मैं सेना में तुम्हारी प्रतीक्षा करूगा । महर्षि से "या शस्त्र प्राप्त कर मं शीघ्र ही सेना की व्यवस्था करूगा । तुम्हें सुनकर प्रसन्नता होगी कि हमारे आगे वे अभियान में महाप्रभु इन्द्र भा हाग ।

उर्वशी तब वा हमारी विजय निश्चित ह !

कार्तिकेय विजय तो निश्चित है जब शस्त्रों के निर्माता विश्वकर्मा हमारे साथ हैं।

विश्वकर्मा मैंने सूर्य के आठवें भाग को खरादकर भगवान विष्णु का सुदर्शन चक्र, महायोगी शिव का त्रिशूल और महासेनापति कार्तिकेय का बाण बनाया है। महर्षि दधीचि द्वारा दिये गये शस्त्र का निर्माण भी मैं करूँगा।

उर्वशी मैं कल्पवृक्ष के कोमल पत्तों की शैया बनाकर क्लांत विक्षत देवताओं को विश्राम दूँगी। मैं इन्द्रधनुष के पंखों से हवा करूँगी और मन्दाकिनी के जल से उन्हें शीतलता पहुँचाऊँगी।

कार्तिकेय स्वस्ति! तुम जाओ!

उर्वशी प्रणाम करती हूँ सेनापति। प्रणाम करती हूँ महाशिल्पी!

विश्वकर्मा जब तुम इन्द्रधनुष के पंखों से हवा करोगी तो मैं तुम्हारी सुन्दर मूर्ति का निर्माण करूँगा उर्वशी!

कार्तिकेय जाओ सन्तप्तों को सुख शान्ति दो।

उर्वशी सेनापति की जय!

(प्रस्थान)

विश्वकर्मा सेनापति! तुमने तो उर्वशी को दुर्गा बना दिया!

कार्तिकेय यदि प्रयत्न किया जाय विश्वकर्मा! तो विष भी अमृत में बदला जा सकता है। यह प्रयोग करने वाले का कौशल है कि वह परिस्थिति का उपयोग किस प्रकार करता है।

विश्वकर्मा सत्य है सेनापति! मैं भी सामान्य वस्तुओं का उपयोग इस प्रकार करता हूँ कि उससे शिल्प की महान् कृति बन जाती है। किन्तु उर्वशी आयी और चली भी गयी किन्तु महर्षि की समाधि अभी तक समाप्त नहीं हुई।

कार्तिकेय समाधि की सीमा सांसारिक समय से नहीं नापी जाती विश्वकर्मा! तुम शिल्प की सीमा में समाधि बाँधना चाहते हो?

विश्वकर्मा सीमाहीन केवल विश्वात्मा है, सेनापति! उनके अतिरिक्त समस्त सृष्टि सीमा में है। शम्भु की समाधि की भी कल्पान्त में सीमा है। (आने का शब्द) कोई आया! (प्रभास का प्रवेश)

प्रभास प्रभु! महर्षि समाधि से जागे हैं। ओह! उनके ललाट में कितनी ज्योति है। उनके नेत्र शून्य में कुछ खोज रहे हैं।

कार्तिकेय सम्भवतः संसार की परिस्थिति और वातावरण का विश्लेषण कर रहे हों।

विश्वकर्मा सम्भवतः हमारी ही स्थिति-पर विचार कर रहे हों।

(देवदूत का प्रवेश)

देवदूत प्रभु को प्रणाम! महाप्रभु इन्द्र और महादेवी शची अपने यान से उतर कर आश्रम में प्रविष्ट हो रहे हैं।

कार्तिकेय उनका आगमन शुभ हो! महर्षि समाधि से जागे हैं।

देवदूत प्रभु की जय। यह सेवक द्वार पर उपस्थित रहेगा!

(प्रस्थान)

प्रभास इस आश्रम का धन्य भाग कि आज देव-सृष्टि ने ही आश्रम में पदार्पण किया है।

कार्तिकेय अश्विनाकुमार! महर्षि मानव हैं किन्तु आज वे देवताओं से भी महान बन गये हैं। मानव भी कितना प्रतापी है कि देव सृष्टि भी उसकी शरण में आती है। वह नर ही है जो नारायण बन सकता है। (देवदूत के सहित महाप्रभु इन्द्र और महादेवी शची का प्रवेश)

प्रभास स्वागत महाप्रभु इन्द्र! स्वागत महादेवी शची!

कार्तिकेय
और विश्वकर्मा हमारा भी प्रणाम स्वीकार हो।

इन्द्र स्वस्ति! महर्षि के तपोवन को प्रणाम!

शची मैं भी महर्षि के तपोवन को प्रणाम करती हूँ।

इन्द्र सेनापति कार्तिकेय भरे आदेशानुसार तुम और विश्वकर्मा यहाँ उपस्थित हो किन्तु उर्वशी यहाँ नहीं है ?

कार्तिकेय हम दोनों के ध्यान से पूर्व ही वह यहाँ उपस्थित थीं किन्तु महाप्रभु मैंने उसे अन्यत्र भेज दिया। मैंने उसे सेना में नियोजित कर दिया है।

इन्द्र सेना में ? उर्वशी को सेना में (हँसते) महादेवी ! सेनापति कार्तिकेय अब तुम्हें भी सेना में नियोजित करेंगे।

शची धन्यभाग्य ! स्वामी के साथ युद्ध में जाना हमारे लिए गौरव की बात ही होगी !

इन्द्र मैं खुश हुआ महादेवी ! किन्तु उर्वशी ने नृत्य किया ?

कार्तिकेय वह रणक्षेत्र में भैरवी नृत्य करेगी महाप्रभु !

शची कुमार कार्तिकेय कुशल सेनापति हैं। वे अप्सराओं को भी भैरवी बना देंगे। फिर कुमार के सामने नारियों का कार्य क्षेत्र ही बदल जाता है। कोई भी नारी कुमार के समक्ष जननी बन जायगी।

इन्द्र हम तुम्हारे कार्य से प्रसन्न हैं सेनापति ! ऐसा ही होना चाहिए। हमारे पुराने संस्कार सरलता से नहीं बदल पाते। अब मैं स्थिरमति हूँ। (प्रभास से) अश्विनी कुमार ! तुम देवताओं के वैद्य हो। तुम्हारी भी रण क्षेत्र में आवश्यकता होगी।

प्रभास हम दोनों अश्विनी कुमार प्रस्तुत हैं प्रभु !

इन्द्र तथास्तु ! महर्षि समाधि से जागे ?

प्रभास अभी जागे हैं महाप्रभु !

इन्द्र अन्तरिक्ष की वायु तरंग ने हमें सूचना दी कि महर्षि ने अपनी समाधि समाप्त की। उसी क्षण हम चले। जाकर निवेदन करो कि हम सब उनके दर्शन के लिए उपस्थित हैं। भगवान

विष्णु के आदेश से ही हम लोगो ने महर्षि के आश्रम में प्रवश किया ह ।

प्रभास म अभी सूचना देता हू महाप्रभु !

शची मेरा विशेष प्रणाम निवन्न करना ।

प्रभास जसी आना, महादेवी ! (प्रस्थान)

इन्द्र वृत्रासुर का भयानक आतक । हमारा विश्वास था, सेनापति ! कि जिस बाण से तुमने महाअसुर तारक की भुजाए काटी थीं, उसी बाण से वृत्रासुर का मस्तक भी कटगा किन्तु वृत्रासुर सामान्य दत्य नही ह । वह अपनी शक्ति का विस्तार चाहता ह । वह कराल काल के समान भीषण और दावानल से झुलसे पहाड की भाँति काला ह । मध्यकालीन सूय के समान उसकी प्रचण्ड आखें ह । वह प्रतिदिन तीस गज बन्ता ह । उसने सभी दिशाओ का आवृत्त कर लिया ह इसीलिए उसका नाम वृत्रासुर ह ।

कार्तिकेय सत्य ह महाप्रभु ! वृत्रासुर ने हमारा समस्त सेना का नाश कर दिया । उसकी टनकार से समस्त पृथ्वी काँपन लगती ह और एसा प्रतीत होता ह मानो उसने अपने चमचमाते हुए हुए त्रिशूल पर पृथ्वी और आकाश को उठा लिया ह । मुझे विश्वास था कि म अपन बाण से उसका मस्तक काट दूँगा, किन्तु मरा बाण उसकी भुजाएँ भी नही काट सका और उन्हीं भुजाओ स उसन हमार दवताओ में स न जान कितन सेनानियो को बन्दी बना लिया ।

विश्वकर्मा और महाप्रभु ! वह बड गव से साथ हमारे सेनानियों के अलग अलग जत्था को क्रम स छाड कर अट्टहास करता ह ।

कार्तिकेय महाप्रभु ! रक्षा का उपाय शीघ्र ही होना चाहिए । आज हमारी सेना के न जान कितन वीर युद्ध में बन्दी बनकर शत्रु

के असह्य अत्याचारों को सहन कर रहे हैं ? मैं रोषाग्नि होकर अपने शनिवा मे कष्ट जाता हूँ !

शची कुमार कार्तिकेय ! तुम्हारे तो बारह नेत्र और बारह भुजाएँ हैं। तुम सुब्रह्मण्य हो। देवताओं में सेनापति हो। फिर भी शत्रु के आक्रमण की गति विधि तुम नहीं जान सके ?

कार्तिकेय मुझे लज्जित न करें देवि ! मुझे यह आशा ही नहीं थी कि वृत्रासुर इस समय हम पर आक्रमण करेगा। वह स्वयं अपने को हमारा मित्र कहता रहा और विश्व में अपने को निरपराध घोषित कर हमपर आक्रमण कर बैठा। वह तो स्वयं अपने भाई की हत्या का दोष हम पर लगा रहा है।

इन्द्र सेनापति ! अपने अपराधों को छिपाने के लिए एक अत्याचारी सदैव अपना अपराध दूसरों पर लगा कर उसका प्रचार करता है। पर हमें इसकी चिंता नहीं है। हमें तो चिन्ता इस बात की है कि हमारी योजना ऐसी होनी चाहिए कि हम वृत्रासुर का भरपूर सामना कर सकें।

शची स्वामी ! आज से आप अपना वैभव और विलास सब के लिए छोड़ दें और प्रत्येक क्षण युद्ध ही को अपने बाहुबल का विषय बनावें। क्या आज महर्षि के तपोवन में आप ऐसी प्रतिज्ञा करेंगे ?

इन्द्र तथास्तु देवि ! मैं अपने समस्त ऐश्वर्य को देवताओं की रक्षा में प्रस्तुत करता हूँ। आज लताओं के फूलने की ऋतु नहीं विद्युल्लताओं के चमकने की ऋतु है ! किन्तु इस समय महर्षि के आश्रम में हमें शस्त्र की सामग्री मिलने की आवश्यकता है जिसके लिए हम यहाँ आये हैं।

शची शस्त्र की सामग्री मिलने में तो कोई शंका नहीं होनी चाहिए।

इन्द्र महर्षि से वह प्रस्ताव तुम्हें करना है देवि !

शची मुझे ? कैसा प्रस्ताव ?

इन्द्र वह प्रस्ताव बहुत भयानक है।

शची भयानक ? ऐसा भयानक प्रस्ताव मैं कैसे कर सकूँगा ?

इन्द्र मुझमें साहस नहीं है। सम्भवतः कुमार कार्तिकेय में भी नहीं।

शची वह प्रस्ताव कौन-सा है ?

इन्द्र उस प्रस्ताव का आदेश स्वयं भगवान् विष्णु ने किया है। वह यह है कि वृत्रासुर का विनाश केवल एक शस्त्र से हो सकता है। ब्रह्मविद्या के कारण महर्षि दधीच जीवन्मुक्त हो गये हैं। यदि महर्षि समाधि में लीन होकर अपना शरीर छोड़ दें तो उनकी तेजोमय अस्थियों से एक सुदृढ़ वज्र बनेगा। विश्वकर्मा ही वह वज्र बनावेंगे और उसी से वृत्रासुर का सिर काटना सम्भव होगा। महर्षि दधीच से अस्थिदान पाने का प्रस्ताव तुम्हीं को करना है।

शची यह तो बहुत भयानक प्रस्ताव है स्वामी !

कार्तिकेय मानव महान है देवि ! वह जीवन्मुक्त है। शरीर छोड़ने में उसे क्या कष्ट होगा ! फिर सत्य और न्याय की रक्षा के लिए मानव का इतिहास देव-सृष्टि पर आज भी अंकित है। महर्षि दधीच का अस्थिदान मानव के इतिहास में ही नहीं देवताओं के इतिहास में भी अमर होगा !

(नेपथ्य में शंखनाद)

इन्द्र महर्षि दधीच इन्द्रियों की परिधि में आ गए।

शची अब महर्षि के दर्शन शीघ्र ही होंगे।

(नेपथ्य सस्वर श्लोक पाठ)

निष्कलं निष्क्रियं शान्तं निरवद्यं निरंजनम्।
अमृतस्य परं सेतुं दग्धेन्धनमिवानलम्॥

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः
सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।

धर्मोऽयं । साय भूताधिपास
सा ती घता धयन्तो निगरान्य ।

(विभास का प्रवेश)

विभास महर्षि बाहर आ रहे हैं ।

(पादुकाओं का शब्द । महर्षि दधीच बाहर आते हैं ।)

समवेत स्वर से सब महर्षि की जय हो ! जय हो ! जय हो !

महर्षि (गम्भीर स्वर में जैसे स्वर कन्दराओं में गूंज रहा है ।) स्वस्ति ! सुरपति इन्द्र महाभागा शची कुमार कार्तिकेय शिल्पी विश्वकर्मा और देवदूत ! पंच प्राणों की भाँति मेरे तपोवन में निवास करो !

इन्द्र तुम प्राण हो !
शची ! तुम मन हो !
कार्तिकेय ! तुम वाक हो !
विश्वकर्मा ! तुम चक्षु हो !
देवदूत ! तुम श्रोत्र हो !

प्राणों ने समस्त इन्द्रियों में प्रवेश किया तो समस्त इन्द्रियाँ प्राण हैं । पंच प्राण ! मेरे तपोवन में निवास करो !

इन्द्र महात्मन् ! हम यहाँ निवास कैसे कर सकेंगे ! हम पर महान संकट है !

शची हमारी स्वर्णभूमि पर शत्रु ने आक्रमण किया है महात्मन् ।

कार्तिकेय देवताओं की सेना बन्दी बन गयी है ।

विश्वकर्मा हमारे भवन हमारे शिल्प नष्ट हो गये हैं महर्षि ! महान संकट का काल है महात्मन् !

महर्षि संकट का काल ! देवताओ ! ॐ कार तुम्हारा कवच है ! तुमने

ऋक यजु और साम में प्रवेश किया उनका आश्रय लिया।
गायत्री आदि अनेक छन्दों के मन्त्रों का—छन्दस का कवच
पहना। फिर भी सकट ? मन्त्रों की ओट में भी मृत्यु ने तुम्हें
देखा तब तुमने ॐ कार में प्रवश किया। ॐ कार का कवच
पहना फिर भी सकट ?

इन्द्र महात्मन्! ॐ कार से यद्यपि हम अमर हो गय हैं फिर भी
वृत्रासुर बहुत भयानक ह। वह हमें क्षत विक्षत कर रहा ह।
हमारी रक्षा कीजिए!

महर्षि मानव को देवताओं की रक्षा करना ह ?

शची मानव महान ह महर्षि! उसके रक्त में शक्ति ह उसकी
अस्थियों में शक्ति ह हमारे पास रक्त नहीं ह अस्थि नहीं ह।
हमारे दिव्य शरीर के पास कवल ज्योति ह। ज्योति धूमिल
हो गयी ह महात्मन्!

महर्षि देवि! वह ज्योति ही कसी जो धूमिल हो ? धूमिल तो परि
स्थितियाँ हैं। सूर्य-चन्द्र की ज्योति मलिन नहीं ह—मेघों की
परिस्थिति मलिन ह जिससे ज्योति का अवरोध होता ह। यह
भ्रम ह देवि! मेघों की परिस्थिति स्थायी नहीं ह इसलिए
सकट स्थायी नहीं है।

इन्द्र महात्मन्! हमारी ज्योति जो क्षत विक्षत हो गयी ह उससे
जीवन का प्रवाह अवरुद्ध हो गया ह और यदि ज्योति का
वर्तुल पूरा नहीं होता। तो अन्धकार हो जाता ह। आज हमार
समक्ष घना अन्धकार ह महर्षि!

महर्षि तो देवपति! अनाहत नाद में लीन हो जाओ! जिस प्रकार
पुष्प रस का पान करता हुआ भ्रमर पुष्प की गन्ध नहीं
चाहता उसी प्रकार नाद में लीन रहने वाला दिव्य शरीर
सुख-दुख की अनुभूति नहीं करता। विपम के उद्यान में

विचरने वाला मन एक मतवाला हाथी है। उस वश में करने के लिए यह नाश ही तीक्ष्ण अंकुश है। मन के मृग को बींधने में यह नाश ही सुन्दर जाल है। मन को तरंग रोकने के लिए यह नाश ही तट है।

विश्वकर्मा महर्षि! शत्रु का वज्रनाश हमारी समस्त शक्तियों को चूर चूर कर रहा है।

महर्षि देवताओ! तुमने अपना आत्म-बल खो दिया है आत्म विश्वास समाप्त कर दिया है। तुम्हें शत्रु से कोई कष्ट नहीं होना चाहिए जिस प्रकार सज्जनों पर दुर्जनों के दुर्वाक्यों का कोई प्रभाव नहीं होता।

कार्तिकेय आपका कथन सत्य है महर्षि! किन्तु इस समय दुर्वाक्यों के साथ भयानक आक्रमण हो रहे हैं और युद्ध की अग्नि चारों ओर से दावाग्नि की तरह जल उठी है। शैल शिखर चूर-चूर हो रहे हैं। भूमि कांप रही है और देवताओं के साथ गंधर्व और किन्नर भी क्षत विक्षत हो रहे हैं।

महर्षि जिस प्रकार स्वर्ण आदि धातुओं का दोष अग्नि से तपाने पर भस्म होता है उसी प्रकार कभी-कभी शान्ति में भी युद्ध की आवश्यकता होती है।

कार्तिकेय महात्मन! युद्ध के लिए शस्त्रों की आवश्यकता होती है। हमारे सब शस्त्र नष्ट हो गये हैं। हमें नये शस्त्रों की आवश्यकता है।

महर्षि सबसे बड़ा शस्त्र पुरुषार्थ है तप है सेनापति! साहस और आत्मविश्वास है। उसे अर्जित करो! जब तक साहस और आत्मविश्वास नहीं होगा तब तक वज्र से बड़ा शस्त्र सूखे घास के तिनके की भाँति है। तुम्हारे भीतर शक्ति का जो अक्षय भण्डार है, उसे खोल दो। तुम्हारे भीतर एक ऐसी शक्ति विद्यमान है कि तुम उसकी सहायता से जो चाहो वही कर

सकते हो।

इन्द्र यह सत्य है किन्तु आत्मविश्वास के साथ शस्त्र भी चाहिए।

महर्षि तो शस्त्र का निर्माण करो।

विश्वकर्मा हमें शस्त्र निर्माण की सामग्री चाहिए भगवन।

महर्षि विश्वकर्मा! तुमने विष्णु के सुदर्शन चक्र का निर्माण किया शिव के त्रिशूल का निर्माण किया सेनापति कार्तिकेय के बाण का निर्माण किया। क्या सूर्य के अतिरिक्त अन्य नक्षत्र नहीं हैं जिनसे तुम सामग्री संग्रह करो?

शची अन्य नक्षत्र उदय और अस्त होते हैं। एक मात्र ध्रुव नक्षत्र है किन्तु वह उत्तर दिग्वधू का सौभाग्य बिन्दु है। उसे स्पर्श नहीं किया जा सकता।

महर्षि इस दिशा में भगवान विष्णु का एक संकेत है। (अट्टहास करते हुए) अ ह ह ह ह! वह संकेत मैं तुम्हारे मुख से सुनना चाहता हूं। देवि! (पुनः हंसी) नक्षत्र जगत की सामग्री समाप्त हो गयी। अब मानव-जगत की सामग्री के लिए देवताओं का समूह एक मानव के तपोवन में है (अट्टहास)

शची कहने का साहस नहीं होता प्रभु!

महर्षि जब एक व्यक्ति के समक्ष साहस नहीं है तो शत्रुओं के समूह में समक्ष साहस कैसे होगा?

शची साहस कर कहती हूँ महर्षि! वृत्रासुर का मस्तक काटने के लिए एक वज्र की आवश्यकता होगी।

महर्षि एक वज्र की आवश्यकता होगी?

शची उस वज्र के लिए जो सामग्री चाहिए वह न तो देव-जगत् में है और न नक्षत्र-जगत में।

महर्षि वह सामग्री मानव जगत् में है!

महर्षि कुमार कार्तिकेय! आओ अब तुम्हारे शत्रु शिखर चूर-चूर नहीं होंगे तुम्हारी भूमि कम्पित नहीं होगी। तुम्हारे सैनिक कम्पित नहीं होंगे।

कार्तिकेय मैं कृतार्थ हूँ महात्मन!

महर्षि सुरपति इन्द्र! मैं कल ब्राह्म मुहूर्त में योगाग्नि में इन्द्रियों को नष्ट करूँगा। अपने प्राणों का विसर्जन करूँगा। अश्विनी कुमार प्रभास!

प्रभास आज्ञा प्रभु!

महर्षि तुम मेरे तपोवन में पशु पक्षियों और वनस्पति जगत की भाषा सीख चुके अब मेरी अस्थियों से उत्पन्न होनेवाली शक्तियों की भाषा सीखो।

प्रभास जैसी आज्ञा प्रभु!

महर्षि विभास!

विभास आज्ञा प्रभु!

महर्षि उर्वशी! मेरे अनाहत नाद पर नृत्य करना चाहती थी। उसकी अभिलाषा अपूर्ण रही। उससे मेरा सन्देश कहना कि वह देव सैनिकों के श्वास प्रश्वास पर नृत्य कर उनके हृदय में युद्ध करने का उत्साह उत्पन्न करे।

विभास जैसी आज्ञा प्रभु!

महर्षि जो सैनिक क्षत विक्षत हों वे मेरे तपोवन में विश्राम करें। मेरे तपोवन में उनकी शुश्रूषा हो।

शची आप कितने महान हैं प्रभु!

महर्षि देवि! तुम सुरपति इन्द्र की शक्ति हो! सुरपति अशान्त न हों ध्यान रखना।

शची जैसी आज्ञा प्रभु!

महर्षि देवपति इन्द्र! विश्वकर्मा मेरी अस्थियों से वज्र का निर्माण

करेंगे। तुम उस वज्र से शत्रु का सहार करो!

विश्वकर्मा मेरा निर्माण-कार्य शीघ्र प्रारम्भ होगा!

इन्द्र महर्षि की जय हो!

महर्षि विश्व-कल्याण में मानव के बलिदान की यह कथा सदव सत्य रहेगी। तथास्तु!

(उच्च नाद से नाद का नाद)

[अन्त्य सगीत]



वैज्ञानिक

१ प्रगति के चरण
२ च द्रलोक

प्रगति के चरण

[एक प्रतीक रूपक]

पात्र

आकाश
कक्षा
दैत्य (एटम बम का विस्फोट)
स्पूतनीक
मानव

समय—बीसवीं शताब्दी का सातवाँ दशाब्द। रात्रि के बारह बजे]

आकाश का एक भाग स्थिर होकर तारिका खण्ड पर बैठा है और कक्षा चचलता से नृत्य कर रही है। कुछ देर बाद जब कक्षा का नृत्य मन्द होकर फलती हुई लहर का रूप लेता है और एक ओर बढ़ता है तो आकाश उस ओर देखता हुआ कक्षा को सम्बोधित करता है।

आकाश उस ओर बार-बार क्या देख रही हो कक्षा ?

(कक्षा तन्मय होकर नृत्य के आकार को बढ़ते हुए एक ओर आकृष्ट हुई चली जाती है।)

आकाश (कुछ और अधिक बल देकर जिज्ञासा के स्वरों में) क्या देख रही हो कक्षा ?

कक्षा (सहसा उलट कर आकाश की ओर देख कर) निर्दय आकाश ! मुझे मत छेड़ो ! (फिर नृत्य में अग्रसर होती है किन्तु जैसे ही नृत्य की भंगिमा लेती है वैसे ही मानो अङ्ग शिथिल हो जाते हैं) तुमने मेरा सारा ध्यान सारा स्वप्न—तोड़ दिया ! तुम क्या जानो आकर्षण किसे कहते हैं ? शून्य आकाश ! जिसमें कुछ भी नहीं है।

आकाश मुझ में कुछ नहीं है, इसीलिये तो सब कुछ है। भूलो मत कक्षा ! मैं तुम्हारी तरह भावपूर्ण रूप तो नहीं रखता परन्तु दूसरों को रूप रखने में सहायता देता हूँ। बुरा मत मानो, मैं तुम्हारे रूप की रक्षा के लिये ही तो पूछता हूँ कि कहाँ खिंची जा रही हो ?

कक्षा जैसे जानते ही नहीं ! देखते नहीं वे शक्तिशाली मङ्गल

कितनी दूर चल गये ह ! (करुण स्वर म) पहिले मुझे अपनी कक्षा की रक्षा बनाया फिर मुझे छोड कर दूसरी ओर चल जा रहे ह। उनकी गति मण्डलाकार की अपेक्षा सर्पिल हो गई ह।

आकाश (गम्भीर होकर) तो कक्षा कब नक्षत्र के साथ चलती ह। नक्षत्र तो अपनी गति से दिशा म बढ़ता ह। जिस दिशा को वह पीछे छोड देता ह वही उसकी कक्षा बन कर रह जाती ह। कक्षा पडी रहती ह नक्षत्र आगे बढ़ जाता ह। उसके वग में गुरुत्वाकर्षण समाप्त हो जाता ह।

कक्षा तो क्या म सदव एसी ही पडी रहूगी ?

आकाश नही तुम्हारे घूमने को भी गति ह लकिन बहुत धीरे ! यह तो शताब्दियो की गति ह कक्षा ! लकिन इसी हल्की गति में तुम कितनी सुन्दर बन गई हो। दिक और काल एक दूसरे में लय हो गए हैं। उन्होन अपनी निरपेक्ष पृथकता खो दी ह तुम्हारे इस चचल नृत्य से गति की सुन्दरता बिगड जायगी।

कक्षा अपने नक्षत्र के बिना मरी सुन्दरता का कोई महत्व नही ह। दिक और काल की निरन्तरता ही तो मरी वक्र गति ह। यह वक्रता ही वास्तविक ह। इसके बिना मरा कोई महत्व नही।

आकाश महत्व नही ह ? कक्षा ! यदि महत्व न होता तो विश्व भर के दूर दर्शक तुम्हें और हमें इस तरह देखते ? कितने हजार वर्षों के बाद मङ्गल नक्षत्र खिच कर पृथ्वी के इतने समीप आया। उसी के साथ खिचकर मैं आया और तुम भी इस विशेष दिशा में ! समय शून्य और स्थिति के कितने सम्बन्ध टूट-टूट कर बन। विश्व मडल की कितनी शक्तियाँ किस आश्चर्यजनक गति से काम करती रहीं। अब दिक और

काल की निरपेक्षता नहीं रहा। कितने गूढ़ और विचित्र नियम हमें और तुम्हें बना कर इस पृथ्वी के पास छोड़ गये!

कक्षा पृथ्वी के पास?

आकाश हाँ, पृथ्वी के पास! यह जो हमारे समीप घूम रही है। बहुत सुन्दर मालूम होती है।

कक्षा इस विश्व में तो न जाने कितने पृथ्वी पिण्ड होंगे। जो एक से एक सुन्दर हो सकते हैं।

आकाश हाँ, सुन्दर हो सकते हैं पर बहुतों में तो जीवन ही नहीं है। बिलकुल मृत पिण्ड हैं।

कक्षा मैं कुछ नहीं समझती।

आकाश नहीं समझती? क्या? मंगल की गति में भूली हो? उसे इस तरह देखो कक्षा! कि अभी तक हम लोग किन किन नक्षत्रों से खिंच कर कहाँ-कहाँ नहीं गये? गुरुत्वाकर्षण ने हमें कहाँ कहाँ नहीं खींचा? किन्तु इस बार नक्षत्र मंगल की ही यह कृपा थी कि उसने अपनी गति से हमें और तुम्हें पृथ्वी के इतने समीप ला दिया। मंगल नक्षत्र की अपेक्षा उसके वरदान की अधिक सराहना होनी चाहिये। यह पृथ्वी देखो न! अन्य नक्षत्रों की अपेक्षा यह कितनी अच्छी है!

कक्षा तुम प्रत्येक नक्षत्र के समीप आकर ऐसा ही तो कहते थे!

आकाश किन्तु इस पृथ्वी को देखकर मैं अन्य सभी नक्षत्र भूला जा रहा हूँ। देखा न! यह पृथ्वी कितना मधुर गीत गाती है। तुम जो इतना अच्छा नृत्य कर रही थीं वह पृथ्वी के समीप रहने के कारण ही तो है।

कक्षा पृथ्वी के समीप रहने के ही कारण? (सोचते हुए आगे बढ़ कर) देखूँ यह पृथ्वी!

आकाश देखो न! कुछ अधिक आगे बढ़ कर देखो न! (आगे बढ़ कर

है। उसमें रहने वाले न जाने कितने जीव-जन्तु मर गए। मैं भी तो यहीं से आ रहा हूँ। मेरी भूख पृथ्वी पर नहीं बुझी तो अब यहाँ आया हूँ?

आकाश लेकिन तुम यहाँ दैत्य नहीं रहोगे। यहाँ इतने अधिक घन हैं कि तुम उनमें आग नहीं लगा सकते। एक हिन्दी के कवि ने कहा है कि क्या खटाई की कुछ बूंदों से दूध का सागर फट सकता है?

दैत्य मैं तो महानाश की आग लिये हूँ। जो सामने आएगा उसे ही जलाऊँगा।

आकाश यह आग जल्दी ही बुझा दी जाएगी। देखो तुम स्वयं शान्त होने लग हो। जाओ यहाँ से और आकाश गङ्गा में स्नान करो (पूर्व की ओर देखकर) अरे यह कौन आ रहा है। यह तो कोई नया नक्षत्र ज्ञात होता है! बड़ी तेज़ी से आ रहा है!

दैत्य उससे तो मुझको भी कुछ डर लग रहा है! अच्छा तो मैं जा रहा हूँ (शीघ्रता से प्रस्थान)

आकाश कक्षा अभी तक मूर्छित पड़ी है! (पास जाकर) उठो कक्षा दैत्य का तेज समाप्त हो गया!

कक्षा (धीरे धीरे उठते हुए) मैं कहाँ हूँ!

आकाश मेरे समीप! आकाश के हाथों में! वह अणु-बम का दैत्य चला गया।

कक्षा (सिहरते हुए) आह! वह दैत्य बड़ा भयानक था। मैं तो उसके शरीर से निकलने वाली ज्वालाओं से ही झुलसी जा रही थी।

आकाश वह दैत्य कुछ समय बाद देवता बन जायेगा।

(दूर से बीच बीच की ध्वनि सुनाई देती है)

कक्षा (ध्यान से सुनते हुए) अब यह कौन आ रहा है?

आकाश कोई नक्षत्र होगा। इस स्थान पर नक्षत्रों की क्या कमी ? मैं देखता हूँ कोई बड़ी शक्ति है अणुबम के दैत्य का भी उससे डर लगता है। इसीलिए वह यहाँ से भाग गया !

कक्षा कोई बड़ा देवता होगा। आह ! बड़ा सुन्दर है। अब तो बिल्कुल पास आ गया।

आकाश हाँ, बहुत सुंदर है।

(स्पूतनीक आता है)

आकाश स्वागत आकाश के यात्री।

स्पूतनीक धन्यवाद !

कक्षा मैं भी आप का स्वागत करती हूँ।

स्पूतनीक आपको भी धन्यवाद।

आकाश हम लोग आपका परिचय जानना चाहते हैं !

स्पूतनीक मेरा परिचय ? (मुस्कुरा कर) मैं अपना परिचय किस प्रकार दूँ ! प्रयोग का परिचय क्या ?

आकाश क्या ! अभी अणुबम का दैत्य आया था, उसने भी अपने प्रयोग की बात कही थी। वह तो बड़ा भयानक था और अपना परिचय भी बड़ी भयानकता से दे रहा था।

कक्षा मुझे तो उससे बड़ा भय लग रहा था।

स्पूतनीक मेरा विश्वास है कि वह अणु का दैत्य भी कभी देवता बनेगा।

कक्षा अभी आकाश भी यही बात कह रहे थे। आप भी यही बात कहते हैं। आप स्वयं देवता की भाँति हैं तो दैत्य को भी देवता मानते हैं। आप अपना परिचय देने का कष्ट करें।

स्पूतनीक मेरा परिचय ही क्या ? मैं एक स्पूतनीक हूँ। सोवियत संघ से आया हूँ। मैं विज्ञान में शान्ति का अग्रदूत हूँ।

आकाश शान्ति के अग्रदूत ! आपका स्वागत है। आप में बड़ा साहस

हूँ, जिसमें न जाने कितने शक्ति और सौन्य से रूप खिलते रहते हैं।

आकाश यह शक्ति और सौन्य का रूप तुम्हें अच्छा लगा ?

कक्षा शक्तिशाली और साहसी किसे अच्छे नहीं लगते आकाश ? परन्तु ये किसी एक स्थान पर स्थिर नहीं रहते। वे कदाचित् कठिनाइयों को खोजते रहते हैं और कठिनाइयाँ उसे पाने को व्याकुल रहती हैं।

(विस्फोट। कक्षा चौंककर) वह देखो—वहाँ से अग्नि की लपट उठ रही है ?

आकाश (देख कर भौंहें सिकोड़ कर) पृथ्वी से उठी हुई ज्ञात होती है। कहीं फिर किसी दैत्य की क्रोधाग्नि तो नहीं है ?

कक्षा मुझे डर लग रहा है। नहीं वसी अग्नि नहीं है। इस अग्नि से तो एक यान चल रहा है! ओह कितने वेग से चल रहा है! सारे गुरुत्वाकर्षण और अन्तरिक्ष की किरणों को चुनौती देता हुआ यह उल्का पिण्ड तो समीप ही आ गया।

आकाश उसके भीतर कोई व्यक्ति ज्ञात होता है।

(मानव का प्रवेश)

आकाश कितना निर्भीक ज्ञात होता है। (आगे बढ़ कर) तुम कौन हो ज्योति किरण ?

मानव मैं मानव हूँ। पृथ्वी से आ रहा हूँ (रुक कर) क्या मुझे तुमसे भी युद्ध करना होगा ? अभी तक किए गए युद्धों की क्या समाप्ति नहीं हुई ? युद्ध युद्ध

कक्षा न न युद्ध युद्ध नहीं। मैं मैं तो शक्ति और सौन्दर्य की उपासिका हूँ। अभी यहाँ एक दैत्य आया था वह बिना युद्ध के ही संहार करना चाहता था। ये स्थिर रहने वाले आकाश हैं और मैं मैं तो परिक्रमा करने वाली हूँ।

मानव म किसी को भी अपनी परिक्रमा करने का अधिकार नहीं देता। किसी भी परिधि का केंद्र बन जाना स्थिरता ह, और मैं स्थिरता में विश्वास नहीं करता।

कक्षा न न तुम स्थिर न रहो मानव ! तुम गतिशील बने रहो। म तुम्हारी गति का ही केंद्र मान कर उतने ही वग से तुम्हारी परिक्रमा करूँगी।

मानव तुम बद्धिमती ज्ञात होती हो ! तुम्हारा परिचय ?

कक्षा (लज्जित होकर) मेरा मेरा परिचय क्या ? म कक्षा हूँ। साहसी व्यक्तिया के चरणा की रेखा हूँ ! अभी एक स्पुतनीक आया था !

मानव मन ही उसे वायुमण्डल का पता लन के लिए भेजा था। वह तो अब अपनी परिक्रमा समाप्त कर रहा होगा !

आकाश तुम कहाँ जा रह हो मानव ?

मानव चंद्रलोक ! अपनी ही पृथ्वी के उस भाग में जो सृष्टि के प्रारम्भ में ही हमसे बिछुड गया था। हम उससे पुन अपना सम्बन्ध जोडेंग।

आकाश क्या पृथ्वी तुम्हारे निवास के लिय ययष्ट नहीं ?

मानव छोटी से छोटी वस्तु ययेष्ट हो सकती ह और बडी से बडी वस्त भी ययष्ट नहीं ! यह तो प्रवृत्ति की दिशा ह। क्या आप भी परिस्थितिया के अनुसार घटत और बढ़त नहीं ह ?

आकाश परिस्थितिया को रूप देन के लिये मुझे अनेक रूप धारण करन पडत हैं।

मानव तो फिर मानव भी तुम्हारी प्रकृति का अधिकारी ह। एक बात पूछता हूँ !

कक्षा मुझसे भी तो कुछ पूछो मानव !

मानव पनत समय तुमसे भी पूछूगा, कक्षा रानी ! लेकिन यह प्रश्न

प्रावाश के लिए है !

आकाश मन सृष्टि के प्रारम्भ से ही प्रत्यक प्रश्न का उत्तर दिया है।

मानव इतना गम्भीर प्रश्न नहीं ह। म तो यही पूछना चाहता हूँ कि यदि कोई वस्तु या व्यक्ति अपन घर में ही सन्तुष्ट होकर बठ जाए और उनके समीप रहन वाल जो अनक पडोसी हों उनसे बात भी न करे तो एसे व्यक्ति को तुम क्या कहोगे ?

आकाश जड़ !

मानव तो हमारी पथ्वी के पडोस में जो अनक नक्षत्र ह जो हमें प्रतिरात्रि को निमन्त्रण देकर बुलात ह क्या उनके समीप जाना कोई अभद्रता ह ?

आकाश नहीं !

मानव तो हमारे सबसे समीप चन्द्र ह। आज हम वहाँ जा रहे हैं। कल बुध मगल वहस्पति और शुक्र का निमन्त्रण भी स्वीकार करेंग।

आकाश म तुमसे प्रसन्न हू मानव ! तुम्हारे साहस की कथा अमर रहगी !

कक्षा म भी तुमसे प्रसन्न हूँ मानव ! तुम महान हो !!

मानव अब तुमसे पूछता हू कक्षा रानी ! मानव की इच्छा का क्या महत्व यदि वह काय में परिणत न हो ?

कक्षा इच्छा तो वही सायक ह जिसकी सेवा में काय सेवक की भाँति पहुच जाता ह।

मानव तो काय को म सेवक बनाना चाहता हूँ।

कक्षा यदि कोई सेविका बनना चाह तो ?

मानव (मुस्कुराकर) इसका निणय तो सेविका पर ही ह। मरे पास इतना समय नहीं ह ! म अब आग बढूँगा ! दोनों को नमस्कार करता हू ! (प्रस्थान)

आकाश तुम्हारी यात्रा मङ्गलमय हो मानव !

कक्षा मानव ! तुम्हारी जय हो ! आज से म तुम्हारी गति की ही कक्षा बनूंगी ! तुम्हारे चरणों की रेखा में मैं रंग भरूँगी !

आकाश ! तुम मानव की गति के लिए और भी विस्तृत बनो ! म उसकी प्रगति के चरणों में माला बन कर समर्पित हो जाऊँगी ! चलो !

[दोनों का प्रस्थान]



चन्द्रलोक

[विज्ञान और मनोविज्ञान पर आधारित रूपक]

पात्र

डा० शेखर	एक महान वैज्ञानिक जिसने गुप्त रूप से अनुसंधान करते हुए चन्द्रलोक तक पहुँचने का सफल प्रयोग किया है।
कुमारी मंजुल	डा० शेखर की पुत्री।
डा० दिलीप	चिकित्सा शास्त्र में निपुण डाक्टर।
चन्द्रपुरुष	चन्द्रलोक का निवासी मानव।
चन्द्रनारी	चन्द्रलोक की मानवी।

सन १९५९ ई० ।
चन्द्रलोक में सूर्योदय का प्रथम ग्रंश ।

चन्द्र लोक के भू-गर्भ का एक कक्ष । ऊपर लगे हुये एक यंत्र से नीले प्रकाश की एक छोटी सी झील बन गई है जिसमें प्रकाश जल की भांति प्रवाहित हो रहा है । कक्ष में वह एक नीले बादल की भांति झूल रहा है जिससे चारों ओर स्वच्छ और निर्मल ज्योति फैल रही है । कक्ष के कोने में स्थित दूसरे यंत्र से जमी हुई पतली हवा तरल होकर प्रवाहित हो रही है । इस्पात और प्लैटिनम से मिली हुई धातु से बढ़ने के अनेक तारिकाकृत स्थान बन हुए हैं । यद्यपि यह कक्ष चन्द्र के धरातल से तीन हजार फीट से अधिक गहराई में है परन्तु सामने ही पतले रजतपट पर विद्युत तरंगों से आकाश का चित्र खिंचा हुआ है जिसमें नक्षत्रों की चमक सहस्त्र गुनी होकर जगमगा रही है । दूसरे रजत-पट पर समस्त चन्द्रलोक का दृश्य है जिसमें स्पंज के आकार के ऊँचे ऊँचे पहाड़ और बड़ी-बड़ी गहरी खाइयां हैं । वहाँ जमी हुई सूक्ष्म वायु की लहरें स्थिर होकर रह गई हैं । गणित और ज्यामिति के सहारे सारा कक्ष ऐसे चुम्बकीय क्षेत्र में सवांरा गया है कि कक्ष के मध्य में रक्खे हुये यंत्र का कोई एक बटन दबाते ही कक्ष का सम्बन्ध चन्द्र के ऊपरी धरातल से हो जाता है और इच्छित नक्षत्र की किरण कक्ष में प्रवेश कर जाती हैं । वातावरण में एक सी लगातार हलकी ध्वनि हो रही है जैसे आकाशवाणी का प्रसारण समाप्त होने पर खुले हुए रेडियो-सेट से शून्य वायु की ध्वनि निकलती रहती

है। बीच-बीच में दूर से किसी गत के विस्फोट की ध्वनि निकलती है अथवा किसी भटके हुए उल्का का घर्घर नाद सुनाई पड़ता है जो धीरे धीरे मन्द होकर शून्य में विलीन हो जाता है।

तारिका हृत मंच पर बैठे हुए डा० शेखर अपने हाथ में एक यंत्र लेकर देख रहे हैं। मंजुल आकाश के चित्रपट को देख रही है। प्रसन्नतापूर्ण शब्दों में मंजुल के कंठ से उल्लास की वाणी निकल रही है।

मंजुल (एक पूरी हंसी हंस लेने के बाद) चन्द्रलोक! इस चन्द्रलोक को छोड़कर अब वहीं जाने को जी नहीं चाहता पिता जी! देखिए इस चित्रपट को विद्युत तरंगों से सारा आकाश प्रतिबिम्बित हो रहा है। आकाश में नक्षत्र मंडल ऐसे जगमगा रहे हैं जैसे अपने पृथ्वी के गुलाब के फूल पर ओस के बिन्दु चमकते रहते हैं और इस दूसरे चित्रपट पर चन्द्रलोक कैसा दीख रहा है! ओह बिलकुल स्पंज के आकार का। बड़े-बड़े ऊंचे पहाड़ और गहरी खाइयाँ। ऐसा ज्ञात होता है जैसे किसी बुढ़िया का झुर्रीदार चेहरा हो। (हंस कर) झुर्रीदार चेहरा! देखिए न।

डा० शेखर (ध्यानमग्न मुद्रा में) हाँ!

मंजुल और पिता जी! डा० दिलीप कहते थे कि गणित और ज्यामिति के सहारे सारा कक्ष ऐसे चुम्बकीय क्षेत्र में सवारा गया है कि कक्ष के मध्य में इस यंत्र की कोई भी बटन दबा दीजिये मनचाहे नक्षत्र की किरण इस कक्ष में आ जाती है। सूर्योदय के समय मैंने पृथ्वी की किरण की बटन दबाई थी। सारी पृथ्वी चित्रपट पर खिंच गई बिलकुल नारंगी जैसी। उसमें मैंने अपना प्यारा भारतवर्ष देखा था। यहीं से मैंने अपना

प्यारा भारत देखा था।

डा० शेखर (पूर्ववत गम्भीरता से) हूँ।

मंजुल अब यही देखिए पिता जी ! कमरे की छत से प्रकाश पानी की तरह बह रहा है जैसे कोई सरोवर है। बिल्कुल निर्मल नीला प्रकाश ! बहुत विचित्र बातें हैं। हवा को ही लीजिये। अपनी पृथ्वी पर तो हम हवा में सांस लेते थे। यहाँ जमी हुई हवा खाते हैं जैसे आइसक्रीम हो ! (हंसती है) हवा की आइस क्रीम। (फिर हंसती है) और अगर चलने के लिए पैर उठाए तो उछल जाते हैं बीस गज, बिल्कुल मेंढक की तरह। (कुछ गम्भीरता से) पिता जी। अगर आपकी तरह मैं भी अनुसंधान करूँ तो कहूँगी कि मेंढक, चन्द्रलोक का ही जीव होगा। उछलते उछलते चन्द्रलोक के किनारे पहुँचा होगा और फिर जो उछला होगा तो ठीक हमारी पृथ्वी के बीचोबीच धम से गिरा होगा। तब से बेचारा उछल ही रहा है। वहीं चन्द्रलोक मिलता ही नहीं उसे।

डा० शेखर (गम्भीरता से) हाँ !

मंजुल अरे आप तो कुछ बोल भी नहीं रहे हैं पिता जी ! कौन-सा यन्त्र देख रहे हैं ?

डा० शेखर अपने राकेट-यान का ही यन्त्र है जिसकी हमें लौटते समय आवश्यकता होगी।

मंजुल क्षमा कीजिये पिता जी मैंने आपके गंभीर चिन्तन में बाधा डाली। मैं बहुत दुष्ट हूँ।

डा० शेखर नहीं मंजुल ! अपनी पृथ्वी पर पुनः लौटने की योजना बना रहा हूँ। कहीं असफल न हो जाऊं, इसलिये यह नवीन यन्त्र बना रहा हूँ। इसके लिये बहुत सावधानी चाहिये।

मंजुल यह तो ठीक है किन्तु पिता जी ! अभी हमें यहाँ आए दिन ही

रह सकता। न यहाँ हवा है न पानी। ज्वालामुखी पर्वतों के विस्फोटों और सूर्य की असह्य धूप ने इस धरती से चन्द्र का सब कुछ छीन लिया। जैसे यह प्रकृति का दंड हो। असह्य गर्मी और असह्य शीत। दिन में धरातल का तापमान जानती हो कितना होता है? पानी के उबलने के बिन्दु से ६० डिग्री अधिक और शीतमान होता है बर्फ के जमने के बिन्दु से २१० डिग्री नीचे।

मंजुल माफ इतनी गरमी और इतनी ठंड? जैसे दानों में होड़ लगी हो। पर पिता जी आप तो बड़े वैज्ञानिक हैं। कभी मृत्यु का रहस्य खोजते हैं कभी चन्द्रलोक तक पहुँच जाते हैं। इस तीखी गरमी और करारी ठंड को भी ठीक कर दीजिये न?

शेखर इसकी अपेक्षा यही अच्छा है कि भू-गर्भ में निवास किया जाए। चाँद की मिट्टी सड़ कर खोखली हो गई है इसलिये चन्द्र के निवासियों ने भी यहीं रहना ठीक समझा। उन्होंने विज्ञान में जैसी उन्नति की है वैसी हम लोग भी नहीं कर पाए।

मंजुल यह आपने कैसे जाना पिता जी?

शेखर उनके यंत्रों से। अब यही यंत्र लो (पास से एक यंत्र उठाते हैं) जो यहाँ के लोग हमें कल दे गए हैं। देखो इसे। इस यंत्र से विश्व की कोई भी भाषा समझी जा सकती है। जब चन्द्र का कोई निवासी बोलता है तो यह यंत्र बीच में रख दिया जाता है। उस ओर से उसकी भाषा प्रवेश करती है इस ओर से वह हिन्दी बन कर निकलती है। इस ओर से हिन्दी प्रवेश कर उस ओर चन्द्रीय भाषा बनकर निकलती है। ध्वनि संचार के लिए उन्होंने विचित्र प्रकार के ईथर का निर्माण किया है जो इस भू-गर्भ में ही संभव है। धरातल पर नहीं। इसी ईथर और आक्सिजन से इस चन्द्र के भू-गर्भ में हवा

बनती ह। देखो वह यत्र। (सकेत करते हैं) बिना शब्द किए चल रहा ह। इसी हवा में हम और चद्र के निवासी साँस ले रहे हैं।

मजुल सचमुच! बडे आश्चय की बात ह। और यह भी तो देखिए! (ऊपर छत की ओर सकेत करती है) प्रकाश की झील जिससे प्रकाश पानी की तरह बहता ह। पिता जी! ये चद्र के निवासी मुझे बहुत अच्छे लगते ह।

शेखर लाखो वर्षों का इसका इतिहास ह। य हमसे अधिक सभ्य ह। चन्द्रमा हमारे पृथ्वी का ही भाग था जो उससे टूट कर अलग हो गया। यह चद्र हमारी पृथ्वी स छोटा था इसलिए यह ठडा हुआ और वह अनेक सभ्यताओ से गुजरा। उन सभ्यताओ से गुजरने के बाद यह प्रकृति और मानवता के सब रहस्य जान गया। इसने ईर्ष्या घृणा और युद्ध का अन्तिम रूप देख लिया अब तो वह प्रेम और विश्व बधुत्व का उपासक ह। उसका विज्ञान शान्ति और सुख के लिए न जाने कितने आविष्कार कर चुका। मैं समझता हूँ कि एटम बम से अधिक इनके प्रेम में शक्ति ह।

मजुल पिता जी! इन लोगो के सम्बन्ध में एक बात पूछना चाहती हूँ। इन चद्रवासियो के पर छोटे और सिर बडे क्या होते ह?

शेखर प्रकृति ने ही उन्हें यह रूप दिया ह। तुम जानती हो कि यहाँ चन्द्रलोक में गुरुत्वाकर्षण बहुत कम ह। वह हमारी पृथ्वी के के गुरुत्वाकर्षण के छठे भाग से अधिक नहीं ह। इसलिये चलने में उन्हें न तो महनत करनी पडती ह और न अधिक चलने की आवश्यकता ही होती ह। यहाँ एक डग में बीस गज तक उडा जा सकता है।

मंजुल यह तो मं स्वय कह रही थी।

शेखर तो पर से परिश्रम न लेने में इनके पैर छोटे रह गए हैं। सिर इसलिये बड़ा है कि ये लोग बड़े बुद्धिमान और मेधावी हैं। इन्होंने सबको आविष्कार कर डाले हैं। मस्तिष्क से अधिक काम लेने के कारण सिर बड़ा हो गया है। लेकिन देखने में सुन्दर और स्वस्थ हैं।

मंजुल अगर हमलोग कुछ दिन यहाँ रह गए तो इन्हीं की तरह हो जावेंगे। सिर बड़ा और पैर छोटे! छोटे पैर होने से मैं साड़ी कैसे पहिनूंगी?

शेखर तुम भी इन्हीं की भाँति सफेद चमकीली धातुओं से कपड़े लपेट लेना!

मंजुल तो फिर खिलौने की गुड़िया और मुझमें अन्तर क्या रह जायगा? बिलकुल गुड़िया जैसी दिखूंगी।

शेखर तू तो मेरे लिए सदैव एक छोटी सी गुड़िया है।

मंजुल अच्छा पिता जी! एक बात और ध्यान में उलझ गई। यहाँ भू-गर्भ में रहने वाले मानवों में जो हम सतह पर मिले थे इतना अन्तर क्या है?

शेखर मैंने कहा न प्रकृति के प्रभावों से ही शरीर में भेद हो जाता है। जैसे अफरीका में रहने वाले हबशियों का शरीर हमारे शरीर से रूप रंग में कितना भिन्न होता है। इसी तरह चन्द्रलोक के ऊपरी सतह पर रहने वालों का चमड़ा अधिक कठोर और मोटा हो जाता है जिससे वे गर्मी और शीत की अधिकता सहन कर सकें जैसे कछुवे का चमड़ा होता है न वैसा ही।

मंजुल अच्छा यहाँ मानवों के अतिरिक्त और कोई जीवधारी नहीं रहते।

शेखर नहीं।

मंजुल क्यों? हमारे यहाँ तो लाखों प्रकार के जानवर हैं हाथी से

लेकर मच्छर तक ! आदमी से लेकर ऊदबिलाव तक ।

शेखर चन्द्र के धरातल पर पानी और हवा तो है । जंगल भी नहीं है । जले हुये पहाड़ और ज्वालामुखी से बने हुये गड्ढे हैं । मछली, मेढक, बन्दर भालू, कहाँ रहेंगे ? यह तो मानव की बुद्धि है कि वह गर्मी और शीत से अपने को बचाकर भू-गर्भ में चला आया । बड़े-बड़े नगरों का निर्माण किया और अपनी शक्ति से उसने जीवन के लिये सभी आवश्यक वस्तुओं का आविष्कार कर लिया । जीवन के लिए उसने पृथ्वी तल निकाल लिया और पानी के लिये हवा को तरल कर लिया । भोजन पानी के बिना साधारण जीव कहाँ से होंगे !

मंजुल तो प्राकृतिक भोजन होने के कारण यहाँ कोई बीमार तो पड़ता ही न होगा ?

शेखर बिलकुल नहीं । कल एक चन्द्रनिवासी से बातें हुई थीं । वह कहता था कि यहाँ कोई बीमार ही नहीं पड़ता ।

मंजुल इसी यन्त्र से आपने बातें की होंगी ।

शेखर हाँ, और कोई दूसरा साधन ही क्या था ? वही तो यह यन्त्र लाया था । मैंने उससे यहाँ के जीवन के सम्बन्ध में बहुत सी बातें पूछ डालीं । तुम तो दूसरे कक्ष में अठ तारों के प्रतिबिम्ब देख रही थीं ।

मंजुल मैं होती तो मैं भी बहुत सी बातें पूछती ।

शेखर फिर कभी पूछ लेना । हाँ, तो वह कह रहा था कि यहाँ कोई बीमार हो नहीं पड़ता । आकाश के तारों की भाँति सभी स्वास्थ्य से चमकते रहते हैं ।

मंजुल तारा की भाँति चमकते रहते हैं पर कभी-कभी तारे टूटते भी तो हैं ।

शेखर हाँ टूटते हैं ! जब कहीं कोई विस्फोट होता है तो उसकी ध्वनि

में चल कर या किसी भूमि की दरार में दब कर ये लोग मर जाते होंगे। लेकिन कभी बीमार नहीं पड़ते। सब तन्दुरुस्त रहते हैं (रुक कर) डा० फिलीप कहाँ हैं?

मंजुल वे एक चन्द्रवासी के साथ किसी गुफा में चले गये हैं। वे यहाँ भी अपनी दवाइयाँ खोज रहे हैं। भला यहाँ उन्हें कौन सी दवाइयाँ मिलेंगी?

शेखर वे यहाँ की भूमि की परीक्षा कर देखना चाहते हैं कि चन्द्र निवासियों की तन्दुरुस्ती का क्या रहस्य है। मेरी धारणा कुछ और है। यहाँ के निवासी इसलिए तन्दुरुस्त हैं कि उन्हें किसी प्रकार की कोई चिंता नहीं है। यदि मनुष्य चिन्ता के शिकंजे से छूट जाय तो

(सहसा एक यन्त्र से विचित्र प्रकार सीटी की आवाज आती है।)

मंजुल (चौंककर) यह कैसा शब्द है पिता जी!

शेखर (उठकर) ठहरो मैं समझने की चेष्टा करता हूँ। (एक क्षण सीटी की आवाज ध्यान से सुनते हैं। सीटी के बन्द होने पर) यह सोवियत संघ का संदेश है। सुई जिस अक्षांश पर है वहाँ साइबीरिया का अणु केन्द्र है।

मंजुल सोवियत संघ का क्या संदेश है?

शेखर देखो मैं अणु भाष-यन्त्र सामने रखता हूँ। जो भी भाषा होगी उसका रूपान्तर हिन्दी में हो जायगा।

(यन्त्र रखने की आवाज होती है। सीटी फिर एक बार बजती है और थोड़ी देर बाद रुक जाती है। फिर एक भारी स्वर में संदेश सुनाई पड़ता है)

हलो हलो चन्द्रलोक चन्द्रलोक हमारा ल्यूनिक ठीक स्थान पर पहुंचा हलो अब हम आदमी भेजने का

प्रयत्न कर रहे हैं स्पूनिक में हमारा राज्य चिह्न है हलो राज्यचिह्न हँसिया और हथौड़ा स्पूनिक में एक ट्रांसमिटर भी है। वेव लेंग्थ है ००१०४ उसी से चन्द्रलोक से संदेश भेजिये। हलो चन्द्र निवासी संदेश की तरंग भेजिये। तरंग भेजिये! हलो हलो तरंग भेजिये।

(लगातार किसी तार जैसा कम्पन होता रहता है।)

मंजुल यह सोवियत संघ कौन सा संदेश भेजने को कहता है? आप कोई संदेश भेजेंगे?

शेखर संदेश भेजूँ? लेकिन कैसे भेज सकता हूँ? अनेक कठिनाइयाँ हैं। पहली कठिनाई तो यह है कि चन्द्र के धरातल पर सूर्य डूबने और शीत बढ़ने से पहले किसी चन्द्रवासी को भेजा जाय जो सोवियत संघ द्वारा भेजे गये स्पूनिक की खोज करे और उसमें से ट्रांसमिटर निकाले और दूसरी कठिनाई अपने आप को प्रकट करने की है।

मंजुल पिता जी! भावुक तो आप स्वभाव से ही हैं। फिर अपनी इस भावुकता में अपने भारत को ही संदेश भेज दीजिये।

शेखर भेजने का प्रयत्न कर सकता हूँ पर ट्रांसमिटर नहीं है। दुबारा जब आऊँगा तब भेजना अच्छा होगा।

मंजुल और यदि इस बीच सोवियत संघ के लोग आ गए तो यहाँ पहली बार आने का श्रेय उन्हीं को मिलेगा।

शेखर श्रेय कैसे मिलेगा? हमलोग अपनी राष्ट्र ध्वजा यहाँ छोड़ जायेंगे।

मंजुल तब तो रूसी वैज्ञानिक आश्चर्य में पड़ जायेंगे कि भारत ने विज्ञान में चुपचाप कितनी प्रगति कर ली।

शेखर अभी तो हमें पत्र कर संसार को यह संदेश देना है कि चन्द्र-लोक में हम सब अपनी शत्रुता भूल कर एक साथ निवास कर

सकते हैं। पृथ्वी और चन्द्रलोक मुन और शान्ति के दो किनारे हैं। यहाँ भी हम मन्ता निवास के लिए विस्तृत भूमि पा सकते हैं।

मंजुल ठीक है पिता जी। हमारे देश की बढ़ती हुई जनसंख्या से हमारे प्रधान मन्त्री पं० जवाहरलाल जी बहुत चिंतित हैं। उनकी चिन्ताएं कम हो जायगी। भोजन और जनसंख्या का प्रश्न हमारे देश के सामने गंभीर रूप से है। (रुक कर) पिता जी! आपको भूख तो नहीं लगी है।

शेखर नही बेटी! यहाँ तो भूख-प्यास आलस-नींद का अनुभव ही नहीं होता।

(सहसा दूर से विस्फोट की ध्वनि सुनाई देती है।)

मंजुल यह कैसा विस्फोट हुआ पिता जी!

शेखर इस भू गर्भ में चन्द्रवासियों के अनेक प्रयोग चला करते हैं। इन्हीं प्रयोगों से कोई विस्फोट हुआ होगा?

मंजुल इस विस्फोट से हमारा यह कक्ष भी हिल रहा है।

शेखर चिन्ता की बात नहीं। यह कक्ष ऐसी धातु से बना है जो हमारे यहाँ के रबर की भाँति है। यह भक तो सकता है टूट नहीं सकता। कल मैंने इसकी परीक्षा की थी।

मंजुल यहाँ की सभी बातें विचित्र हैं। जड़ और चेतन एक से हैं। धातुएं टूट नहीं सकती मनुष्य भूख प्यास का अनुभव नहीं करते।

शेखर भू-तत्वों को ग्रहण करने से भूख और प्यास की अनुभूति शरीर भूल ही गया है। जीवन बिना थके ऐसे चलता है जैसे अपनी पृथ्वी पर गंगा जी का प्रवाह है जो बिना थके शताब्दियों से एक सा बह रहा है। (रुक कर) तुम्हें भी शायद भूख न लगी होगी।

मंजुल मैं आश्चर्य कर रही हूँ पिता जी ! दो दिनों से मैंने कुछ भी नहीं खाया और शक्ति पहले जैसी ही है। न भूख है, न प्यास !

(सहसा तार के कंपन जैसी ध्वनि होती है। उसके साथ ही डा० दिलीप का प्रवेश)

डा० दिलीप (आते ही उल्लास के स्वर में) बधाई है डाक्टर शेखर ! बधाई है। भारत को बधाई दो। भारत को बधाई दो।

शेखर किस बात की बधाई ?

मंजुल डा० दिलीप ! आप तो उड़ते हुए से आ रहे हैं। ऐसी कौन सी बात हो गई जिससे आप बधाई चिल्ला चिल्ला कर कह रहे हैं।

दिलीप डा० शेखर ! कुमारी मंजुल ! हमने अमृत रस प्राप्त कर लिया। भारत ने अमृत रस प्राप्त कर लिया। मैंने तन्दुरुस्ती का रहस्य खोज लिया खोज लिया। हमेशा के लिए खोज लिया। अमृत रस अमृत रस ?

शेखर अमृत रस ? किस प्रकार का अमृत रस

दिलीप मैं औषधियों की पहिचान के लिए यहाँ की भूमि की परीक्षा कर रहा था। उसी समय यह हाथ आ गया। अमृत रस।

मंजुल कैसे ?

दिलीप तुमने अभी किसी विस्फोट की आवाज़ सुनी ?

शेखर हाँ, अभी अभी सुनी थी।

मंजुल और उससे तो हमारा धातु निर्मित कमरा भी हिलने लगा था।

दिलीप मैंने ही विस्फोट किया था। एक चन्द्रवासी की सहायता से एक अणु चक्र चलाया। भगवान के सुदर्शन-चक्र की तरह। एक विशाल भूखण्ड उखड़ गया। उसके उखड़ते ही घा की भाँति एक चिकना सफेद पदार्थ भूमि की दरार से सटक गया साथ

ही एक हाथ का अंश भी दीख पड़ा।

शेखर हाथ का अंश ?

दिलीप हाँ हाथ का अंश! पाँचों ऊंगलियाँ और कलाई। इस हाथ के साथ बहुत सी बहुमूल्य वस्तुएं अनेक प्रकार के रत्न और बड़े विचित्र यन्त्र निकल पड़े। वे शताब्दियों पूर्व यहाँ की सभ्यता के चिह्न ज्ञात होते थे और वह हाथ बिलकुल हमारे आपके हाथ की भाँति है जो एक पूर्ण विकसित मानव के हाथ की सूचना देता है। प्लटिनम में अनेक यन्त्र हैं। कोई चन्द्रवासी भी नहीं समझ सका कि ये यन्त्र किस आविष्कार के हैं और यह हाथ किसका है ?

मंजुल वह हाथ स्त्री का है या पुरुष का ?

दिलीप यह मैं नहीं कह सकता।

मंजुल उस हाथ में अंगूठी थी ?

शेखर तुम तो पृथ्वी के शृंगार की बात यहाँ भी सोचने लगी बेटी !

दिलीप यन्त्र और हाथ चाहे जिस सत्य की सूचना दें पर मैं तो कहूँगा कि वह सफेद पदार्थ अद्भुत रस ही है।

शेखर डा० दिलीप ! डाक्टर होकर तुम सहज ही कल्पना कैसे करने लगे ?

दिलीप यह कल्पना नहीं है डाक्टर ! यह वास्तविक सत्य है। जैसे ही यह सफेद पदार्थ भूमि की दरार से टपका वैसे ही मेरे साथ के चन्द्रवासी ने जिज्ञासा से उसे अपने हाथ में ले लिया और उसका स्वाद चखा।

शेखर स्वाद चखा ?

दिलीप चन्द्रवासी निर्भीक तो होते ही हैं। उसने हाथ में लिया और एक क्षण में उसका गुण पहिचान कर मुख में डाल लिया।

मंजुल फिर क्या हुआ ?

दिलीप पन्थ के मुख में जाते ही उस चन्द्रवासी के मुख से प्रकाश की किरणें निकलने लगी और उसमें इतनी शक्ति आई कि वह एक ही छलांग में दो बार उस गुफा के चारो ओर घूम गया।

मंजुल तब तो सचमुच ही वह अमृत रस है। शायद इसी बात को समझ कर हमारे प्राचीन ऋषियों ने चन्द्र को सुधाकर या सुधा धर कहा है। डा० दिलीप हमलोग पृथ्वी में शरद् पूर्णिमा के दिन खुले आकाश के नीचे दूध रख देते हैं। रात भर चन्द्रमा उस पर अमृत का रस डालता रहता है। सुबह हमलोग वही दूध पी लेते हैं। शायद शरद् पूर्णिमा के दिन चन्द्र के इसी भाग से किरणें निकलती होंगी।

दिलीप बिलकुल सम्भव है। डाक्टर शेखर आप किसी चिन्तन में डूब गए?

शेखर वह चन्द्रवासी कहाँ है जिसके मुख से प्रकाश की किरणें निकलने लगी थी?

दिलीप वह उस स्थान से उसी समय चला गया। बड़े-बड़े प्राचीन यन्त्रों को दो तीन ऊगली से ही उखाड़ कर वह अपने साथियों को सूचना देने चला गया। वहाँ से लौटते समय वह सफेद पन्थ में अपने साथ ले आया। देखिए इसमें से भी कितनी किरणें निकल रही हैं। हमारी यात्रा तो सफल हो गई डाक्टर! मैं आपको कितना धन्यवाद दूँ कि आप मुझे अपने साथ ले आए। पृथ्वी पर लौट कर ज्यों हमलोग जायेंगे तो इससे चाहे जिस रोगी को अच्छा कर सकेंगे।

मंजुल जरा मुझे दीजिये मैं चखूं।

शेखर (रोकते हुए) अभी नहीं। पहले मैं इसकी परीक्षा करूंगा। इसका जो प्रभाव यहाँ के मानव पर पड़ा है वह हम पर भी

पड़े यह आवश्यक नहीं है। संभव है प्रभाव कुछ दूसरा ही हो। इसकी परीक्षा आवश्यक है।

दिलीप डाक्टर आप चाहें जैसी परीक्षा करें किन्तु मुझे विश्वास है कि हम पर भी इस रस का प्रभाव अमर ही पड़ेगा। देखिये यह पन्ना धातु है इस पात्र में है किन्तु अपने तेज के कारण आर पार देखा जा सकता है।

(नेपथ्य में कोलाहल। नारी पुरुषों की यह कोलाहल ठीक वैसा ही है जैसा बाँसुरी और मदंग की ध्वनि का मिला जुला रूप होता है। यह कोलाहल धीरे धीरे पास आता जाता है।)

शेखर यहाँ के निवासियों का कोलाहल! यह क्या हो रहा है?

मंजुल यह कोलाहल धीरे धीरे पास आता हुआ जान पड़ता है।

शेखर हाँ पास आता जा रहा है। इस लोक के रत्न निवासी यहाँ किसलिए आ रहे हैं?

दिलीप मेरा अनुमान है कि विस्फोट से मिली हुई चीजें देख कर ही ये इतने प्रसन्न हैं। अपनी पुरानी सभ्यता के चिह्न देख कर ये फूले नहीं समाते। देखिये कितनी शीघ्र ये द्वार पर आ गए।

मंजुल स्त्रियों का कंठ स्वर अधिक उभरा हुआ है।

शेखर तो उन व्यक्तियों की बातें समझने के लिए अपने सामने यह अणु भाष-यंत्र रख दूँ। कोलाहल कुछ शान्त हो रहा है।

(यंत्र रखने की ध्वनि होती है। यंत्र से जो भाषा निकलती है वह बहुत सुरीली है। चन्द्रपुरुष की भाषा सरोद के स्वर की है और चन्द्रनारी की भाषा सितार के स्वर की है। शीघ्र ही कोलाहल शान्त हो जाता है।)

चन्द्रपुरुष (आगे बढ़ते हुए) भारत के महापुरुषों का यश हमारे लोक के सूर्योदय की भांति सुख देने वाला हो।

शेखर धन्यवाद।

चन्द्रनारी भारत की इस स्त्री का यश तारा की ज्योति की भांति निखरा रहे।

मंजुल धन्यवाद।

चन्द्रपुरुष हम समस्त चन्द्र जनता की ओर से बोल रहे हैं। भारत के पुरुषों ने यहाँ आकर अपने प्रेम का परिचय दिया है।

शेखर हमारे प्रेम को पहिचानने में आपकी कृपा है।

चन्द्रनारी उस प्रेम के कारण मैं आपको अपने लोक का जन गीत सुनाऊंगी।

(सितार की मींड के स्वर में ध्वनि उठती है)

शून्य की गति बीच
रह रह नाचते अणु के अखंडित रूप
रह रह नाचते
शून्य की नीहारिका के केन्द्र बिंदु अनूप
रह रह नाचते
रह रह नाचते।

(कुछ देर तक ध्वनि लहराती रहती है)

मंजुल (उल्लास के स्वरों में) बहुत मधुर है। बहुत सुन्दर है। आपका कंठ कितना कोमल है। आपके इस प्रेम के लिए अनेक धन्यवाद।

दिलीप तारों में संगीत की ध्वनि से आपने अपना कंठ मिला लिया है। बहुत सुन्दर। आप जितनी सुन्दर हैं उतना ही सुन्दर आपका कंठ है।

चन्द्रनारी आप अच्छी बातें करते हैं।

शेखर चन्द्रलोक के नागरिको। आप लोगों ने जिस प्रेम से हम भारत वासियों का स्वागत किया है वह हमारे भविष्य के लिये भी मंगलमय है। हमारी पृथ्वी अपने बिछुड़े हुए अंग चन्द्र से फिर फिर मिल रही है और दोनों लोक अलग अलग रह कर भी मानव कल्याण के लिये आविष्कार करने में एक ही रहेंगे।

चन्द्रपुरुष हमारे लोक अलग अलग भी नहीं रहेंगे। हमलोग अपने आविष्कारों से ऐसा प्रयत्न कर रहे हैं कि धीरे धीरे हमारा यह लोक जिसे आप चन्द्रलोक कहते हैं आपके लोक से—जिसे आप पृथ्वी कहते हैं—बिना किसी झटके से जुड़ जाय और हम दोनों एक ही नक्षत्र के निवासी बन जाय।

चन्द्रनारी आप भी अपने आविष्कारों से यही करें। आप हमारी ओर बढ़ें हम तो आपकी ओर बढ़ेंगे ही। यदि हम दोनों के लोकों के चुम्बकीय क्षेत्र विचलित नहीं हुए तो हम अपनी कक्षाएँ समीप ले आवेंगे और आकाश के किसी अन्य ग्रह से टकराने की संभावना ध्यान ही नहीं पाएगा। केवल सावधानी की आवश्यकता है।

शेखर हम भी इसके लिये प्रयत्न करेंगे। हमारे लोक में अब भी मानव युद्ध में विश्वास रखता है। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र की उन्नति सहन नहीं करता किन्तु हमारा देश शान्ति और प्रेम में विश्वास रखता है आपके सम्पर्क में आकर मानव भावना के प्रति सदैव के लिए अपने प्रेम की निधि खोल देगा और दोनों के बीच में आप के लोक की अमृत धारा प्रवाहित होगी।

चन्द्रपुरुष आज हम बहुत प्रसन्न हैं। आपने दूसरे लोक से आकर हमारे लोक का ही अमृत रस हमें दिया है। हमने भी अपने लोक में अनेक विस्फोट किए किन्तु अमृत रस हमें नहीं मिला। इसे आप एक अच्छे संयोग की बात समझ लीजिए कि आप के

लोक के एक आविष्कारक ने ऐसा भूमि स्फोट किया कि उससे हमें केवल अमृत रस ही नहीं मिला, वरन हमारी प्राचीन सभ्यता की अनेक वस्तुएं मिली। आज हमारे हृदय में आत्म गौरव की एक नई ज्योति जागी है। इस उपकार के लिए हम आपको कुछ भेंट करना चाहते हैं। आप स्वीकार करेंगे ?

शेखर आपका प्रेम ही हमारे लिये बहुत है। हमें आपकी मित्रता चाहिये इससे अधिक कुछ नहीं।

दिलीप मैं केवल आप के अमृत रस का थोड़ा सा हिस्सा चाहता हूँ जिसे मैं अपने लोक में ले जा सकूं। आपके लोक में तो किसी प्रकार का रोग नहीं है। हमारे यहाँ अभी तक अनेक रोग हैं। आप के अमृत रस से मैं अपने लोक में रोगों को सदा के लिये नष्ट कर दूंगा।

चन्द्रपुरुष आप जितना चाहें उतना अमृत रस यहाँ से ले जा सकते हैं लेकिन हम कुछ और भी भेंट करना चाहते हैं। उसे भी स्वीकार करें।

शेखर वह क्या ?

चन्द्रपुरुष एक चन्द्रकुमारी हम आपकी पृथ्वी को अर्पित करना चाहते हैं। इससे हम लोगों में मिलाप तो होगा ही पृथ्वी और चन्द्र भी आपस में मिलने के लिये जल्दी से जल्दी अपनी कक्षाएं निकट लावेंगे। तब हमारे स्त्री-पुरुष एक होंगे। हमारी जनता एक होगी। हम दो लोकों के बीच में प्रेम और मैत्री के अतिरिक्त फिर कुछ न रह जाय।

मजुल मैं आपकी इस भावना की सराहना करती हूँ।

दिलीप लेकिन यह अणु भाषा यन्त्र भी हम लोगों के बीच में रहना चाहिए जिससे हम एक दूसरे की भाषा न जानते हुए भी परस्पर बातें कर रहे हैं। बिना इस यंत्र के हम इस चन्द्रकुमारी

से किस प्रकार बातें कर सकेंगे। यह चन्द्रकुमारी भी हमसे कुछ नहीं कह सकेगी।

चन्द्रपुरुष यह यन्त्र भी हम आपको भेंट करेंगे।

मंजुल और फिर मैं इस चन्द्रकुमारी से इसकी चन्द्रीय भाषा सीख लूंगी और इसे मैं अपना हिन्दी गीत सिखला दूँगी।

चन्द्रपुरुष यह कुमारी हमारे लोक में सबसे अधिक सुन्दरी है। विज्ञान का आविष्कार करने में इसकी प्रतिभा सराहनीय है। इसकी सहायता से पृथ्वी और चन्द्र परस्पर शीघ्र ही मिलेंगे। इसी ने आप के सामने हमारे लोक का जन-गीत गाया है।

शेखर मैं इस चन्द्रकुमारी की प्रशंसा करते हुए इसका अभिनन्दन करता हूँ। आपकी भेंट सिर माथे स्वीकार है किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि हमारी पृथ्वी का जलवायु इस चन्द्रकुमारी के अनुकूल रहेगा अथवा नहीं। इसे हानि हो सकती है और हम आपकी भेंट की सुरक्षा में असमर्थ हो सकते हैं। हमारी पृथ्वी में अनेक प्रकार के रोग हैं। इसे कोई भी रोग हो सकता है। इसका प्राण हानि हो सकती है। फिर हम आपको क्या उत्तर देंगे? दीर्घ जीवन पर अभी तक हम अधिकार नहीं कर सके। आपके पास अमृत है हमारे पास डालडा जिसके अत्यधिक प्रयोग से हृदय की गति बन्द हो सकती है। जब हमारी पृथ्वी आपकी भेंट स्वीकार करने योग्य हो जायगी तब हम कृतज्ञता के साथ आपकी यह भेंट स्वीकार करेंगे।

चन्द्रपुरुष यह बात सुन कर हमारे हृदय में आपके प्रति समवेदना है। हमारे लोक में प्रकृति के अनेकानेक रूप हैं इसलिये हमारे शरीर में सब प्रकार की परिस्थितियों को सहन करने की क्षमता है। किसी भी देश में जाकर हमारे शरीर स्वस्थ रह सकेंगे। किन्तु हम आपकी इच्छा का आदर करेंगे। यह

कुमारी यही रहेगी और आज से इसका नाम 'पृथ्वी' होगा।

मंजुल यह नाम तो बहुत ही अच्छा रहेगा।

चन्द्रपुरुष हमारी इच्छा का आदर करने के लिये आपको अनेक धन्यवाद। हम भी अपनी ओर से अपनी राष्ट्रीय ध्वजासहित चिह्न के रूप में भेंट करते हैं। कृपया इसे स्वीकार कीजिये। हम लोग तो यहां से शीघ्र चले जायेंगे। यदि किसी अन्य लोक का कोई मानव यहां आए तो आप इस ध्वजा को दिखला कर कह सकें कि हमारे चन्द्रलोक में सर्व प्रथम भारत के जनतंत्र के तीन नागरिक आए थे। यह हमारी राष्ट्र ध्वजा स्वीकार कीजिये। (ध्वजा देता है।) आप इसका सदैव सम्मान करें।

चन्द्रपुरुष इस राष्ट्र ध्वजा के लिये अनेक धन्यवाद। हम इस ध्वजा को इसी कक्ष में स्थापित करेंगे और सदैव ही इसका सम्मान करेंगे।

शेखर हम सब आपके इस निर्णय से सुखी हुए। हम कल सूर्योदय होते ही आपसे विदा लेंगे। हमें आप हमारे यान तक पहुँचाने का कष्ट करें। इस बीच में अपना यंत्र भी ठीक कर लूंगा जो लौटते समय हमारे राकेट यान को अधिक शक्तिशाली बना सके।

चन्द्रकुमारी आपकी यात्रा मंगल मय हो। मैं पृथ्वी हूँ। आप अपने आविष्कारों में सफल हों कि पृथ्वी पृथ्वी में आ सके।

मंजुल बहिन! मैं सदैव अपने पिता जी से पृथ्वी चन्द्र मिलन के आविष्कारों के लिए प्रेरित करती रहूंगी।

चन्द्रपुरुष अब हम सब प्रस्थान करेंगे। आपकी यात्रा मंगलमय हो। आपका अमृत रस आपके पास अभी पहुँचा दिया जायगा। (क्रमशः चन्द्रवासियों के जाने की ध्वनि। कुछ देर शान्ति रहती है)

शेखर हमारी यह यात्रा सफल रही। अब हमारी पृथ्वी और चन्द्र का सम्बन्ध अनन्त-काल तक रहेगा। और मानव युद्ध की बात भूल कर प्रेम और विश्व-बन्धुत्व की भावना से रहना सीखेगा।

मंजुल पिता जी! हमलोग फिर यहाँ कब आवेंगे?

शेखर शीघ्र ही! अपने राष्ट्र को सूचना देकर। दूसरी बार हम यहाँ अधिक दिनों के लिए आवेंगे।

दिलीप तब तक आप अमृत रस की परीक्षा भी कर लेंगे। हम सब अमृत रस का प्रभाव लेकर फिर इस चन्द्रलोक में आवेंगे।

(कक्ष मे चन्द्रलोक के राष्ट्रीय संगीत की तरंग हलकी ध्वनि मे फिर आती है।)

मंजुल यह संगीत फिर क्या होने लगा?

शेखर चन्द्र निवासियों के उल्लास का दिन है। वे नाच गान में आनन्द विभोर हैं। चलो हम लोग भी दूसरे कक्ष में चलें।

(सब दूसरे कक्ष मे जाते हैं। वातावरण मे चन्द्रलोक का संगीत गूंजता रहता है।)



ऐतिहासिक

धरती का स्वग
समय-चक्र
पानीपत की हार
बादशाह अकबर का दीने इलाही
बापू
वीर जवाहर

धरती का स्वर्ग

[रेडियो रूपक]

पात्र

कवि
झेलम
कश्यप
नील
इरावती
विनयसेन
सुवीर
महीपत
महाराज यशोवर्द्धन
मन्त्री
जयगुप्त

नेपथ्य मे दूर से आता हुआ सगीत। कोई गा रहा है। साथ ही झेलम की कल-कल ध्वनि सुनाई पडती है।)

(कुछ लय के अनन्तर)

केसर का सौरभ समट कर
लेकर साँस समीर।
एक बार फिर से जागो
फिर से जागो काश्मीर।
फिर से जागो काश्मीर।

काश्मीर क्या फिर से नहीं जाग सकता ? महर्षि कश्यप की भूमि काश्मीर ! इसका अतीत गौरव कितना महान ह ! पवत के रूप में अपनी भुजाएँ उठाकर इसन विश्व के समक्ष कितन बार अपने पराक्रम की घोषणा की ह। अपन शस्त्रबल से भी इसन रणक्षेत्र को तीर्थक्षेत्र बनाया ह। हमार देश के मस्तक पर रखा हुआ यह मुकुट न जान कितन विजय रत्नों से प्रभापूर्ण ह।

इसके गौरव की कथा कितना प्रेरणादायक होगी कौन जानता ह। किन्तु क- कथा कहने वाला कौन ह ? (रुक कर कल-कल ध्वनि सुन कर) यह झेलम नदी। कल कल करती हुई सिंधु से मिलने जा रही ह। इसके तटों पर कितन नगर बस कर उजड गय होग। उजडे हुए नगरा पर कितने नवीन नगर बसे होंगे। क्यो झेलम ! तुम जानती हो उन नगरो की सख्या ? उन नगरो का वभव ! यदि तुम्हारे पास वाणी होती तो मैं विजय-पव के कितन महाकाव्य लिखता। तुम कल-कल करता हुई वहीं जा रही हो। यदि

तुम्हारे पास वाणी नहीं है तो तुम मेरी कवि-वाणी से लो और इस महान भूमि की यशोगाथा स्वरा दा। झेलम! तुम्हारी लहरें भावनाओं की पंक्तियाँ बन जायें और तुम्हारा कल कल नाद वाणी का रूप धारण कर ले। महाभागे झेलम क्या मेरी अभिलाषा की प्रतिध्वनि में तुम मेरी कवि-वाणी का उपहार स्वीकार करोगी? बोलो झेलम झेलम बोलो न। मैं अपनी कवि-वाणी की प्रतिध्वनि तुम्हें सौंपता हूँ।

(एक क्षण तक प्रसार कल कल ध्वनि)

झेलम (नारी कंठ) कवि को प्रणाम करता हूँ।

कवि (प्रसन्नतातिरेक मे) धन्य हो देवि! तुम बोल उठी! मेरी प्रार्थना में कितना आग्रह था! तुम अपने को नहीं रोक सकीं! ओह! तुम कितनी उदार हो! मेरी श्रद्धा स्वीकार करो देवि। सृष्टि के प्रारम्भ से ही तुम इस भूभाग पर प्रवाहित हो रही हो। इस भूमि का समस्त इतिहास तुम्हारी लहरों पर प्रतिबिम्बित हुआ है। क्या यह प्रतिबिम्ब शब्दों का रूप न सकता है? सम्पूर्ण देश की इच्छा है कि तुम्हारी वाणी में इस भूभाग का इतिहास गूँज उठे।

झेलम कवि क्या इस इतिहास को सुनने का साहस देशवासियों में है?

कवि देवि साहस ही नहीं साहस की अग्नि भी है। सामान्य अग्नि बुझ सकती है किन्तु साहस की अग्नि प्राणवायु से और भी अधिक प्रज्ज्वलित होती है। मैं ऐसे ही स्थल चुनना चाहता हूँ जिनसे साहस की अग्नि शिखाओं का रूप ग्रहण कर सके।

झेलम तब मैं तुम्हें दिव्य दृष्टि भी प्रदान करती हूँ कवि। और सृष्टि के आरम्भ से ही मैं इस भूमि के इतिहास जो मैंने भगवान

शकर क मुख से सुना ह का उदघाटन करती हूँ। देखो—इस ओर देखा—यह प्रलय वृष्टि हो रही ह। यह वरकापात और ज्वालामुखियो का विस्फोट देखो।

(प्रलय वृष्टि और ज्वालामुखी क विस्फोट का प्रचड नाद) समस्त पृथ्वी जल स आप्लावित हो रही ह। सर्पो की भांति लहरें अपना फन उठाकर आकाश का डस रही हैं और आकाश काला पड गया ह। देखो—यह विजली की कडक (बिजली की कडक)।

कवि माफ़! भयानक ह देवि।

झेलम बहुत भयानक ह? किन्तु अधिक भयानक दृश्य नही दिखलाऊगी। (कुछ क्षण रुक कर) यह प्रलय जल अब उतरने लगा ह। (जल के बहने की ध्वनि) यह पवत शृग निकल आया। ये अनक शृग निकल। जल बहुत नीचे बह कर चला जा रहा ह। किन्तु इस भूमि में अभी तक जल भरा हुआ ह क्योंकि चारो ओर पवत की श्रेणियाँ हैं और जल क निकलने का कोई माग नहीं ह।

कवि सचमुच देवि। य शृग बहुत ऊचे हैं। पवत शृगो के बीच जल इस प्रकार शान्त ह जसे माता की गोद में शिशु सो रहा है।

झेलम (मुस्कराकर) तुम कवि हो आगन्तुक। तो सुनो अनेक वर्षों तक यह जल सोता रहा क्योंकि निकलन का कोई माग नहीं था। अचानक भूकम्प हुआ। पृथ्वी क गभ से अग्नि की ज्वालाएँ प्रगट हो गई (भूकम्प की भयानक ध्वनि) पवत खड-खड हो गये—और जिसे तुमने सोता हुआ शिशु कहा वह जल भुटनो क बल चल कर माता की गोद से बाहर हो गया।

कवि हाँ देवि! सचमुच विजन स्थानो से जल बाहर हो रहा ह।

(जल निकलने की ध्वनि)

झेलम अब यह भूमि जलरहित हो गई। किन्तु अनेक स्थानों पर दल दल और गीली चट्टानें रह गई। कुछ वर्षों पश्चात् पुष्कर क्षेत्र से महर्षि कश्यप यहाँ आए।

कवि यही महर्षि कश्यप हैं देवि? कितना तेजोमय शरीर है इनका नेत्रों से कैसी ज्योति निकल रही है। ज्ञात होता है ये अग्नि के साक्षात अवतार हैं।

झेलम हाँ अग्नि के अवतार! अग्नि के तेज से ही तो वह श्यामांग बन गए हैं। उन्होंने अग्नि से मस्तीभूत चट्टानें देखी। अग्नि ही रुद्र है अग्नि की शक्ति ही सती है इस कारण उन्होंने इस भूभाग का नाम सती भूमि रखा।

कवि अनेक वर्षों का इतिहास आपको स्मरण है देवि। क्या पहिले इस भूमि का नाम सतीभूमि था देवि!

झेलम अनेक वर्षों तक यह भूमि सतीभूमि ही कहलाती रही फिर उन्होंने यहाँ और तपस्या की और भगवान शंकर को प्रसन्न किया।

कवि भगवान शंकर प्रकट हो गए। देवाधिदेव शंकर को प्रणाम।

झेलम महर्षि कश्यप ने भगवान शंकर से प्रार्थना की कि इस सतीभूमि को अनेकानेक पुष्पलताओं से आच्छादित कर दें और यहाँ का शेष जल एक नदी के द्वारा बाहर निकाल दें।

कवि फिर क्या हुआ देवि?

झेलम भगवान शंकर ने अपने त्रिशूल से वितस्ति पर्यन्त अर्थात बालिश्त भर पृथ्वी खोदी और एक जल की धारा निकल पड़ी। वह जल की धारा मैं ही हूँ।

कवि वह जल की धारा तुम्हीं हो देवि?

झेलम हाँ कवि। वितस्ति पर्यन्त भूमि से निकलने के कारण मेरा

नाम वितस्ता है। मैं भगवान शंकर की पुत्री हूँ। उन्हीं की कृपा से मैं यह पूर्व इतिहास जान सकी हूँ।

कवि धन्य हो देवि। अभी तक मैं समझता था कि स्वामि कार्तिकेय और गणेश यह दो ही शंकर के पुत्र हैं—तुम पुत्री हो यह ज्ञात नहीं था।

झेलम मैं भगवान शंकर के त्रिशूल से खोदी हुई वितस्ति पर्यन्त भूमि से उत्पन्न होने के कारण ही उनकी पुत्री हूँ। कालान्तर में उस जलकोश को भाल मान कर मुझे झेलम नाम दे दिया गया।

कवि भगवति वितस्ते। आज आपके नाम का रहस्य ज्ञात हुआ।

झेलम कविवर तब भगवान शंकर की आज्ञा से इस सतीमूर्ति के स्थान के जल को समेटा फिर चारों ओर भ्रमण करते हुए यहाँ के जल समूहों को एकत्र कर, यह स्थान निवास करने योग्य बना लिया।

कवि आप धन्य हैं देवि। साथ ही भगवान् शंकर के वरदान से इस स्थान पर नाना प्रकार के पुष्प और फल उत्पन्न हो गए। केसर के पुष्प तो विशेष रूप से मोहक हैं।

झेलम तुम्हारी कविता भी केसर की भाँति होगी।

कवि देवी तुम्हारी कृपा। फिर क्या हुआ?

झेलम इसके उपरान्त महर्षि कश्यप ने अनेक ग्रामों का निर्माण किया। नाग और नाग जातियों को बसाया। अनेक यज्ञ किये, और अपने पुत्र नील को यहाँ का सम्राट घोषित किया।—सुनो—उनकी वाणी—

कश्यप भूमौ च जायते सर्व भूमौ सर्व विनश्यति।
भूमि प्रतिष्ठा भूतानां भूमिरेव परायणम्॥
सब कुछ इस भूमि पर ही उत्पन्न होता है, और भूमि

में ही विलीन होता है । भूमि ही सब प्राणियों की प्रतिष्ठा और भूमि ही सबका परम आश्रय है । इसलिये वत्स नील ! तुम इस सती भूमि का पोषण करो । मैं आज समस्त जनवासियों के समक्ष तुम्हारा अभिषेक करूंगा । तुम यहाँ के सम्राट होकर अपनी सम्राज्ञी के साथ

नील (बीच में ही) सम्राज्ञी के साथ ? मैं समझ नहीं सका पिताजी !

कश्यप हाँ सम्राज्ञी के साथ ! भूमि की सेवा में सम्राज्ञी का सहयोग आवश्यक है । और सम्राज्ञी के लिये मैंने यज्ञशाला में एक अत्यन्त सुन्दरी बाला भी निश्चित कर दी है । यज्ञ की श्वेत भस्म से मैंने उसके केश कलाप चिह्नित कर दिये हैं जैसे दुग्ध पान करते हुए सर्पों के मस्तक पर दुग्ध के छींटे पड़े हों । जानते हो उस सुन्दरी बाला को ?

नील नहीं पिताजी !

कश्यप हंसी की ध्वनि की भाँति मधुर भाषिणी इरावती !

नील (चौंककर) इरावती ?

कश्यप (हंसकर) तुम चौंक पड़े ! जिसके नेत्राञ्चल मन्द पवन से हिलते हुए कमल कोष को भी लज्जित करते हैं ।

नील पिताजी इरावती नाग-कन्या है हम आर्य हैं । यह संयोग असम्भव है ।

कश्यप हवन कुंड में अग्नि की भुजाओं ने साक्षी दी है नील ! इसे कौन असम्भव कर सकता है । इरावती कौन है यह तुम नहीं जानते । तीनों लोकों में भूलोक श्रेष्ठ है । भूलोक में उत्तर दिशा पवित्र है । उत्तर में हिमालय महान है और उस हिमालय में सती भूमि जो मुझ कश्यप के कारण काश्मीर के नाम से प्रसिद्ध हो रही है । उसी काश्मीर की नाग जाति की

सवश्रेष्ठ सुन्दरी इरावती ! तुम काश्मीर के सम्राट होगे और इरावती काश्मीर की सम्राज्ञी !

नील तब म अपना अभिषेक नही होन दूँगा पिताजी ?

कश्यप इरावती के कारण ?

नील हाँ पिताजी ! आप किसी नाग जाति के पुरुष का ही अभिषेक करें और इरावती को सम्राज्ञी बना दें। म सम्राट नहीं बनूगा।

कश्यप वत्स नील ! यह जनता में प्रचारित हो गया ह कि तुम इस भू भाग के सम्राट होगे और इरावती सम्राज्ञी। यदि तुमने इरावती को स्वीकार नहीं किया तो नाग जाति विद्रोह कर उठेगी और अनेक ग्राम नष्ट हो जायेंगे।

नील और यदि इरावती को स्वीकार करन में अनक ग्राम नष्ट भ्रष्ट हो गये तब क्या होगा पिताजी ?

कश्यप इरावती को स्वीकार करने में ग्रामो के नष्ट भ्रष्ट हो जाने का भय ह ?

नील हाँ पिताजी नाग कन्याए चपल होती हैं। वे विनाशिनी होती ह। व अपना प्रणयोपहार अनक सौन्दय प्रेमियो को सहज ही दे देती ह। यदि किसी नाग जाति के भाग्यशाली व्यक्ति पर इरावती की कृपा और हो गई तो ?

कश्यप (तीव्रता से) सावधान नील ! मन से पवित्र हुई इरावती का अपमान न हो।

नील पिताजी अपमान नही करूगा किन्तु आप राजनीति के व्यव स्थापक हैं। नारी के हृदय का किसी भी नीति के बन्धन में कसना कठिन ह।

कश्यप नील ! कुलीन नारी के पास आत्म-सम्मान और मर्यादा का जो बन्धन है वह भगवान शकर के त्रिशूल से भी नहीं कटता

आ सकता। कुलीन नारी शक्ति है उसके पास अग्नि है उसके पास वज्र है जिससे बड़े-बड़े नागाधिराज भी चूर-चूर हो जाते हैं।

नील किन्तु पिताजी! नाग कन्याओं के पास आत्मसम्मान और मर्यादा तो होती नहीं। परिणाम यह होगा कि किसी भी सौन्दर्य प्रेमी शत्रु से मुझे युद्ध करना पड़ेगा। एक युद्ध नहीं अनेक युद्ध पिताजी और युद्ध की अग्नि से राज्य की रक्षा नहीं हो सकती। इसलिये यदि मुझे इरावती को ग्रहण करना है तो मैं राजसिंहासन को अस्वीकार करता हूँ। और यदि आप मुझे राजसिंहासन प्रदान करेंगे तो मैं इरावती को अस्वीकार करूँगा।

कश्यप तुम मूर्ख हो नील! मैंने इरावती का संस्कार किया है। तुम नवयुवक हो इसलिये शास्त्र की मर्यादा और मन्त्रों का प्रभाव नहीं जानते। नागकन्या होने के कारण यदि इरावती का अन्तःकरण ईर्ष्या से अधिशासित है तो योग शक्ति से उसकी सुषुम्णा में कुंडलिनी का जागरण है। उसके सहस्र दल कमल में जो नाद है वह संसार के समस्त वाद्यों से मधुर है उसकी कुंडलिनी में जो कलात्मक गति है वह संसार की समस्त कलाओं से श्रेष्ठ है।

नील तो पिताजी योग शक्ति में पारंगत इरावती किसी आश्रम की शोभा हो सकती है सिंहासन की नहीं।

कश्यप अपनी हठवादिता से मेरे क्रोध को उग्र बनाने का अवसर न दो नील! यदि यज्ञ भस्म से अभिषिक्त इरावती का तिरस्कार हुआ तो तुम इस भूमि से सदैव के लिये निर्वासित होगे और यहाँ से छः योजन दूर बालुकावन में राक्षसों और पिशाचों के साथ निवास करोगे।

नील क्रोध न कीजिए पिताजी ! इतना क्रोध है तो मैं आपकी आज्ञा शिरोधार्य कर लूँगा। किन्तु मेरी भी एक प्रार्थना सुनें। सम्राज्ञी होने से पूर्व क्या इरावती से कुछ क्षणों के लिए भेंट हो सकती है ?

कश्यप अवश्य ! वह यहीं यज्ञशाला में भगवती स्वाहा के समक्ष नत जानु होगी। (पुकार कर) जयगुप्त !

जयगुप्त (नेपथ्य से) उपस्थित हूँ प्रभू ! (जयगुप्त का प्रवेश)

कश्यप जयगुप्त ! भगवती इरावती का यहाँ आगमन हो।

जयगुप्त प्रभू की जैसी आज्ञा (प्रस्थान)

कश्यप नील ! जिस प्रकार एक बार केंचुल छोड़ने के बाद सर्प उस केंचुल को धारण नहीं करता उसी भाँति पवित्र यज्ञ वेदी पर मन्त्रों से यदि एक बार अपवित्र संस्कार छोड़ दिये गये, तो वे फिर से धारण नहीं किये जा सकते। मैंने इरावती के सभी कुसंस्कार दूर कर दिये। अब वह मेघ के स्वाती जल की भाँति पवित्र है जिससे तुम्हारे हृदय में प्रेम की मुक्ता का निर्माण होना चाहिये।

नील मैं प्रयत्न करूँगा पिताजी !

कश्यप तुम नागजाति के आचरणों पर ध्यान मत दो। शुद्ध प्रेम पर ध्यान दो। शुद्ध प्रेम से ही भगवती पार्वती ने शिव का अर्धांग प्राप्त किया। यह मत समझो कि पार्वती ने अपनी तपस्या में बिल्व पत्र खाकर और वायु पीकर ही भगवान शिव को प्राप्त किया है। बिल्व पत्र तो शंकर का नन्दी नित्य खाता है और जटाजूट में स्थित सर्प नित्य वायु पीता है। किन्तु वे शंकर का अर्धांग प्राप्त नहीं कर सके। प्रेम की महत्ता सर्वोपरि है उसी दृष्टि से तुम्हें इरावती को देखना चाहिये।

(जयगुप्त का प्रवेश)

जयगुप्त प्रभु महादेवी इरावती द्वार पर हैं।
कश्यप वे भीतर प्रवेश करें।
जयगुप्त जैसी आज्ञा। (प्रस्थान)
कश्यप नील महादेवी इरावती का स्वागत करो। वे आकाश की भाँति गम्भीर वायु की भाँति मनन शील अग्नि की भाँति पवित्र जल के समान तरल व धरती की भाँति सहनशील हैं। वे यज्ञ पूजा क्या है।
ध्वनि (नूपुर के शब्द। इरावती का प्रवेश)
इरावती महर्षि को प्रणाम ! सम्राट की जय !
कश्यप स्वस्ति !
नील तुम्हारी समृद्धि हो !
कश्यप इरावती सम्राट नील तुमसे कुछ क्षण वार्तालाप करेंगे। मैं यज्ञ की दक्षिणा लेकर कुछ देर में आऊंगा। बाहर मेरी प्रतीक्षा हो रही होगी। मैं चलूँगा।
ध्वनि (प्रस्थान पादुकाओं का शब्द। कुछ क्षण मौन, नील और इरावती परस्पर अनिमेष देखते हैं।)
नील देवि स्वागत ! आसन ग्रहण करें।
इरावती सम्राट आचार्य का वचन है कि सब कुछ इस भूमि पर ही उत्पन्न होता है और भूमि में ही विलीन होता है। भूमि ही सबकी प्रतिष्ठा और भूमि ही सबका परम आश्रय है। मैं भूमि पर हूँ। मेरी स्थिति यहीं ठीक है प्रभु।
नील तुम यज्ञ वेदी पर पवित्र होकर राजसिंहासन के योग्य बनी हो देवि !
इरावती यज्ञ की वेदी और राजसिंहासन में कोई अन्तर नहीं है सम्राट। दोनों का शृंगार पवित्र अग्नि से ही होता है। जिस प्रकार यज्ञ वेदी आहुतियों से सुसज्जित होती है उसी प्रकार राजसिंहासन

भा स्वाथ और तष्णा की आहुतियो से सुसज्जित होता ह।

नील तुम तो नाग-कन्या हो देवि !

इरावती प्रभु माय हूं।

नील सुनता हू कि नाग कन्याओ में कला अधिक होती ह, नान उतना नही।

इरावती प्रभु सूय की किरण काल बादला को भी उज्वल बनाती ह। और काले बादलो में ही सूय की किरण कलात्मक अधिक हो जाती ह।

नील तुम कितनी सुन्दर हो, उतनी ही सुन्दर बातें भी करती हो देवि।

इरावती यदि मेरी बातें सुन्दर हं तो सुदरता को प्रतिबिम्बित करने के लिये निमल दपण चाहिये तो आपके हृदय में ह।

नील इस कथन में भी कला ह इरावती ! महर्षि की आनानुसार तुम सम्राज्ञी बनोगी और इस प्रकार मेरी पत्नी। एसी महर्षि की इच्छा ह।

इरावती क्या सम्राट की इच्छा नहीं ह ?

नील (अटकते हुए) मेरी—मेरी—हाँ मेरी भी कुछ एसी ही इच्छा ह।

इरावती एसी ही इच्छा का मय समझाने का कष्ट करें प्रभु !

नील उसका—उसका कोई विशष अथ नहीं ह। म सोचता था—अर्थात् मैं सोचता था कि तुम जसी कुशल नाग कन्या को कला में सम्हाल सकूँगा या नहीं !

इरावती गजचम पर ही बठकर भगवान शकर अपने जटाजूट में द्वितीय के चन्द्र की कला सम्हाले हुए ह। प्रभु तो राजसिंहासन पर आसीन होगे और फिर मुझमें कलाएँ ही कितनी ह ?

नील जब तुम्हारी वाणी में इतनी कला है देवि तब तुम्हारे जीवन

म कितनी कला न होगी। तुम नृत्य कर सकती हो देवि !

इरावती यदि प्रभु की परिक्रमा नृत्य ह तो अवश्य कर सकती हूँ।

नील शास्त्रों का कथन ह कि नक्षत्रों का नृत्य ही सर्वोत्तम नृत्य है। उस नृत्य की गति देखने की इच्छा ह देवि ?

इरावती प्रभु सम्राट हैं। अपनी शक्ति से नक्षत्रों को पृथ्वी पर ही ला सकते ह !

नील और यदि म तुम्हें ही एक नक्षत्र मान लूँ ?

इरावती अतिशयोक्ति को भी म प्रभु की कृपा मान लूँ ?

नील किंतु म नृत्य देखना चाहता हूँ देवि !

इरावता सहचरी नाग-कन्याओं को बुलाने की आज्ञा ह ?

नील म केवल तुम्हारा नृत्य देखना चाहता हूँ।

इरावती मेरा नृत्य प्रभु की इच्छाओं के नृत्य के समान नहीं ह।

नील फिर भी !

इरावती प्रभ ! मकर राशि म जब सूय की सक्रान्ति होती ह तब उस क्षण अंतरिक्ष की शक्तियाँ इस प्रकार आन्दोलित हो उठती ह। उसे मेरे नूपुरों म देखें।

(कुछ क्षण नृत्य से नूपुरों का नाद)

इरावती महर्षि इसी ओर आ रहे हैं।

नील किंतु म नृत्य से तृप्त नहीं हुआ देवि !

इरावती इच्छाएं कभी तृप्त नहीं हुआ करतीं प्रभु। नृत्य साधना है और इच्छा मन का विनाश ! विनाश और साधना के छोरों को मिलाने का कष्ट न करें दोनों की गति स्वाभाविक ही रह।

(कश्यप का प्रवेश)

कश्यप हाँ तुम दोनों की गति स्वाभाविक रहे। तभी सम्राट और साम्राज्ञी बन तुम लोग राज्य पर शासन कर सकोगे। नील तुम इरावती से मिल कर प्रसन्न हुए ?

नील महर्षि, ऊख स्वयं ही इतना मीठा होता है कि उसे किसी फल की आवश्यकता नहीं होती।

इरावती जिस प्रकार ज्योति के सम्पर्क में आकर दीप भी ज्योतित हो जाता है उसी प्रकार सम्राट के प्रश्नों ने मेरे उत्तरों को ज्योतित कर लिया। मुझे जाने की आज्ञा है?

नील हाँ, देवि तुम्हारी प्रसन्नता पूर्ण हो।

कश्यप स्वस्तिमय बनो।

(नूपुर नाद से प्रस्थान)

कश्यप इरावती की समता इस समय कोई भी आर्य कन्या नहीं कर सकती। तुम्हारी समस्त शंकाएं निर्मूल हुईं। (नील कुछ नहीं बोलता) बोलो बोलो न!

नील (गम्भीरता से) नहीं निर्मूल हुईं पिता जी!

कश्यप नहीं?

नील इरावती बहुत कलाकुशल है अच्छा नृत्य कर सकती है। वार्तालाप मनोविज्ञान की गहराई से करती है किन्तु वह सम्राज्ञी नहीं हो सकती!

कश्यप मैं कारण जानना चाहता हूँ नील!

नील सम्राज्ञी नर्तकी नहीं हो सकती।

कश्यप (तीव्रता से) वह नर्तकी नहीं कृषक कन्या है। नृत्यकला से परिचित होना नर्तकी बनना नहीं है। तुमने उसे नृत्य करने के लिए कहा था?

नील हाँ पिताजी, मैंने कहा था!

कश्यप और सब यदि वह नृत्य न करती तो, तुम मुझसे कहते कि अवज्ञा करने वाली सम्राज्ञी नहीं हो सकती अथवा कलाहीन स्त्री सम्राज्ञी नहीं हो सकती! तुम अपने विचारों का सत्य साधित करते हो नील! तुममें गुणों के ग्रहण करने की

सहजता नहीं है। तुम छिद्रान्वेषण में प्रवीण हो दूसरा के गुणों को दोष रूप में ही देखते हो।

नील आप मुझे राजनीतिक बनाना चाहते हैं पिताजी ?

कश्यप ऐसा राजनीतिक नहीं जो असत्य को सत्य व सत्य को असत्य माने। इरावती ज्योति कलश है। वह जीवन की समस्त दिशाओं में ज्योति जागरण का संदेश देने की शक्ति रखता है। (नेपथ्य में शब्द होता है। हमें अन्न चाहिये, हम भूखे हैं प्रभो ! हमें अन्न चाहिये।)

कश्यप यह कैसा शब्द हो रहा है ?

नील भूखे लोगों का आर्तनाद ज्ञात होता है।

कश्यप यहाँ की जनता को तो पुष्कल अन्न दान में मिला है। (पुकार कर) जयगुप्त।

जयगुप्त (उपस्थित होकर) आज्ञा प्रभो !

कश्यप यह कैसा कोलाहल है ?

जयगुप्त प्रभु कुछ ग्रामवासी हैं व अनेक दिनों से भूखे हैं। उनके साथ महादेवी इरावती आपकी सेवा में आ रही हैं।

कश्यप उनका स्वागत है।

जयगुप्त जैसी आज्ञा। (प्रस्थान)

नील पिताजी ग्रामवासी यदि यहाँ आवेंगे तो यह कक्ष अशुद्ध हो जावेगा।

कश्यप नील तुम अभी पुराने संस्कारों से मुक्त नहीं हुए। सम्राट का सिंहासन जनता के विश्वास का ही प्रतीक है। जनता के सुख से राजनीति गंगा-जल की भाँति पवित्र बनी रहती है। जनता के प्रेम के शब्द ही राजसिंहासन में मणियों की भाँति विजड़ित होते हैं।

(इरावती का प्रवेश)

एकाकी-सम्राट

डा० रामकुमार वर्मा कृत

• • •

नाट्य-कृतियाँ

❀ मयूरपंख	११ ००
❀ रिमझिम	६ ००
❀ कौमुदी महोत्सव	१ ५०
❀ शिवा जी	१ ०
❀ चार ऐतिहासिक एकांकी	२ ००

अन्य कृतियाँ

❀ संत कबीर (वृहद)	१० ००
❀ संक्षिप्त संत कबीर	३ ००
❀ कबीर का रहस्यवाद	४ ००
❀ अंजलि (काव्य)	१ २५



सहजता नहीं है। तुम ि
गुणों को दोष रूप में ह
नील आप शुभ राजनीतिज्ञ थ
कश्यप ऐसा राजनीतिज्ञ नहीं -
मान। इरावती ज्योति
शिखाओं में ज्योति जाग
(नेपथ्य में नाद होता
प्रभो ! हमें अन्न चाहि
कश्यप यह कैसा शब्द हो र
नील भूख रोगों का आर्त
कश्यप यहाँ की जनता का
कर) जयगुप्त !
जयगुप्त (उपस्थित होकर
कश्यप यह कैसा कोलाह
जयगुप्त प्रभु कुछ ग्रामवा
महादेवी इरावत
कश्यप उनका स्वागत
जयगुप्त जैसी आज्ञा ।
नील पिताजी ग्राम
जावेगा।
कश्यप नील तुम र
सिंहासन ज
से राजनीि
के प्रश्न वे
होते हैं।

इरावती प्रभु विल्वबन के कुछ निवासी यहाँ एकत्र हैं। अनेक वृद्ध अपने पुत्रों के कन्धों पर चढ़ कर यहाँ आपसे अपना कष्ट निवेदन करने के लिए आए हैं। सबों ने चार दिनों से अन्न नहीं खाया है। वृक्ष के पत्ते वे कितने दिन खा सकते हैं?

कश्यप वास्तव में उन्हें बड़ा कष्ट हुआ।

नील उनसे कहो देवि, कि वे श्रम करें और पारिश्रमिक से अन्न प्राप्त करें।

इरावती किन्तु वे अत्यन्त दुर्बल हैं अभी श्रम के योग्य नहीं हैं।

नील तो उन्हें अपने पूर्वकाल के पापों का प्रायश्चित तो करना ही होगा।

कश्यप नील तुम्हारे सम्राट रहते हुए।

नील तो मैं क्या कर सकता हूँ पिताजी? अन्नकोष्ठों में तो इतना अन्न भी नहीं होगा। फिर इस नगर की प्रजा के लिए भी तो अन्न की कठिनाई होगी।

इरावती मैं एक निवेदन करना चाहती हूँ।

कश्यप अवश्य।

इरावती विल्वबनों के समीप कोई कृषि भूमि नहीं है। यदि आप मुझे आज्ञा दें तो मैं इन वनवासियों को प्रोत्साहित करूँ और स्वयं हल लेकर भूमि को कृषि भूमि बनाने में सहायता करूँ।

कश्यप साधु साधु इरावती! तुमने सम्राज्ञी के योग्य ही कथन किया?

इरावती सम्राट की आज्ञा है?

नील जैसी इच्छा!

इरावती तो मुझे आज्ञा दीजिये।

(प्रस्थान)

कश्यप तुम इस इरावती को नर्तकी कहोगे नील? सम्राज्ञी नर्तकी नहीं हो सकती। अब कहो—सम्राज्ञी कृषि का कार्य नहीं

कर सकती। मानवता की सवन्ना समझो नील ! दूसरे के कष्टों में सहभागी बनना मानव का सहज धर्म है। फिर तुम तो सम्राट घोषित किए गए हो। वनवासियों का कष्ट सुनकर तुम्हारे नत्रों में अश्रु नहीं आए ? इरावती के कहने से पूर्व ही तुम्हें उन वनवासियों के लिये कृषि कार्य करने को उद्यत होना चाहिये था।

नील (धीमे स्वर में) तो क्या कृषक ही सम्राट है ?

कश्यप सम्राट कृषक की छाया है। तुम सम्राट बनने योग्य नहीं हो नील ! मैं तुम्हें अपदस्थ करूंगा।

नील ऐसा न कीजिये पिताजी ऐसा न कीजिए ? मैं क्षमा चाहता हूँ। आगे से कृषकों को ही अपना आराध्य मानूंगा।

कश्यप और इरावती को ?

नील उन्हें भी स्वीकार करूंगा।

कश्यप इरावती तुमसे सभी गुणों में महान है इसलिए उसके समक्ष अपनी हीनता स्वीकार करने में तुम्हें लज्जा आती है। तुम्हें सम्भवतः उससे ईर्ष्या भी होगी इसीलिए तुम उसे कभी नाग कन्या कभी नर्तकी कह कर अपनी हीनता पर आवरण डालना चाहते हो। क्या ?

(नील चुप रहता है)

तुम्हारे पास कोई उत्तर नहीं है। तुम जाओ और कृषि का कार्य करती हुई उस इरावती के सहायक बनो।

नील अभी आना !

कश्यप मैं तुम दोनों के सेवा कार्य का निरीक्षण करूंगा। चलो मेरे साथ !

(प्रस्थान। पादुका की ध्वनि)

झेलम और इस प्रकार महर्षि कश्यप ने काश्मीर की बहुत-सी भूमि

कृषि योग्य बनाई ।

कवि देवि ! नील और इरावती का विवाह हुआ ?

झेलम मैं यह जानती थी कि कवि यह प्रश्न अवश्य पूछेगा । हाँ, कवि विवाह हुआ परन्तु नील की अपेक्षा इरावती ने ही सच्चे अर्थों में प्रजा का पालन किया । और उन्होंने अनेक मन्दिरों का निर्माण कराया अनेक अग्रहार ब्राह्मणों को दान दिये । अनेक वर्षों तक प्रजा का जय-जयकार इरावती के सम्मान में गूंजता रहा !

कवि उसके पश्चात् क्या हुआ देवि ?

झेलम उनके बाद अनेक राजाओं ने राज किया । शताब्दियों पर शताब्दियाँ बीतती चली गई । एक महान नरेश हुआ, जिसका नाम था यशोवर्द्धन । उसके न्याय और धर्म की कथाएं जन-जन में घर में उत्साह और प्रशंसा के साथ कही और सुनी जाती थीं । उसके प्रजापालन और न्याय के अनेक दृश्यों में से केवल एक दृश्य दिखलाना चाहती हूँ—

(विजयसेन सिसकियाँ ले रहा है । सुवीर नामक व्यक्ति आता है ।)

सुवीर पथिक ! तुम इतने दुखी क्यों हो ? तुम्हें किस बात का कष्ट है ?

(विजयसेन कुछ नहीं बोलता । एक गहरी सिसकी लेता है ।)

सुवीर तुम—तुम प्रवासी ज्ञात होते हो । क्योंकि महाराज यशोवर्धन के राज्य में कोई व्यक्ति दुखी नहीं है ।

विजयसेन (सम्भलकर) हाँ—मैं प्रवासी हूँ । इसी—इसी कुएँ में कूद कर आत्महत्या—आत्महत्या करूंगा ! (सिसकी)

सुवीर आत्महत्या ! आत्महत्या जघन्य पाप है प्रवासी ! धैर्य रखो और अपनी विपत्ति की बात कहो ! सम्भव है मैं तुम्हारी कुछ सहायता

कर सकूँ। मेरा नाम सुवीर है। इसी ग्राम में रहता हूँ। तुम्हारा रुदन मुझसे नहीं देखा गया।

विजयसेन बड़ी कृपा है आपकी। पर—पर मेरी सहायता कौन कर सकेगा?

सुवीर ईश्वर पर विश्वास रखिए! महाराज यशोवर्धन पर विश्वास रखिए! अपना परिचय दीजिए।

विजयसेन मेरा परिचय ही क्या!—मेरा नाम विजयसेन है श्रीमन्! कडार ग्राम का व्यापारी हूँ। कान्यकुब्ज देश से धन कमा कर चला था यहाँ खो दिया!

सुवीर खो दिया? किस तरह खो दिया?

विजयसेन अपनी ही मूर्खता से—और क्या कहूँ! छः महीने बाद लौटा हूँ। मेरी पत्नी मेरी प्रतीक्षा कर रही होगी। सोचता था, व्यापार में कमाई हुई पाँच सौ स्वर्ण-मुद्राएँ अपनी पत्नी को दूँगा! वह कितनी प्रसन्न हो जाती। किन्तु स्वर्ण मुद्राएँ—

सुवीर क्या हुई? किसी ने छीन ली? किन्तु महाराज यशोवर्धन के राज में कोई चोर नहीं है।

विजयसेन चोर नहीं है, यह मैं भी जानता हूँ किन्तु मेरी मूर्खता—मेरी असावधानी!

सुवीर मूर्खता? असावधानी? मैं कुछ समझा नहीं प्रवासी!

विजयसेन चलते चलते मैं थक गया था श्रीमन्! सोचा—इस कुएँ के शीतल जल से अपनी प्यास बुझाऊँ। मुद्राओं की गठरी कुएँ की जगत पर रख दी—मेरी बुद्धि की बलिहारी—अगर वह गठरी किसी दूसरी जगह रख देता—नीचे ही डाल देता—पर—पर अपनी मूर्खता से वह गठरी मैंने कुएँ की जगत पर ही रखी! पानी खींचते समय मेरे ही शरीर—मेरे ही शरीर के झटके से वह गठरी कुएँ में गिर पड़ी। मैं देखता रहा और

मेरे कठिन परिश्रम से कमाई हुई वे स्वर्ण-मुद्राएं जैसे मेरी मूर्खता पर अट्टहास करते हुए पानी में विलीन हो गई ?

सुवीर बड़ा बुरा हुआ यह तो।

विनयसेन अब मैं क्या मुंह लेकर घर जाऊंगा ? जब मेरी पत्नी मंगल आरती उतार कर प्रणाम करेगी आशा भरे नेत्रों से मेरे मुख की ओर देखेगी तब मैं किस मुख से कहूंगा कि तुम्हें रानी बनाने के लिए ही तुम्हारी स्वर्ण-मुद्राएं कुएं में फेंक आया हूं !—(सिसकी) धिक्कार है मुझे !—मैं इस कुएं के पास आया ही क्या—कुछ देर पानी न मिलता तो मर तो न जाता !—किन्तु अब अपने दुर्भाग्य को इस कुएं की गहराई से नापूं और दुष्ट संसार से कह दूं—देख ! मेरा दुर्भाग्य तेरे कुएं से भी गहरा है। मेरी स्वर्ण-मुद्राओं का छीननेवाले ! मेरे प्राणों को भी छीन ले ! यह कुआं मेरे प्राणों को लेकर और भी शीतल हो जायगा !—(सिसकियां)

सुवीर (धैर्य देते हुए) शान्त शान्त प्रवासी ! अपार मत बनो ! भावावेश में अपने आप को दोष मत दो। जान-बूझ कर तो तुमने मुद्राएं कुएं में फेंकी नहीं। तुम्हारा अपराध क्या है ! तुम्हारी पत्नी तुमसे कुछ नहीं कहेगी। इसे तो एक दैवी घटना ही समझना चाहिए। ईश्वर पर विश्वास रख कर तुम फिर व्यापार करो। सहस्रों मुद्राएं आ जायेंगी। तुम्हारे प्राणों के आगे मुद्राओं का मूल्य ही क्या है ! क्या मूल्य है !

(महीपत नामक व्यक्ति का प्रवेश)

महीपत मुद्राओं के विषय में कैसा विवाद ?

सुवीर (देखकर) अरे नमस्ते महीपत ! अच्छे आए। ये बेचारे विनयसेन हैं। बाहर के नागरिक। व्यापार से धन कमाकर लाए और दुर्भाग्य देखो कि इस कुएं से पानी खींचते समय

अपना सतुलन खो बैठे। स्वर्ण मुद्राओं की गठरी कुए में गिर गई!

महीपत इस कुए में गिर गई?

सुवीर हाँ ये बड़ी देर से आँसू बहा रहे हैं!

महीपत सचमुच! दैव ने इनके साथ बड़ा अन्याय किया।

सुवीर किन्तु अब इन्हें धैर्य रखना चाहिए। इतने गहरे कुए से वे स्वर्ण-मुद्राएं निकल नहीं सकतीं।

महीपत (गर्व से) निकल सकती हैं।

विजयसेन (उद्विग्नता से) निकल सकती हैं?—निकल सकती हैं? तो निकाल दीजिए महात्मन—मैं जीवन भर आपका ऋणी रहूंगा—निकाल दीजिए। जैसे भी हो निकाल दीजिए। मैं किसी तरह अपनी पत्नी को मुंह दिखला सकूं! आप कितने उपकारी हैं—ओह आप कितने उपकारी हैं!

महीपत उपकारी तो मैं नहीं हूँ किन्तु कुएं में उतर कर मैं आपकी गठरी अवश्य निकाल सकता हूँ। पूरे एक घंटे तक मैं जल के भीतर रह सकता हूं।

सुवीर हाँ यह तो मैं भी कह सकता हूं जल के भीतर ये बहुत देर तक रह सकते हैं। ये हमारे ही ग्राम के निवासी हैं। इन पर हमें गर्व है। बड़े जीवट के व्यक्ति हैं। ये आपकी गठरी पाताल से भी निकाल सकते हैं।

विजयसेन तब तो क्या कहना है—अब तो मेरी गठरी निकल ही आएगी धन्य हैं—बड़े भाग्य से इनके दर्शन हुए।

महीपत मैं इसे भाग्य नहीं मानता महाराय! अवसर मान सकता हूं। मैं यह जानना चाहता हूं कि उस गठरी में कितनी स्वर्ण मुद्राएं थीं?

विजयसेन पाँच सौ स्वर्ण मुद्राएं।

महीपत पाँच सौ? तब तो वह गठरी अवश्य ही निकाल दूंगा।

विजयसेन (विह्वलता से) मुझ पर बड़ी कृपा होगी—बड़ी कृपा होगी। मैं जी जाऊंगा महात्मन! मैं आपको लाख-लाख आशीर्वाद दूंगा—आपका उपकार—आपका उपकार मैं जन्म भर नहीं भूलूंगा। मुझ पर कृपा कर दीजिए—कृपा कर दीजिए महाशय! मेरी मुद्राएँ निकाल लीजिए।

महीपत मुद्राएं तो निकाल दूंगा पर मुद्राएँ निकालने का क्या पारिश्रमिक होगा मेरा?

विजयसेन आशीर्वाद दूंगा। बहुत बहुत आशीर्वाद दूंगा नहीं तो जो आप उचित समझें जितना आप उचित समझें।

महीपत चार सौ मुद्राए मेरी होंगी सौ मुद्राए आपकी।

विजयसेन सौ मुद्राएं मेरा?

महीपत सौ से भी कम चाहते हैं आप? किन्तु आप संकोच न करें। मैं आपको मुद्राएं ही दूंगा। यह अवश्य है कि ये सौ मुद्राएँ आपको बिना कष्ट के ही मिल रही हैं अन्यथा आपका सारा धन तो कूप-तीर्थ को समर्पित ही हो गया है।

सुधीर दुर्घटना तो ऐसी ही हुई है किन्तु अपना पारिश्रमिक कुछ कम से लो महीपत!

महीपत कम क्यों लूं सुधार! इतने गहरे कुएँ में उतरना क्या सरल काम है? यह तो मेरा साहस है कि असम्भव को भी सम्भव बना दूं। भय को भी भयभीत कर दूं फिर अपने प्राणों को संकट में डालने का पारिश्रमिक चार सौ मुद्राएं भी न होगा?

विजयसेन उससे भी अधिक हो सकता है श्रीमन्! किन्तु यदि कुएं से स्वर्ण-मुद्राएँ प्राप्त होना है तो परिश्रम से उपार्जन करने के कारण मुझे उनका अधिकारी होना चाहिए। किन्तु आप कृपा पूर्वक मुद्राएँ निकाल रहे हैं, मुझ पर उपकार कर रहे हैं तो उपकार करने का जो पारिश्रमिक आप उचित समझें, वह ले

लीजिए।

महीपत देखिए न उचित अनुचित की बात है न उपकार अपकार की बात है। बात है कुए से मुद्राएं निकालने की और उसका पारिश्रमिक है चार सौ स्वर्ण मुद्राएं।

विजयसेन किन्तु पांच सौ में से मुझे केवल सौ मुद्राएं मिलेंगी यह किस न्याय से ?

महीपत देखिए न्याय तो महाराज यशोवर्द्धन करते हैं। आपको सौ मुद्राएं मिल जायें इसके लिए मैं अपने प्राणों को संकट में डालता हूँ।

विजयसेन आपका विवेक यही उचित समझता है ?

महीपत सम्पूर्ण रूप से। आप पर अकारण ही दया कर रहा हूँ। यदि यह आपको स्वीकार नहीं है तो जाने दीजिए मेरे पास भी बहुत काम है। मैं चला। (चलने को उद्यत होता है।)

विजयसेन अच्छा सुनिए।

महीपत देखिए सुनने की बात नहीं है मेरे पारिश्रमिक की बात है। सोच लीजिए। मैं यहीं पास हूँ। आवश्यकता हो तो बुला लीजिएगा। मैं जाता हूँ। (प्रस्थान)

सुवीर क्या सोच रहे हो प्रवासी महीपत जा रहा है। उसकी बात स्वीकार कर लेना ही बुद्धिमानी है नहीं तो जो सौ स्वर्ण मुद्राएं आपको मिल सकती हैं वे भी आपके हाथ से चली जावेंगी।

विजयसेन पर क्या यह अन्याय नहीं है कि पारिश्रमिक के नाम से स्वर्ण चार सौ लेकर मुझे केवल सौ मुद्राएं दी जायं और कहा जाय कि मुझ पर अकारण दया की गई।

सुवीर आपकी बात तो ठीक है किन्तु आप यहां कितनी देर ठहर सकते हैं ? एक दिन ? दो दिन ? फिर तो आप चले ही

जायेंगे। आपके जाने के अनन्तर महीपत कुएँ में से गठरी निकाल कर सारा धन ले सकता है। आपके हाथ तो कुछ भी नहीं आयगा।

विजयसेन इस अन्याय की अपेक्षा म आत्म-हत्या करना उचित समझता हू।

सुवीर आत्म हत्या करना कायरता ह। आप सौ स्वर्ण मुद्राए लेकर फिर व्यापार कर सकते ह या सौ मुद्राएँ अपनी पत्नी को देकर कह सकते हं कि व्यापार में इतना ही लाभ हुआ। आपकी पत्नी कुछ नहीं कहेंगी।

विजयसेन (सोचकर) हाँ पत्नी बेचारी क्या कहगी। वह क्या जान कि ससार में धन लेकर दया की जाती ह। ठीक है जसा आप उचित समझें।

सुवीर तो फिर मैं महीपत को बुलाता हूँ। (पुकार कर) महीपत! महीपत आओ! (विजयसेन से) देखो प्रवासी, नीति कहती ह कि जाते हुए धन से जितना बच सके बचा लेना चाहिए।

विजयसेन परिस्थिति का परिहास तो यही ह।

(महीपत का प्रवेश)

महीपत आपने क्या निर्णय किया?

विजयसेन किसी का एक हाथ काट लिया जाय और कहा जाय कि मन तुम्हें हाथ को परिश्रम से बचा लिया। कुछ वसी ही बात ह।

महीपत देखिए मैं आपके वेद-पुराण को बातों को नहीं समझना चाहता। मैं तो एक उत्तर चाहता हूँ—हाँ या 'नहीं'।

विजयसेन तो जसा आप उचित समझें वसा ही करें।

महीपत मने तो पहले ही कहा कि चार सौ मुद्राए मेरी और सौ मुद्राए आपकी। स्वीकार ह?

सुवीर स्वीकार कर लो प्रवासी !

विजयसेन आप लोग उचित ही कहेंगे उचित ही करेंगे ।

महीपत तब ठीक है मैं इस रस्सी के सहारे कुए में उतरता हूँ ।
(रस्सी से सरकने और पानी मे डूबने का नाट्य)

सुवीर प्रवासी ! यह मैं मानता हूँ कि कुछ अन्याय हो रहा है किन्तु इसे सहन के अतिरिक्त और कौन सा मार्ग है ?

विजयसेन कोई नहीं । सुनता हूँ कि महाराज यशोवर्धन बहुत अच्छा न्याय करते हैं किन्तु उनका न्याय मुझे कहाँ मिलेगा !

सुवीर तुम सच कहते हो प्रवासी ! उनकी बुद्धि इतनी विलक्षण है कि कठिन से कठिन समस्या का समाधान वे एक क्षण भर में कर सकते हैं पर इस समय वे कहाँ होंगे यह कौन कह सकता है । राजधानी में नहीं हैं नहीं तो तुम वहाँ जा सकते थे ।

विजयसेन जब मेरे भाग्य में न्याय नहीं है तभी वे राजधानी में नहीं हैं ।
(कुए में से महीपत की आवाज आती है ।)

महीपत (कुए से) आपकी गठरी पीले कपडे की है ?

वियजसेन (सुवीर से) कह दीजिए कि पीले कपडे की है ।

सुवीर (जोर से) हाँ पीले कपडे की है ।

महीपत (कुएँ से) मैंने पा ली है । मैं उसे लेकर ऊपर आ रहा हूँ ।
(नेपथ्य से दो घोड़ों के दौडने की आवाज आती है । घोड़े तेज दौड़ते हुए आ रहे हैं ।)

सुवीर (देखकर) कुछ आखेटक आ रहे हैं इस ओर । घोड़े बहुत तीव्र गति से दौड रहे हैं—(सहसा) अरे, महाराज यशोवर्धन हैं ! साथ में उनके मंत्री हैं ।

विजयसेन (उमंग से) महाराज यशोवर्धन हैं ? धन्यभाग्य धन्य भाग्य ! महाराज यहाँ रुक सकते हैं ? रुक जाते तो मेरा न्याय हो जाता !

सुवीर स्वीकार कर लो प्रवासी !

विजयसेन आप लोग उचित ही कहेंगे उचित ही करेंगे।

महीपत तब ठीक है। मैं इस रस्सी के सहारे कुए में उतरता हूँ।

(रस्सी से सरकने और पानी में डूबने का शब्द)

सुवीर प्रवासी ! यह मैं मानता हूँ कि कुछ अन्याय हो रहा है किन्तु इसे सहन के अतिरिक्त और कौन सा मार्ग है ?

विजयसेन कोई नहीं। सुनते हैं कि महाराज यशोवर्धन बहुत अच्छा न्याय करते हैं किन्तु उनका न्याय मुझे कहाँ मिलेगा !

सुवीर तुम सच कहते हो प्रवासी ! उनकी बुद्धि इतनी विलक्षण है कि कठिन से कठिन समस्या का समाधान वे एक क्षण भर में कर सकते हैं पर इस समय वे कहाँ होंगे यह कौन कह सकता है। राजधानी में नहीं हैं नहीं तो तुम वहाँ जा सकते थे।

विजयसेन जब मेरे भाग्य में न्याय नहीं है तभी वे राजधानी में नहीं हैं।

(कुए में से महीपत की आवाज आती है।)

महीपत (कुए से) आपकी गठरी पीले कपड़े की है ?

वियजसेन (सुवीर से) कह दीजिए कि पीले कपड़े की है।

सुवीर (जोर से) हाँ पीले कपड़े की है।

महीपत (कुए से) मैंने पा ली है। मैं उसे लेकर ऊपर आ रहा हूँ।

(नेपथ्य से दो घोड़ों के दौड़ने की आवाज आती है। घोड़े तेज दौड़ते हुए आ रहे हैं।)

सुवीर (देखकर) कुछ आगंतुक आ रहे हैं इस ओर। घोड़े बहुत तीव्र गति से दौड़ रहे हैं—(सहसा) अरे महाराज यशोवर्धन हैं ! साथ में उनके मंत्री हैं।

विजयसेन (उमंग से) महाराज यशोवर्धन हैं ? धन्यभाग्य धन्य भाग्य ! महाराज यहाँ रुक सकते हैं ? रुक जाते तो मेरा न्याय हो जाता !

सुवीर महाराजा की जय बोल कर हाथ उठा दो, प्रवासी !

विजयसेन अच्छी बात है। (ज़ोर से) महाराज की जय ! महाराज की जय ! मेरा न्याय कीजिए ! मेरा न्याय कीजिए !

(घोड़े रुक जाते हैं)

विजयसेन महाराज की जय ! महाराज मैं न्याय चाहता हूं।

(महाराज यशोवर्धन और मंत्री घोड़े से उतरते हैं।)

यशोवर्धन (मंत्री से) मंत्री ! नगर की सीमा पर अन्याय ? पूछो, क्या अभियोग है ?

मंत्री (विजयसेन से) तुम कौन हो नागरिक ? तुम्हारा क्या अभियोग है ? किसने तुम्हारे प्रति अन्याय किया है ?

विजयसेन महाराज की जय हो ! अपने दास की प्रार्थना सुन लीं ! महाराज ! यह दास केडार नगर का व्यापारी है। कान्यकुब्ज प्रदेश में व्यापार कर पाँच सौ स्वर्ण-मुद्राओं के साथ अपने स्थान को लौट रहा था इस कुए पर पानी पीने आया। दुर्भाग्य से पानी खींचते समय पास के मुद्राओं की गठरी इस कुएँ में गिर गई।

यशोवर्धन तुम असावधान हो श्रेष्ठि !

विजय महाराज ! असावधान ही नहीं अभागा भी हूं ? इस दुःख से आत्महत्या—

यशोवर्धन आत्महत्या ! महान कायरता !

विजय अपने दुःख के आवेग को रोकने में मैं असमर्थ था महाराज ! ये सुवीर हैं इसी ग्राम के निवासी, इन्होंने मुझे धैर्य दिया।

सुवीर महाराज की जय हो !

मंत्री तुम सुवीर हो। अपने नाम के अनुरूप तुमने प्राणी की रक्षा की ! साधु !

सुवीर महाराज ! राजा का धर्म ही प्रजा को साहसी बनाता है।

विजय महाराज ! जब सुवीर मुझसे धैर्य रखने को कह रहे थे तभी

महीपति नाम के एक सज्जन आए। उन्होंने कहा कि मैं स्वर्ण मुद्राओं की गठरी कुएं से निकाल दूँ तो मुझे क्या मिलेगा?

यशोवर्धन उपकार करने में भी पारिश्रमिक! (मन्द हँसी) अच्छा तुमने कितना पारिश्रमिक कहा?

विनय मैंने तो यही कहा कि मैं लाख-लाख आशीर्वाद दूँगा।

यशोवर्धन आशीर्वाद मात्र (हँसकर) प्रवासी! आशीर्वाद का मूल्य सज्जन ही समझते हैं। उन्होंने कुछ पारिश्रमिक माँगा?

विनय हाँ महाराज उन्होंने कहा कि पाँच सौ स्वर्ण मुद्राओं में से वे चार सौ मुद्राएँ लेंगे और मुझे केवल सौ मुद्राएँ देंगे।

यशोवर्धन तुम्हें केवल सौ मुद्राएँ? तुमने ठीक तरह से सुना?

विजय हाँ महाराज! मेरे बहुत आग्रह करने पर भी उन्होंने अपना पारिश्रमिक कम नहीं किया। ये सुवीर भी साक्षी हैं।

यशोवर्धन सुवीर! श्रेष्ठी का कथन सत्य है?

सुवीर हाँ महाराज! परिस्थिति ऐसी ही थी कि महीपत की बात माननी पड़ी नहीं तो श्रेष्ठि को सौ मुद्राएँ भी नहीं मिलतीं।

यशोवर्धन यह अन्याय है। पारिश्रमिक मूल धन के पंचमांश से अधिक नहीं होना चाहिए नागरिक।

विजय महाराज धन्य हैं। इसीलिए मैंने न्याय की भिक्षा माँगी।

यशोवर्धन महीपत कहाँ है?

सुवीर वे कुएँ से गठरी लेकर बाहर आना ही चाहते हैं।

यशोवर्धन अच्छा वे अभी बाहर नहीं आए?

सुवीर महाराज! घटना अभी थोड़ी देर पहले ही घटित हुई है।

मन्त्री तब तो महीपत को खोजने का श्रम न करना होगा।

(महीपत का प्रवेश)

महीपत (ज़ोर से साँस लेता हुआ) इतना गहरा कुआँ! ओह ऊपर चढ़ने में दम फूल आया गठरी यह गठरी ले आया

(सामने देखकर) अरे आप आप महाराज! महाराज की जय हो! मत्री महाराज की जय हो! महाराज आप यहाँ।

मत्री यह महीपत आ गया

यशोवर्धन तुम्हारा नाम महीपत ह ?

महीपत हाँ महाराज!

यशोवधन तुम कुएँ से स्वण मुद्राए निकालो ?

महीपत हा महाराज! यह गठरी ह।

यशोवर्धन साधवाद (मत्री से) मत्री! स्वण मुद्राए अपन अधिकार में लो।

मत्री जो आज्ञा। (गठरी लेत हैं)

महीपत इस नगर सीमा पर वज्र ग्राम का निवासी हू।

यशोवर्धन तुमने बहुत अच्छा किया जो श्रेष्ठ विजयसेन की स्वण मुद्राओं की गठरी कुए से निकाली! तुमने उसके लिए पारिश्रमिक माँगा।

महीपत महाराज! मन कोई अपराध नही किया। इतने गहरे कुए में उतरने के लिए अपार श्रम करना था। उस श्रम के लिए ही मन पारिश्रमिक माँगा।

यशोवर्धन पारिश्रमिक माँगना अनुचित नही था। तुमने कितना पारि श्रमिक मागा ?

महीपत चार सौ स्वण मुद्राए।

यशोवर्धन गठरी में कितनी मुद्राएँ ह ?

महीपत पाँच सौ मुद्राए महाराज!

यशावोर्धन (आश्चय सहित) तो पाँच सौ में मे चार सौ स्वण मुद्राएँ! क्या तुम यह उचित समझते हो ? क्या यह पारिश्रमिक का परिहास नहीं ह ?

महीपत ग्य कोई नही ह महाराज । म हूँ और मरी पत्नी है ।

यशो० कोई ग्य ?

महीपत कोई नही ह महाराज ।

यशो० फिर केवल दो व्यक्ति तो थोड परिश्रम स ही सुविधा के साथ रह सकते ह । कोई व्यवसाय करत हो ?

महीपत अवकाश नही मिलता महाराज ।

यशो० अवकाश क्या नही मिलता ?

महीपत पत्नी की सवा सुश्रूषा अधिक करना पडता ह ।

यशो० (मन्द हास्य के साथ) तो इसे भी एक व्यवसाय ही समझना चाहिए । फिर फिर उदर पोषण कसे होता ह ?

महीपत घर के सामन ही थोडी खती कर लता हूँ और फिर कुछ श्रेष्ठि को सहायता करन जसा कुछ काम मिल जात ह ।

यशो० इसीलिए तुम्हारा पारिश्रमिक अधिक हुआ करता ह । किन्तु तुम्हार इतन बलिष्ठ होन पर तो रकता नही रहनी चाहिए ।

महीपत महाराज । या तो रक न रहता किन्तु परिस्थितिया से रक बन जाता हू ।

यशो० परिस्थितिया से ? एसा कौन सी परिस्थितियाँ ह ?

महीपत महाराज । क्षमा करें मरा पत्नी बहुत शृगार प्रिय ह । जो कुछ भी म उपार्जित करता हू वह सब उसके शृगार की सामग्री में व्यय हो जाता ह।

यशो० तुम्हारा भी तो कुछ अधिकार होना चाहिए महीपत । किन्तु सभवत तुम विवश होग । उसी विवशता के कारण तुमन सभवत चार सौ स्वण मुद्राए श्रेष्ठि से प्राप्त करन की बात साचा जिससे तुम अपनी पत्नी का शृगार प्रसाधन समुचित मात्रा म जुटा सको ।

महीपत महाराज । आप अन्तर्यामी भी ह ।

यशो० (मन्त्री से) मन्त्री । महीपति की पत्नी के लिए अपने कठ की मुक्तामाला प्रदान करो जिससे महीपत और उसकी पत्नी अपन को रक अनुभव न करें ।

महीपत (उल्लास से) धय ह धय ह महाराज । आप कितन कृपालु और यायी हं । अब चार सौ मुद्राएँ—

यशो० मत्रा । तुमने महीपत की पत्नी क लिए महीपत को मुक्तामाला प्रदान कर दी ?

मन्त्री हाँ महाराज । प्रदान कर दी । (गले स मुक्तामाला उतारते हैं ।)

महीपत आप धय ह प्रभु । मुझे प्राप्त हा गई । यह ह ।
(मुक्तामाला के हाथ मे रखने का नाद)

यशो० तो मन्त्री । तुमने महीपत की पत्नी को रकता के कूप से निकाला । महीपत ने कूप से गठरी निकाली तुमने रकता के कूप से महीपति की पत्नी निकाली ।

महीपत (कुछ न समझते हुए) ऐं ? हाँ महाराज ।

यशो० ता अब मन्त्री के भी पारिश्रमिक का निर्णय होना चाहिए ।

मन्त्री महाराज की कृपा होगी ।

यशो० महीपत गठरी के अधिकाश भाग पर अपना अधिकार समझते ह इसी याय से मन्त्री को भी महीपत की पत्नी पर अधिकाश अधिकार होना चाहिए क्योंकि मन्त्री ने महीपत की पत्नी का रकता के कूप से निकाला ह ।

विजयसेन धय ह महाराज । आपकी विलक्षण बुद्धि को ।

महीपत (घबराकर) महाराज । मेरी रक्षा कीजिए । ऐसा निर्णय न कीजिए न कीजिए महाराज ।

यशो० मेरा निर्णय ? यह निर्णय तो तुम्हारा किया हुआ ह महीपत जिस प्रकार तुमने श्रेष्ठि को केवल सौ स्वर्ण-मुद्राओं का पात्र

समझा उसी प्रकार तुम भी कुछ समय तक अपनी पत्नी से वार्तालाप कर सकते हो शेष समय के लिए वह मंत्री के अधिकार में रहेगी। क्या मंत्री ? ठीक है ?

मंत्री महाराज का निर्णय सर्वोपरि है।

विनय नीर-क्षीर विवेक तो यही है महाराज !

महीपत महाराज ! यह मुक्तामाला मुझे नहीं चाहिए—मेरी पत्नी भी नहीं चाहिए ! मैं आपकी सेवा में उसे लौटाता हूँ। (माला लौटाता है।) मेरी पत्नी को रक्षा के कूप से न निकालिए। उसे मेरे पास ही रहने दीजिए।

यशो० मुझे कोई आपत्ति नहीं किन्तु फिर तुम न्याय पूर्वक श्रेष्ठि से इतनी स्वर्ण मुद्राएं नहीं ले सकते।

महीपत महाराज जैसा निर्णय करें।

यशो० श्रेष्ठि ने कहा था कि जितना आप उचित समझते हैं उतना न लें। उचित एक पचमांश है अर्थात केवल सौ स्वर्ण मुद्राएं।

महीपत मुझे स्वीकार है।

विजयसेन और मंत्री (सम्मिलित स्वर से) महाराज यशोवर्द्धन के न्याय की जय ! जय ! जय !

झेलम कवि ! तुमने महाराज यशोवर्द्धन का न्याय देखा ?

कवि देवि ! मैं तो महाराज की विलक्षण बुद्धि पर मुग्ध हो गया। किस प्रकार अज्ञात रूप से उन्होंने सारी परिस्थिति को समझ कर एक क्षण में न्याय कर दिया ! धन्य है !

झेलम इस प्रकार इस धरती के स्वर्ग में अनेकानेक नरेश सत्य और धर्म की दृष्टि से न्याय करते रहे। शताब्दियाँ बीत गईं !

कवि इसके बाद का इतिहास क्या है देवि !

झेलम कवि ! आज समय अधिक हो गया। अब अधिक नहीं कहूँगी। किन्तु मध्यकाल में जहाँ जहाँगीर और नूरजहाँ ने इस भूमि

को स्वर्ग की संज्ञा दी वहाँ आधुनिक काल में पाकिस्तान ने इसे अपने अत्याचारों और नृशंस परों से कुचला। इसकी कथा भी बहुत मर्मस्पर्शी है। यह कथा कल कहूँगी। तुम इसी स्थान पर कल इसी समय आने का कष्ट करना।

कवि मैं अवश्य उपस्थित होऊँगा देवि! मैं इस धरती के स्वर्ग की कथा सुन कर धन्य हो गया!

झेलम पृथ्वी के स्वर्ग की कथा साहस और विजय की कथा है। शताब्दियों के बाद शताब्दियाँ बीत जायेंगी। किन्तु यह स्वर्ग कभी विदेशियों की पराधीनता स्वीकार नहीं करेगा। इसके निवासी भारत भूमि को ही अपनी भूमि मानेंगे और काश्मीर सदा विजय रहेगा। इस पर सत्य और धर्म की ध्वजा सदैव ही फहराती रहेगी। (कुछ रुक कर) मैं अब फिर अपने रूप में लीन होती हूँ।

ध्वनि (जोर की कलकल ध्वनि)

कवि धन्य हो देवि झेलम! तुमने धरती के स्वर्ग का भविष्य भी बतला दिया। इस धरती के स्वर्ग की जय!

(समाप्ति संगीत)



समय-चक्र

पात्र

विजय
राजेन्द्र
पुरुष
सैनिक
समय चक्र
भटार्क
चारुमित्रा
अशोक
चाणक्य
वृद्ध पुरुष

विजय का अध्ययन कक्ष। एक ओर आलमारी में पुस्तकें हैं। उसके समीप टेबिल और दो कुर्सियाँ हैं। कुछ हटकर कोने की ओर एक चारपाई जिस पर बिस्तर लगा हुआ है। दीवाल पर कलेण्डर।

पर्दा उठने पर विजय टेबिल पर रखी हुई एक पुस्तक पढ़ने मे व्यस्त है। राजेन्द्र आलमारी मे कोई पुस्तक खोज रहा है।

विजय (उठकर अभिनय के स्वरों मे पढ़ते हुए) तो वृषल! इस कोरी बकवाद से क्या काम। जो राक्षस चतुर है तो यह शस्त्र उसी को दे दे। यही तुमने चाणक्य को जीतने का उपाय

राजेन्द्र (आलमारी की एक पुस्तक निकालते हुए) तुम तो बिल्कुल ही चाणक्य बन गए विजय! वाह क्या चन्द्रगुप्त को डाटा है। चन्द्रगुप्त न हुआ चन्दू कहार हो गया।

(पास आता है)

विजय अरे चन्दू कहार होता तो भी गनीमत थी। चाणक्य को मुँह तोड जवाब दे सकता था। कहता—ए अबै-तबै न कीहौ चानक हो तो आपन घर के। बहुत बपरब तौ तुम्हार चन काई क चना बना के चबा जाब हाँ। यहाँ तो सम्राट चन्द्रगुप्त चाणक्य के आगे थर थर कांपता है। कहता है अरे! क्या आर्य को सचमुच क्रोध आ गया!

राजेन्द्र उस समय की नीति ही यही रही होगी।

विजय यह नीति तो मेरी समझ में नहीं आती।

अरे भाई सीधी बात कहो सीधा उत्तर सुनो। लेकिन

यहाँ एक बात में दस भ्रम। सिर खुजलाते रहो पता ही नहीं चलता कौन सा गुप्तचर कहाँ गया, किसने क्या, खबर दी ? किस खबर से किसकी जान गई किसकी बची। और नाम भी क्या रखा है मुद्राराक्षस ! जैसे सब नामों का दिवाला निकल गया हो। नाटक में राजनीति लिखी जायगी। अरे राजनीति की कतर ब्योंत से हम विद्यार्थियों का क्या सरोकार ! बात सोचने की है या नहीं ? इस नाटक में कम्बख्त स्त्री पात्रों का एकदम सफाया। सिर्फ एक ही स्त्री—वह भी ठिकाने की नहीं। कहीं रोमांस की कोई गुंजायश तो निकाली होती।

राजेन्द्र अरे अगर रोमांस की चाशनी लेनी हो तो प्रसाद का स्कन्दगुप्त न पढ़ो। ग्यारह ग्यारह स्त्री पात्र। चाहे जिसे जिस तरह बरगला लो। चाहे जो पर्दा दबाओ एक ही सुर निकलेगा—प्यार किया तो डरना क्या ?

विजय भई इम्तहान के दिन करीब आगए नहीं तो देखना कि हमारे मिलने वालों में से कितने पात्र प्रसाद जी के नाटकों से उतरे हैं। परीक्षा की तैयारी में सभी करेक्टर रोते हुए दिखलाई पड़ते हैं। सुबह याद करो शाम तक दिमाग से गायब। सीधी बात भी उल्टी दीख पड़ती है। मालूम होता है परीक्षा के दिनों में बुद्धि भी शीर्षासन करती है।

राजेन्द्र हम लोगों का रिजल्ट शीर्षासन करे तब बात है। थर्ड डिवीजन वाला सबसे ऊपर। (हँसता है)

विजय तुम्हें हँसी सूझती है। यहाँ अक्ल चक्कर खा रही है। इन नाटकों में एक भी नाटक तैयार नहीं। चारुमित्रा एकांकी तो और भी समझ में नहीं आता। अशोक चारुमित्रा को दण्ड देना चाहता था खुद मात खा गया।

राजेन्द्र मात क्या खा गया ! एक सामान्य सी स्त्री ने उसे ऐसा उल्लू बनाया कि पूछो मत। देखो पृष्ठ ३६ पर स्त्री कहती है—'मैं अब न्याय लेकर क्या करूंगी आओ महाराज मैं तुम्हें राजतिलक कर दूँ। अपने बच्चे के खून का तिलक लगाकर महाराज अशोक चक्रवर्ती अशोक ! रह गए महाराज अशोक चक्रवर्ती अशोक।

विजय भाई राजेन्द्र तुम्हें तो पुस्तकों के पृष्ठ तक याद हैं। यहाँ पुस्तक ही साफ है। नाटक में तीन पुस्तकें हैं। मुख्य चम स्कन्दगुप्त और चारुमित्रा। इन तीनों में से एक भी सही ढंग से दिमाग में नहीं बैठी। अच्छा गेस करो, इम्तहान में क्या-क्या आ सकता है ?

राजेन्द्र क्या आ सकता है ? [सोचता है] क्या बतलाऊँ ? मन नूतन का ध्यान कर आज जो पुस्तक खोली तो मुद्राराक्षस का चौथा अंक निकला कौमुदी महोत्सव वाला। वही आयगा।

विजय वह तो नाश्ट इधर आ चुका है। और अब तो नूतन की शादी भी हो गयी है कोई दूसरा आयेगा।

राजेन्द्र हाँ ! यह भी सही है। तो समझ तो चाणक्य का चरित्र चित्रण।

विजय चाणक्य का चरित्र चित्रण ? हाँ, आ सकता है। अच्छा स्कन्द गुप्त में ?

राजेन्द्र अच्छा स्कन्दगुप्त में भाई इसमें तो मधुबाला का नाम लेकर पुस्तक खोली थी तो भटाक ! भटाक का चरित्र आ सकता है। यह हमारे देश की परम्परा के अनुकूल भी है। शत्रु से मिल जाना-देश से विश्वासघात करना वही आएगा।

विजय हाँ भटाक बहुत दिनों से नहीं आया। और चारुमित्रा में ?

राजेन्द्र अरे चारुमित्रा तो एकाकी-संग्रह है। छोटे छोटे नाटक चाट के

नमकीन दही-बड़ा की तरह। मैं समझता हूँ कि चारुमित्रा या अशोक के समय पर अवश्य प्रश्न आएगा।

विजय तो मतलब यह कि चाणक्य, अटाक, अशोक और चारुमित्रा यही-तीन चार चरित्र खास तौर पर देखने लायक हैं।

राजेन्द्र मैंने भी यही तीन करैक्टर्स तयार किये हैं। मैंने कल प्रोफेसर साहब से उनके नोटस माँगे थे। उन्होंने आठ बजे बुलाया है। उनके नोटस से हम लोग काफी अच्छी तयारी कर लेंगे। कम्बाइंड स्टडी।

विजय (घड़ी देखते हुए) ठीक है तो पौने आठ तो बज रहे हैं।

राजेन्द्र हाँ चला जाऊंगा। आठ और साढ़े आठ में क्या फर्क पड़ता है। प्रोफेसरों की नस्ल बड़ी सीधी-साधी होती है। केले के पत्ते की तरह फटे हुए कपड़ों में भी घूमते रहते हैं। दीन दुनिया के चक्कर से बाहर क्लॉक के पेंडुलम की तरह यूनिवर्सिटी से घर और घर से यूनिवर्सिटी। बस बेचारे खुद अपने को भूल रहते हैं—आठ और साढ़े आठ का क्या ख्याल रखेंगे।

विजय लेकिन काम खूब करते हैं। चाहते हैं दिन में २४ के बदले अड़तालीस घंटे हों। बड़ी-बड़ी किताबें इस तरह निकालते हैं जैसे सुबह हलवाई जलेबी पर जलेबी निकालता है। हाथ घुमाया जलेबी तयार, कलम घुमायी किताब तयार!

राजेन्द्र लेकिन बेचारे कितना पढ़ते हैं तब उनकी कलम से किताब निकलती है।

विजय एक बार एक प्रोफेसर साहब कह रहे थे कि अगर समय-चक्र आगे बढ़ने की बजाय पीछे घूम जाए तो वे जवान होकर न जाने क्या-क्या लिख डालें।

राजेन्द्र समय-चक्र भी कभी पीछे घूम सकता है—कोरी कल्पना! देखो घड़ी की सुइयाँ तो आगे ही बढ़ रही हैं। पौने आठ से

आठ बज रहे है—तो मैं चलूँ। प्रोफसर साहब स नोटस लकर थोडी देर में लौटता हूँ। तुमसे मिल कर जाऊगा। अच्छा भाइ ! टाटा !

विजय टाटा ! तब तक म भा तुम्हारे बतलाये सवाना पर सोचूगा। नीद तो बड जारा से आ रही ह लकिन जागन की काशिश करूगा। म भी समय-चक्र उल्टा घुमा रहा हू ! जागने के स्थान पर साना और साने के स्थान पर जागना !

राजेन्द्र समय चक्र घूम गया ता क्या कहना ह। अच्छा अभा नोटस लाता हू। (प्रस्थान)

विजय देखें कमे नोटस लाता ह राजेन्द्र। (सोचते हुए) समयचक्र (कलण्डर के पास जा कर) प्राफेसर साहब का कल्पना अगर समय-चक्र आगे बढ़ने की अपक्षा पीछे घूम जाए तो-तो परीक्षा के दिन भी काफी दूर हट जाएग—मार्च के बजाय यदि अगस्त सितम्बर हो जाए तो—असम्भव ! (लौटते हुए) राजेन्द्र ने कौन स प्रश्न बतलाए थ—(सोचता हुआ) चाणक्य, अशोक, चारुमित्रा और भटार्क ! (कुर्सी पर बठ जाता है) चाणक्य अशोक चारुमित्रा और भटार्क (जभाई लेकर) नींद जोर से आ रही ह और परीक्षा के दिनो में कम्बख्त आठ बजे से सिर पर मडरान लगती ह। रात दिन पढाई एक मिनिट नहीं सो सका। तीन दिना से बराबर जाग रहा हूँ। पढाई की बात सोची और आँख झपी। और फिर जागन की कोशिश भी कहाँ तक करू ! (अपने को झकझोर कर ठीक तरह से बठता हुआ) हाँ चाणक्य अशोक चारु मित्रा और भटार्क—(फिर जभाई लेकर दुहराता है) चाणक्य ने क्या किया अशोक कहाँ गया चारुमित्रा न कसा आत्म बलिदान किया और भटार्क कैसा देशद्रोही ह ? कम्बख्त

नीं शतान की तरह सर पर सवार है (आवाज नींद से हल्की पड़ जाती है।) चाणक्य—अशोक—चाह मित्रा और भटाक। चाणक्य अशोक चाह मित्रा औ र भट

(आँख लग जाती है और उसका सिर कुर्सी पर एक ओर झुक जाता है। एक क्षण की शान्ति। धीरे धीरे एक पुरुष का प्रवेश। आधा वस्त्र काला और आधा सफेद जिससे भूत और भविष्य का संकेत होता है। सिर के बाल श्वेत लम्बी दाढ़ी। वह गौर से विजय को घूरता हुआ आता है।)

पुरुष (अट्टहास करने के बाद) परीक्षा से डरते हो ? जीवन में न जाने कितनी परीक्षाएं देनी पड़ेंगी। कहते हो समय-चक्र आगे बढ़ने के बजाय पीछे घूम जाए तो परीक्षा के दिन काफी पीछे हट जाएगें। (हंसता है।) परीक्षा के दिन मेरे परीक्षा के दिन तो पास आएगें। मैं समयचक्र हूँ। पीछे कैसे घूम जाऊं बच्चे ? न जाने तेरे जैसे असंख्य बच्चे मन बड़ा करके अतीत के अन्धकार में फेंक दिए। राम कृष्ण ध्रुव भरत अभिमन्यु बुद्ध गान्धी तो तेरे ही देश के बच्चे थे। लेकिन उनका बचपन—उनका बचपन मैं आज भी याद करता हूं। ऐसा किसका बचपन हुआ है ? तू उनका बचपन भूल गया ? कहता है समय-चक्र उल्टा हो जाय। (हंसता है) ह ह ह ह गहरी नींद में है। मेरे हंसने से भी नहीं जागा। अच्छा ! तेरी इच्छा से कुछ देर के लिए मैं अपनी गति उल्टी कर दूं। नींद में ही सही बड़े-बड़े पुरुष देखने को मिलेंगे। थोड़ी देर का परिहास ही सही। अच्छा (आँखें बन्द करता है। एक क्षण बाद) कर दी मैंने अपनी गति उल्टी। यह ईसा की तीसरी शताब्दी है। स्कन्दगुप्त का समय ! यह कौन आ रहा है ?

(सनिक वेश मे एक व्यक्ति प्रवेश करता है)

सैनिक (तनकर) किसी ने मुझे यहाँ स्मरण किया ?

समय चक्र तुम सेनापति भटाक हो ।

सैनिक पहिले पूछने वाला अपना परिचय दे ।

समय चक्र (हँसकर) सेनापति ! फल पेड से ही उसका परिचय पूछे ? मिट्टी का कण पृथ्वी से ही पूछे कि तुम कौन हो ? सुगंधि फूल से ही प्रश्न करे कि अपना परिचय दो ?

सैनिक यह तुम्हारी कविता सुनने का मुझे अवकाश नही । सीधा उत्तर दो तुम कौन हो ?

समय चक्र तुम्हें गति या मति देने वाला समय-चक्र । कल था आज हूँ और कल भी रहूगा ।

सैनिक इतना उत्तर पर्याप्त ह ! मेरे समक्ष आने का साहस तुम्हें कसे हुआ ?

समय-चक्र अपनी सीमा में रहो सैनिक ! तुम भटाक हो ?

भटार्क महाबलाधिकृत के नाम से पुकारो । सम्राज्ञी अनन्त देवि की कृपा से मुझे कोई भटाक नहीं कहता नवीन महाबलाधिकृत का ही विनम्र सम्बोधन करता ह । यदि तुम मुझे केवल भटाक कहोगे तो म तुम्हें युद्ध के लिये ललकारता हूँ ! (तलवार निकालता है ।)

समय चक्र तलवार म्यान में ही रखो । भटाक ! स्कन्दगुप्त से विद्रोह कर पुरगुप्त के जय जयकार में जो तलवार उठी ह वह केवल म्यान में ही शोभा पा सकती ह हाथो में नही । और तुम मुझ से युद्ध करोगे ? तिनका तूफान से लडेगा । समुद्र की लहर समुद्र से सघष लेगी धूमकतु सूय से युद्ध करगा ? समझो कि म समय चक्र ह । मन ही तुम्हें खिलौन की तरह उछाला और तोड दिया ।

भटार्क तुमने मुझे बचा तोड़ा मैं स्वयं टूट गया। किन्तु तुमने पुरगुप्त का साथ दिया इसलिए तुम्हें क्षमा करता हूँ।

समय चक्र यह भी मैं तुमसे कहता रहा हूँ। लेकिन इस उत्तर को जो दूसरी ओर से आ रही है।

भटार्क यह कौन आ रही है! मैं भी देखूँ।

(सावधान होकर देखता है। चारुमित्रा का प्रवेश, उसकी कमर में कृपाण कसी है)

समय चक्र समय के व्यतिक्रम में ईसा पूर्व २६१।

चारु इस स्थान पर मुझे किसी ने स्मरण किया?

समय चक्र एक विद्यार्थी है (संकेत करता है) जो सो रहा है।

चारु इस अबोध बालक ने मेरा स्मरण किया? (प्रश्न-सूचक दृष्टि)।

भटार्क उसी के स्मरण करने पर मैं भी आया।

चारु (भटार्क को देख कर) कौन? सैनिक? तुम कलिङ्ग के सैनिक तो नहीं हो पुरुष?

भटार्क मैं मगध का सेनापति हूँ देवि! महाबलाधिकृत

चारु यदि कलिङ्ग के दुर्भाग्यवश सैनिक होते तो मैं तुम्हें युद्ध के लिए ललकारती। अपनी कुशलता समझो कि तुम मगध के सैनिक हो।

भटार्क मेरी शक्ति में ही मेरी कुशलता सुरक्षित है। किन्तु आप कौन? आपकी कुटिल भौंहों में शक्ति की लकीरें हैं आपके अङ्ग अङ्ग में ज्योति की आकाश गङ्गा है। आप अपना परिचय प्रदान करें देवि!

चारु आप अपना कृपाण निकालें और मेरे कृपाण का उत्तर दें। (तलवार खींचती है) यही मेरा परिचय है।

भटार्क (अभिनय के स्वर में) आप वास्तव में दुर्गा हैं देवि! यदि

आप किसी साम्राज्य की सम्राज्ञी हैं देवि तो मैं आपका सेनापति बनने को प्रस्तुत हूँ। (घुटने टेकता है) अपनी सम्राज्ञी अनन्तदेवी से क्षमा माँग लूँगा। सम्राज्ञी अनन्तदेवी से आप अधिक महान ज्ञात होती हैं देवि !

चारु (आश्चर्य से) सम्राज्ञी अनन्त देवि ?

भटार्क (उठ कर) हाँ देवि ! परम भट्टारक महाराजाधिराज कुमार गुप्त महेन्द्रादित्य की राजमहिषि। वे भी बहुत सुन्दर हैं। बड़ी कृपालु हैं। मैं उनका ही महाबलाधिकृत भटार्क हूँ।

चारु (सोचते हुए) भटार्क ! भटार्क मैं किसी से परिचित नहीं। राजमहिषी देवि तिष्यरक्षिता के अतिरिक्त मैं किसी को सम्राज्ञी नहीं मानती।

भटार्क आप देवि तिष्यरक्षिता को कैसे जानती हैं ?

चारु कैसे जानती हूँ ? वे मेरी स्वामिनी हैं। मैं सम्राट प्रियदर्शी अशोक की अङ्गरक्षिका हूँ। (अपनी उठी हुई तलवार की धार देखते हुए) अङ्गरक्षिका। इस तलवार की धार ने सदैव मेरा साथ दिया है।

भटार्क (अत्यधिक चकित होकर) सम्राट अशोक की अङ्गरक्षिका ! (मुड़कर सोचता है) ईस्वी पूर्व २६१, सात सौ से अधिक वर्षों का व्यतिक्रम ! मैं मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ ? (आँखें मलता है) नहीं सम्भवतः समय-चक्र ने ऐसा ही कहा था ! कैसा कौतुक है।

चारुमित्रा (तलवार देखते हुए) क्या सोच रहे हैं आप ?

भटार्क (आगे बढ़कर) देवि बड़े सौभाग्य से आपके दर्शन पा रहा हूँ। आप चारुमित्रा तो नहीं हैं ? चारुमित्रा सम्राट अशोक की अङ्गरक्षिका ?

चारु यह मेरा सौभाग्य है।

भटार्क (सोचता हुआ) चारुमित्रा मैं धन्य हुआ देवि! आपसे भेंट कर। मन साहित्य और राजनीति में आपकी प्रशंसा में क्या नहीं पढ़ा क्या नहीं सुना? साधु! देवि! साधु! आप तो रति और दुर्गा की सम्मिलित प्रतिमा हैं।

चारु केवल दुर्गा की रति की नहीं।

भटार्क सत्य है देवि! किन्तु यह मैं कैसे मानूं! महाबलाधिकृत के पास कृपाण के साथ नेत्र भी हैं और उन नेत्रों के पीछे एक हृदय भी।

चारु (तीव्र स्वर में) सेनापति! ऐसे नेत्रों को अन्धा कर देना चाहिए ऐसे हृदय को चूर-चूर हो जाना चाहिए। ऐसे नेत्रों और हृदय से महाबलाधिकृत के बाण और कृपाण कुण्ठित होते हैं।

भटार्क (साहस से) देवि! मैं भी आपकी भांति वीर हूँ। अनेक युद्धों में मैंने शत्रुओं के मस्तक इसी कृपाण से काट कर रण चण्डी को भेंट में दिए हैं। रणचण्डी ने मेरे संकेत से युद्ध भूमि में न जाने कितने नृत्य किए हैं। भले ही उनका नृत्य इतना आकर्षक न हो जितना आकर्षक आपका नृत्य

चारु मेरा नृत्य?

भटार्क (विह्वल होकर) ओह उसकी प्रशंसा कौन कर सकता है देवि! मैंने आपके नृत्य के सम्बन्ध में सुना था कि उसकी ध्वनि में आकाश भी चारों ओर से सिमट कर छोटा हो जाता है सरिता का प्रवाह मंथर गति से बहने लगता है और कलियाँ खिल कर फूल बन जाती हैं।

चारु महाबलाधिकृत से कविता (तलवार देखते हुए) दूर ही रहनी चाहिए।

भटार्क देवि! आपके दर्शनों से ही कविता जन्म लेती है आपके नृत्य

से ही कला उत्पन्न होती है। वह सौभाग्यशाली है जो आपके नृत्य की मुद्राएं देखता है।

चारु अपनी सम्राज्ञी (सोचते हुए) क्या नाम बतलाया ?

भटार्क महादेवी अनन्त देवी।

चारु महादेवी अनन्त देवी की अनन्त नृत्य मुद्राओं को देखा है।

भटार्क यह मेरा व्यक्तिगत प्रश्न है देवि ! इस सम्बन्ध में कुछ न पूछें !

चारु तो यह महाबलाधिकृत नृत्य मुद्राओं को देखने को रुचि रखता है। क्या इसी कला से आपको महाबलाधिकृत का पद प्राप्त हुआ ? आपका नाम भटार्क आपके शब्दों से सार्थक नहीं होता।

भटार्क देवि आपकी सब प्रकार की आलोचनाएँ सहन करूँगा।

चारु क्योंकि सम्राज्ञी अनन्त देवी की आलोचनाएं सहन करने का अभ्यास है।

भटार्क नारी के मुख से आलोचनाएं भी अभिनन्दनीय हैं। ये आलोचनाएं आपके नृत्य की भूमिकाएं हों तो मैं

चारु (बीच ही में) चुप रहो सेनापति। तुम केवल आलोचनाएँ ही समझ सकते हो नृत्य की भूमिकाएं नहीं। नृत्य की भूमिकाएँ सम्राट प्रियदर्शी अशोक ही समझ सकते हैं। उनके अनुसार युद्धभूमि में केवल भैरवी का नृत्य होता है।

भटार्क ठीक है देवि !

चारु और उस भैरवी नृत्य में तलवारों का संगीत है नूपुरों का नहीं ?

भटार्क ठीक है देवि !

चारु इसलिए मेरे नृत्य की महानता रण भूमि में है रंग भूमि में नहीं ! जो रण भूमि में नृत्य नहीं कर सकता उसे अंगारों पर

नृत्य करना पड़ता है।

भटार्क अंगारों पर ? जलते हुए अंगारों पर ? ओह देवि ! यह तो भयानक है ! आपने रण भूमि में नृत्य किया देवि !

चारु नहीं कर सकी ! अपनी स्वामिनी की सेवा में गोदावरी तट के शिविर में थी !

भटार्क तो अंगारों पर नृत्य किया होगा ?

चारु यह भी नहीं कर सकी ! हाँ अपना समस्त देह को अंगारों पर रखने का अवसर पाया था। किन्तु महादेवी तिष्यरक्षिता की करुणा से उस सौभाग्य से भी वंचित रही !

भटार्क यह सब बहुत भयानक है देवि !

चारु यह वाक्य मैं महाबलाधिकृत के मुख से सुन रही हूँ ! महाबलाधिकृत भयानकता से डरता नहीं भयानकता को निमंत्रण देता है।

भटार्क इस समय तो आप मेरे सामने हैं देवि ! यदि भयानकता को निमंत्रण न देकर आपके नृत्य को निमंत्रण दूँ तो

चारु (तीव्रता से) सावधान विलासी युवक ! अपने पद की मर्यादा रक्खो। साम्राज्य के साथ अधिक खिलवाड़ न हो। तुम सेनापति हो महाबलाधिकृत हो। तुम्हें तलवार के दर्पण में युद्ध देखना चाहिए तुम नृत्य देखना चाहते हो ? जाओ यह तलवार फेंक कर किसी नगर वधू की रंगशाला में विदूषक बनो छद्मवेशी सेनापति !

भटार्क (रूक्षता से) सीमा से आगे न बढ़ो चारुमित्रा ! मेरी भुजाओं में भी शक्ति की चिनगारियाँ हैं। मेरे नेत्रों में भी अग्नि शयन करती है।

चारु शयन ही करती है जागती नहीं है ! अपने सामन्तों से कहना कि वे रंग शाला के स्तम्भों को ही तलवार देकर सैनिक बना

दें और तुम उन सैनिकों के समक्ष अपनी शक्ति की चिनगारियाँ और नशा की अग्नि की लपटें उठाओ।

(किसी के आने का शब्द होता है। युवक की ओर देखकर) यह युवक अभी सो ही रहा है। सोने वाले युवक और विलास में शयन करने वाले सेनापति समान रूप से मेरी घृणा के पात्र हैं। मेरे पास अधिक समय नहीं। मैं अब जाऊंगी।

भटार्क कुछ क्षण और नहीं रुकेंगी देवि ?

चारु मुझसे युद्ध कर सको तो रुक सकती हूं। किन्तु तुम युद्ध नहीं कर सकोगे क्योंकि तुम्हारे नत्र विलास के विष पात्र हैं। तुम्हारी जननी तुम से लज्जित न हो यही कह कर जाती हूँ। (प्रस्थान)

समय-चक्र (आगे बढ़ कर) चारुमित्रा को युद्ध के लिये नहीं ललकारा महाबलाधिकृत ? यह तलवार खिलौना ही बन कर रह गई ?

भटार्क नारी पर हाथ उठाना वीरों की शोभा नहीं।

समय चक्र किन्तु आप तो चारुमित्रा के प्रश्न का भी उत्तर नहीं दे सके, महाबलाधिकृत ?

भटार्क स्त्रियों की बातें सुनने में जो आनन्द है वह उत्तर देने में नहीं।

समय चक्र पुरुषों को उत्तर दे सकते हो ?

भटार्क उत्तर ही नहीं प्रश्न करने वाले की जिह्वा भी काट सकता हूँ।

समय चक्र तो सँभालो एक प्रश्न करने वाला महापुरुष ही तुम्हारे समक्ष आ रहा है।

(भटार्क नेपथ्य में देखता है। काषाय वेश में अशोक का प्रवेश)

अशोक (तनकर) इस स्थान पर किसी ने मुझे स्मरण किया है ?
समय चक्र यह विद्यार्थी है ! (संकेत करता है)
अशोक विद्यार्थी ? तक्षशिला का है ?
समय-चक्र नहीं ! प्रयाग विश्वविद्यालय का ।
अशोक (देखकर) यह यह तो सो रहा है । तुम परिहास तो नहीं करते ?
समय चक्र सम्राट परिस्थितियाँ भले ही परिहास करें । सम्राट से परिहास करने वाला व्यक्ति आज तक मैंने संसार में उत्पन्न नहीं किया ।
अशोक तुमने उत्पन्न नहीं किया ।
समय-चक्र मैं समय चक्र हूँ सम्राट ! अपनी गति में स्थिर ।
अशोक साधु ! यह विद्यार्थी प्रयाग विश्व विद्यालय का ! इसके मुख पर थकावट के चिह्न हैं ।
समय चक्र स्वप्न में ही यह आपको निमन्त्रण दे रहा है । दिन भर आपका स्मरण करता रहा ।
अशोक इस अबोध बालक ने मेरा स्मरण किया ?
भटार्क इसी के स्मरण करने पर मैं भी यहाँ आया ।
अशोक (भटार्क से) जब तक आज्ञा न दूँ बोलने का साहस न हो । मेरी राज मर्यादा में स्थिर रहो । तुम सैनिक ज्ञात होते हो ।
भटार्क मैं महाबलाधिकृत भटार्क हूँ किन्तु मैं जानना चाहता हूँ— कौन राजा और किसकी राज मर्यादा ?
अशोक यहाँ राजक नहीं है नहीं तो वह तुम्हें समझाता कि कलिङ्ग की वायु जिसके नाम से काँपती है, वह कौन है ?
भटार्क सम्राट अशोक !
अशोक तुम्हें कांपने की आवश्यकता नहीं । मैं अब क्रूर और निर्दयी अशोक नहीं हूँ कलिङ्ग युद्ध के उपरान्त प्रियदर्शी अशोक हूँ ।

बौद्ध धम का चक्र परिवतन मने किया ह ।

भटार्क म आपके इतिहास से परिचित हू ।

अशोक अतरिक्ष की ध्वनि तरङ्गा से म भी तुम्हारे कार्यों स परिचित हू ।

भटार्क तव ता हमलोग अपन अपने युग के अद्वितीय सनिक थे ।

अशोक सावधान ! एक सामाय सा महाबलाधिकृत अपनी तुलना सम्राट से करगा ? यद्यपि मैं बौद्ध हू किन्तु सम्राट हूँ । भटाक तुझे यह साहस कसे हुआ कि अपना नाम मेरे नाम के साथ जाड सके ?

भटार्क सम्राट ! बडे से बडे सम्राट की शक्ति महाबलाधिकृत के ऊपर आश्रित ह । सम्राट-सम्राट नहीं ह यदि महाबलाधिकृत उसके साथ नहीं ह । महाबलाधिकृत की शक्ति ही सम्राट की शोभा ह ।

अशोक मूख भटाक ! सम्राट वही हो सकता ह जो स्वय सनिक हो । तेरा स्वामी स्कन्दगुप्त सम्राट बना क्योकि वह सनिक था । मने हो तून उसके साथ विश्वासघात किया हो ।

भटार्क क्या सम्राट भी स्कन्दगुप्त के षडयन्त्र में सम्मिलित ह ?

अशोक (तीक्ष्णता से) राजमर्यादा पर कलङ्क लगाने वाले देशद्रोही ! साम्राज्य की शिष्टता सीख । तू अपनी तरह सभी को षडयन्त्र म सम्मिलित समझता ह ? अनन्तदेवी ने अपने विनासोत्सव में मूषक को व्याघ्र बना दिया । मुझे दु ख ह कि स्कन्दगुप्त की उदारता ने पुन व्याघ्र को मूषक नहीं बनाया ।

भटार्क सम्राट ! म बलाधिकृत हू । मेरा हृदय शूला लौह फलक सहने के लिए ह क्षुद्र विष वाक्य बाण के लिए नहीं । अपमान का उत्तर देना जानता हूँ ।

अशोक मैं भी जानता हू कि तू किस प्रकार उत्तर दे सकता ह । पुष्य

मित्र ने युद्ध में मुझ सेनापति की पदवी नहीं मिली इसलिए तू अनन्तदेवी द्वारा उठाए गए ताण्ड प्रलय में सम्मिलित हुआ! गुप्त साम्राज्य के हीरों ने से उज्ज्वल हृदय वीर युवकों का शुद्ध रक्त क्या तेरा प्रतिहिंसा राक्षसी का बल नहीं हुआ।

भटार्क सम्राट! वीर के प्रति उचित वार्तालाप होना चाहिए।

अशोक तू वीर है? साम्राज्य के कुचक्रियों का विषकीट! तू अपनी माता कमला का छोटी सी इच्छा भी पूरी न कर सका कि तू देश का सेवक होता म्लेच्छों से पददलित भूमि का उद्धार कर सकता? क्या तू साम्राज्य-लक्ष्मी महादेवी की हत्या के कुचक्र में सम्मिलित नहीं हुआ?

भटार्क मने केवल राजमाता अनन्तदेवी की आज्ञा का पालन किया था।

अशोक और जब हूणों को एक बार ही भारत की सीमा से दूर करने के लिए स्कन्दगुप्त ने समस्त सामन्तों को आमन्त्रण दिया तब मगध की रक्षक सेना के परिचालक होते हुए तूने कुम्भा का बाँध नहीं तोड़ा?

भटार्क सम्राट! अपमान सहन करने की एक सीमा होती है। सम्राट के विरुद्ध मने कोई अपराध नहीं किया। केवल पुरगुप्त को सिंहासन पर बठाने की प्रतिज्ञा से प्रेरित होकर मने यह किया। स्कन्दगुप्त न सही पुरगुप्त सम्राट हो।

अशोक मूर्ख! तू सम्राट निर्माता हो गया! तूने अपनी बुद्धि पर अहंकार का पानी चढ़ाकर अपने को सम्राट से भी ऊँचा मान लिया। तेरी वीरता का दम्भ पाखण्ड की सीमा तक पहुँच गया।

भटार्क सम्राट मुझे प्रपंचबुद्धि की उग्रतारा की साधना में विश्वास हो गया। उसी ने मुझे सिखलाया था कि शत्रु के उपकारों का

स्मरण न कर उससे बदला लेने का उपाय करना चाहिए।

अशोक तो चन्द्र कापालिका की आज्ञा में चलने वाला व्यक्ति अपने को महाबलाधिकृत किस मुख से कहता है।

भटार्क सम्राट ! आप मुझे द्वन्द्व युद्ध के लिए उत्तेजित करते हैं !

अशोक उठा अपना कृपाण ! और मुझ पर प्रहार कर। किन्तु तू प्रहार नहीं कर सकता। मेरी सर्वशक्ति के समक्ष तू निर्बल है। बौद्ध हूँ शपथ ले चुका हूँ कि कृपाण नहीं उठाऊंगा।

भटार्क तो मैं निःशस्त्र सम्राट पर कृपाण नहीं उठा सकता।

अशोक मान गया मेरी शक्ति ! जीवन भर जिसने द्रोह किया वह मेरे समक्ष कैसे खड़ा होगा ? जा चला जा अनन्तदेवी विलास कक्ष में तेरी प्रतीक्षा कर रही होगी। विनाशी कीड़े ! नहीं जानता कि राजनीति जब स्वार्थ लेकर चलती है तो वह देश द्रोहियों की भाषा बन जाती है। मेरे सामने से चला जा।

(भटार्क का प्रस्थान)

कृतघ्न विलासी देशद्रोही (टहलता है)

(दूसरी ओर से वृद्ध और कुरूप पुरुष का प्रवेश)

वृद्ध पुरुष (आते ही) विलासी तुम हो ! देशद्रोही तुम हो !!

अशोक (घूमकर) मैं विलासी मैं देशद्रोही !

वृद्ध पुरुष हाँ अशोक ! तुम विलासी तुम देशद्रोही !

अशोक यह कैसी अमर्यादा (पुकार कर) राजुक !

वृद्ध पुरुष राजुक को पुकारने की आवश्यकता नहीं है ! चाणक्य से बातें करो ! मैं हूँ विष्णु शर्मा चाणक्य ! !

अशोक समय चक्र उलट गया है। आचार्य चाणक्य ! (सोचता है) चाणक्य ! महामंत्री ! मेरे पितामह चन्द्रगुप्त के महामंत्री !

चाणक्य हाँ चाणक्य, तूने सुना नहीं ?

कोलसर्पिणी नन्दकुल क्रोध धूम सी जौन।
मजहूँ बाँधन देत नहिं महो शिखा मम कौन॥
दहन नन्दकुल वन सघन, मति प्रज्वलित प्रताप।
मो मम क्रोधानल पतंग भयो चहत मव पाप॥

अशोक आमात्य चाणक्य को अशोक का प्रणाम।

चाणक्य स्वस्ति अशोक। किन्तु इतना अहंकार ठीक नहीं। भटार्क को विनाशी और देशद्रोही कहने वाला अपनी ओर देख कर विनाशी और देशद्रोही कह।

अशोक आमात्य! आप मेरे पितामह के महामंत्री हैं नहीं तो मेरा क्रोध किस सीमा तक पहुँचता यह जानने के लिए आप जीवित नहीं रहते।

चाणक्य अशोक! तू ने कलिङ्ग पर विजय प्राप्त कर यह समझा कि तुझ जैसा चक्रवर्ती नरेश कोई नहीं किन्तु इतिहास से यह पढ़ ने कि तू राजनीति की परिभाषा भी नहीं जानता! यदि राजनीति से किञ्चित भी परिचित होता तो तेरी मृत्यु के पश्चात तेरा राज्य खण्ड-खण्ड न हो जाता। चरमसीमा की क्रूरता और चरमसीमा की करुणा राजनीति नहीं है।

अशोक तो राजनीति यह है कि नन्दवंश का अकारण विनाश कर दिया जाय? व्यक्तिगत मान और अपमान को लेकर एक क्रोधी ब्राह्मण समस्त राजवंश का नाश कर दे? इसे तुम राजनीति कहते हो महामात्य!

चाणक्य मूर्ख हो तुम सम्राट! देवानांप्रिय इति मूर्ख। चन्द्रगुप्त ने भी कौमुदी महोत्सव की घोषणा कर मूर्खता की थी। उसका निषेध कर मैंने पाटलीपुत्र की रक्षा की। तुम्हारे समय में यदि मैं होता तो कलिङ्ग युद्ध नहीं हो सकता था। तीन लाख भारतीय वीरों की मृत्यु न होती और देश दुर्बल न होता।

कलिङ्ग युद्ध तुम्हारे इतिहास का कलङ्क है।

अशोक तुम नहीं जानते, महामात्य! कलिङ्ग अपने को सम्राट मानता था। पाटलिपुत्र जैसे उसके समक्ष एक जनपद मात्र था। सुमात्रा और जावा में उसने अपने उपनिवेश स्थापित कर रक्खे थे। जलयानों में विहार करता था और समझता था कि वह आर्यावर्त का सम्राट है। मेरे शासन को स्तूप बनाकर रोकना चाहता था। समझता था कि वह इन्द्र का वंशज है। मैंने अपनी सेना के हाथों उसके अहंकारों के पौधों को उखाड़ कर फेंक दिया।

चाणक्य किन्तु वह राजनीति नहीं थी।

अशोक राजनीति और अहंकार में अन्तर है महामात्य। राजनीति पाटलिपुत्र का अधिकार था और अहंकार कलिङ्ग की वृत्ति! उसे अपनी सेना का अहंकार था। अहंकार का विनाश करना राजनीति का पहिला पाठ है। तुम अर्थशास्त्र की रचना भले ही कर चुके हो परन्तु—

चाणक्य सावधान! बौद्ध! मेरे अर्थशास्त्र का एक अक्षर भी तू नहीं समझता! सेना का अहंकार किस सम्राट को नहीं होता? सिकन्दर को अपनी सेना का अहंकार कितना था? वह विश्व विजय का स्वप्न देख रहा था किन्तु तू जानता है कि सिकन्दर सतलज के आगे नहीं बढ़ सका। यह मेरी ही राजनीति थी कि बिना युद्ध किए सिकन्दर को उलटे पैरों भागना पड़ा। चन्द्रगुप्त के पास कितनी सेना थी? सिकन्दर फूंक मार कर चन्द्रगुप्त की सेना को उड़ा सकता था किन्तु मेरी राजनीति ने उसी की फूंक से उसकी सेना उड़ा दी। सिकन्दर के भारत अभियान में देश के वीरों का कितना रक्तपात होता! मैंने बिना रक्तपात किए ही सिकन्दर को पराजित किया। इसी तरह

तू भी बिना रक्तपात किए कलिङ्ग विजय कर सकता था ।

अशोक किन्तु महामात्य ! तुम भूल जाते हो कि सिकन्दर विदेशी था वह यहाँ की परिस्थितियों से अपरिचित था—कलिङ्ग नरेश हमारे ही देश का था—वह हमारे गुण अवगुण सब समझता था ।

चाणक्य महामन्त्री राक्षस भी हमारे गुण अवगुण जानता था । वह भी हमारे देश का था किन्तु उस जैसे नन्द के भक्त को चन्द्रगुप्त का भक्त बनना पड़ा ।

अशोक तो तुम कलिङ्ग विजय कैसे करते ? मैं यह भी सुनूं !

चाणक्य सुनो और उसे कभी मत भूलो । कलिंग नरेश यदि विलासी होता तो विषकन्या भेजता यदि वीर होता तो चार वधिकों से उसका वध करा देता और देश के तीन लाख वीरों को मृत्यु से बचा लेता ।

अशोक यह कूटनीति है राजनीति नहीं ।

चाणक्य राजनीति बुद्धि पर आश्रित है बुद्धि रहस्य का अन्वेषण करती है और रहस्य प्रकट नहीं है । इस तरह रहस्य पर विजय पाने के लिए जब राजनीति अग्रसर होती है तो उसे कूटनीति की संज्ञा दी जाती है । बताओ सम्राट ! तुमने चारुमित्रा को अंगारों पर नाचने की आज्ञा दी ?

अशोक अवश्य दी ! और इसलिए दी क्योंकि वह मेरे युद्ध के उत्साह में कोमलता भरने वाली थी । वह कलिंग बालिका थी—वह मुझे युद्ध से रोकना चाहती है । कलिंग का शरीर कलिंग का ही साथ देता है ।

चाणक्य तुम भूल गये अशोक ! तुम्हें चारुमित्रा को दण्ड नहीं देना चाहिए था ।

अशोक (प्रश्न की मुद्रा में) दण्ड नहीं देना चाहिए था ?

चाणक्य नहीं उससे प्रेम करना चाहिए था ।

अशोक प्रेम ?

चाणक्य हाँ प्रेम ! चन्द्रगुप्त ने भी कार्नेलिया से प्रेम किया था। और ग्रीस सनिकों का आक्रमण सदव के लिए रोक दिया था।

अशोक किन्तु मेरे समक्ष तिष्यरक्षिता थी।

चाणक्य और विदिशा की महादेवी नहीं थी—महेन्द्र और संघमित्रा की माता ! फिर महादेवी के रहते हुए तिष्यरक्षिता क्या और क्स आई ? तुम विलासी थे अशोक ! स्वीकार करो और साथ साथ भयानक भी थे।

अशोक भयानक ? कलिंग विजय के पश्चात् मन हिंसा का परित्याग किया था महामात्य ! मने आचाय उपगुप्त के समक्ष तलवार फेंककर प्रण किया था—महाभिक्षु ! आज से म हिंसा किसी रूप में नहीं करूंगा ! और देखूंगा कि मनुष्य का रक्त इस पथ्वी पर न पड़े। प्रत्येक स्थान पर सिंहासन पर अन्त पुर में विहार म म जनता की सेवा करूंगा। आज से मेरा महान कत्तव्य होगा कि म सब जीवों की रक्षा का अधिक से अधिक प्रबन्ध करू। मने अपने आदशों को शिलालेखों में लिखवाकर समस्त आर्यावत्त में प्रचार किया कि अशोक आज से उनकी रक्षा करने वाला उनका बन्धु हू।

चाणक्य फिर जनता की सेवा और जीवों की रक्षा के लिए तुमने राज पद क्यों नहीं छोड़ा ? बौद्ध भिक्षु और संन्यासी बन कर शासन क्यों करते रहे ?

अशोक इसलिए कि राज्य संरक्षण भी मेरा धम था।

चाणक्य अपने उत्तराधिकारी को राज्य सौंप कर तुम तथागत की भांति विहारों में उपदेश करते ! चत्यों में बौद्ध भिक्षुओं को सगठित करते संन्यासी बनकर भी शासन ! (अट्टहास करता है) संन्यासी और शासक ! विश्व में एकमात्र उदाहरण ! (फिर

अट्टहास करता है) सम्पातिया के उपदेश और राजनीति का वक्तव्य ! धम्मवशी अशोक ! स्वीकार करो कि तुम राजनीति क्या साधारण समाजनीति का एक अक्षर भी नहीं जानते थे। सम्राट अशोक देवानाम प्रिय प्रियदर्शी सम्राट अशोक ! जाओ ! कुणाल के प्रेम में निराश होकर तुम्हारे दण्ड की आग में जल कर भी तिष्यरक्षिता तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है।

(अशोक का शीघ्रता से प्रस्थान)

चाणक्य (आप ही आप) युग के विलोम ! यदि किसी सूत्र से इनका एक हाथ ऊपर उठ गया तो मैं समझता हूँ कि हम समस्त भूमण्डल को अभय दान दे सकते हैं। युग के अहंकार से पूर्ण धूमकेतु जो ध्रुव नक्षत्र को भी अपने प्रकाश से तुच्छ समझता है।

(समय चक्र का प्रवेश)

समय चक्र महामंत्री आर्य चाणक्य ! तुम्हें प्रणाम करता हूँ।

चाणक्य स्वस्ति ! जब अशोक मेरे समक्ष आया तो मैं समझ गया कि यह तुम्हारा ही परिहास है। समय चक्र ! तुमने मुझे लगभग ६०० वर्ष पूर्व लौटा दिया। अशोक को लगभग ७०० वर्ष बाद के भटाक से मिला दिया। तुम महान हो समयचक्र ! मैं यहाँ नहीं आना चाहता था किन्तु किसी ने मुझे स्मरण किया था।

समय चक्र स्मरण करने वाला यह विद्यार्थी है महामंत्री ! इसके परीक्षा के दिन समीप हैं। किन्तु अध्ययन की तैयारी नहीं है। यह चाहता था कि यदि समय चक्र की गति उल्टी हो जाय तो इसे परीक्षा के दिन और भी मिल जाएँगे। उसे भटाक अशोक और आपके चरित्र का अध्ययन करना था। मैंने थोड़ी देर के लिए इसके अनुभव में अपनी गति उल्टी कर दी। उसी के

मनोविनोद से आप मन खिचकर चले आए।

चाणक्य यह विद्यार्थी है ? विश्वास नहीं होता समय चक्र कि यह शरीर ! यह स्वास्थ्य ! ज्ञात होता है कि इसे वर्षों से भोजन नहीं मिला। निरुत्साह, निकृष्ट। यदि विद्रोह करना चाहे तो विद्रोह भी नही कर सकता। यह भटाक से भी गया बीता है।

समय चक्र किन्तु यह आपके वाक्यों का बड़ा सुन्दर पाठ करता है। कौमुदी महोत्सव के अवसर पर चन्द्रगुप्त के प्रति आपके छल क्रोध का अभिनय अच्छे ढंग से करता है।

चाणक्य अभिनय ही करता है। सत्य की बात नहीं करता। मेरे आर्यावर्त के विद्यार्थियों का ध्येय अभिनय मात्र ही रह गया है! समय-चक्र! मुझे स्मरण आता है जब मैं तक्षशिला का विद्यार्थी था। एकमात्र विद्याध्ययन करना ही मेरा ध्येय था। एक एक क्षण में शस्त्र और शास्त्र की आराधना! यह विद्यार्थी शक्ति और शास्त्र की आराधना करेगा ? एक ही शिक्षा केन्द्र तक्षशिला देश विदेश के पन्द्रह सहस्र विद्यार्थी।

समय चक्र वह युग ही दूसरा था महामात्य !

चाणक्य तुम्हें स्मरण होगा समय चक्र ! एक बार चीन से एक जन्मान्ध राजकुमार आया था मैंने चिकित्सा शास्त्र का भी अध्ययन किया था। एक मास की चिकित्सा में ही मैंने उसे दृष्टि प्रदान की थी। मेरी कितनी इच्छा है कि मैं आर्यावर्त के आधुनिक विद्यार्थियों को भी सच्ची दृष्टि प्रदान करूं !

समय-चक्र आप इन्हें दृष्टि प्रदान भी कर दें तो कोई लाभ नहीं होगा। महामंत्री इनकी दृष्टि निर्बल है और बार बार चित्रपटों को देखने से इनकी दृष्टि पुनः क्षीण हो जाएगी।

चाणक्य चित्रपट ! चित्रपट क्या ? अपने गुप्तचर निपुणक को मैंने योगी का वेश धारण कराया था और वह लोगों के मन का

भे" सेने के लिये यम पर प्रथात् यम का चित्र लिये घूमता हुआ गाता था। कहता था—

मोर देव का नाम नहिं जन का मेरा प्रनाम।
जो दूजन के भक्त का प्रान हरत परिनाम।

समय-चक्र यह बीसवीं शताब्दी की उपलब्धि है। जीवन के चित्रों को कथा के रूप में सुसज्जित कर मन से उन्हें गति दी जाती है। अंधकार से भरे कक्ष में प्रकाश से एक पट पर चित्र दिखाए जाते हैं। इसमें हृदय को स्पर्श करने वाला संगीत भी रहता है।

चाणक्य संगीत का प्रयोग तो राक्षस ने भी किया था जब वह मेरे और चन्द्रगुप्त के बीच में भेदभाव उत्पन्न करना चाहता था।

भरे केवल बहु गहना पहिरि
राजा होय न कोय।
भ्रहा जाको नहिं आज्ञा टरे
सो नृप तुम सम होय॥

समय चक्र ऐसा संगीत चित्रपट में बहुत कम है। अधिक प्रेम का संगीत होता है जिससे छोटे छोटे बच्चे भी प्रेम करना सीख जाएं।

चाणक्य छोटे छोटे बच्चे प्रेम करें? क्या कहते हो समय चक्र? यदि जीवन का प्रारम्भ ही प्रेम की वासना से हुआ तो फिर जीवन का लक्ष्य क्या है जीवन की साधना क्या है?

समय चक्र विलास और सम्बन्ध विच्छेद।

चाणक्य राष्ट्र का भविष्य विलास में नहीं है समयचक्र! तुम फिर मुझे एक बार अवसर देते तो मैं इस पथभ्रष्ट समाज को सीधे रास्ते पर लाता। पृथ्वी से उठते हुए अन्तरिक्ष में मैंने एक पंक्ति बार-बार सुनी है।

प्यार किया तो डरना क्या?

मैं पहिले समझा, भारतवर्ष कह रहा है—

वार किया तो डरना क्या ?

मैं प्रसन्न हुआ कि भारत के वीर कितने निर्भीक हैं, किन्तु जब प्यार का नाम बार-बार सुना तो समझा कि भारत अपना रास्ता भूल गया है।

(नेपथ्य में स्वर)

विजय ! विजय !

चाणक्य यह किसका स्वर है ? विजय ! विजय ! यह किसकी जय-जय कार कर रहा है ?

समय चक्र अब जय जयकार केवल नामों में रह गया है कामों में नहीं। विजय इस विद्यार्थी का नाम है।

चाणक्य इस शरीर और निद्रा से यह विद्यार्थी अपने विजय नाम को सार्थक करेगा ?

(नेपथ्य में फिर स्वर)

विजय ! विजय !

समय चक्र अब हमें चलना चाहिए। इसकी निद्रा में मैंने अपनी गति उल्टी कर ली थी। मेरा विनोद समाप्त हुआ। अब हम चलें।

चाणक्य चलने से पहिले मैं अपने देश के लिए क्या करूँ केवल मंगल की कामना ही कर सकता हूँ।

समय चक्र तथास्तु ! चलिये महामन्त्री !

(दोनों का प्रस्थान)

(नेपथ्य में फिर शब्द) विजय ! विजय !

(राजेन्द्र का प्रवेश)

राजेन्द्र (बोलते हुए प्रवेश) विजय ! विजय ! अरे यार जब तक मैं प्रोफेसर साहब के नोटस लेने गया तब तक तुम सो गए ?

(विजय को झकझोरता है। विजय आँखें मलता हुआ

उठता है)

विजय कौन ? राजन्द्र ? अरे चाणक्य (रुक रुक कर) अशोक और भटाक कहाँ गए ? अभी तो यहीं थे !

राजेन्द्र (अट्टहास कर) परीक्षा में आने वाले चरित्र चित्रण को तुमने इतना रटा कि उसका सपना ही देखने लगे ?

विजय वह मेरा सपना था ? अरे सब यहाँ थे ! भटाक को चारुमित्रा और अशोक न फटकारा और अशोक को चाणक्य ने ।

राजेन्द्र अरे वह अलग अलग काल के व्यक्ति थे सब एक साथ कसे ?

विजय मैंने कहा था न कि यदि समय चक्र लौट जाए तो परीक्षा दूर हो जाएगी । वही हुआ—समय-चक्र उलटने लगा । पहिले भटाक दिखा फिर चारुमित्रा तथा अशोक फिर चाणक्य—और फिर सब चले गए ।

राजेन्द्र तुमने अच्छा खासा मजेदार सपना देखा ! कुछ समझा उन लोगों को ?

विजय सच कहता हूँ राजन्द्र ! एक एक पात्र, उसकी राजनीति सब समझ में आ गई !

राजेन्द्र अच्छा यह बात है । तो एक काम करो सब पुस्तकों के सपने देख डालो और सपने में ही परीक्षा भी दे डालो !

विजय तुम मजाक मत करो राजेन्द्र ! यह स्वप्न क्या प्रत्यक्ष था । एक एक बात !

राजेन्द्र बहुत मजाक हो गया विजय ! समय की जाति आग ही बढ़ गई लौटने के बजाय ! देखो घड़ी में नौ बज रहे हैं । परीक्षा के समय में एक घंटा और कम हो गया ।

विजय मेरी समझ में कुछ नहीं आता !

राजेन्द्र समझ में क्या आएगा ? आओ प्रोफेसर साहब के नोटस देखें । बड़ी मुश्किल से उधार लिए । पहिले तो वह रहे थे न जाने

मन कहाँ रख लिए हैं। जब दस बार नाक रगड़ी तब बड़ी मुश्किल से खोज कर लिया।

विजय तो क्या मैं काफी देर सोया ?

राजेन्द्र लगभग आध घंटा ! चलो, परीक्षा के दिनों में नींद को ऐसे छोड़ देना चाहिए—जैसे मुगलेआज़म का मैटिनी शो।

विजय (सोचते हुए) प्यार—किया—तो—डरना क्या ? (धीरे धीरे) इसे होना चाहिए वार किया तो डरना क्या ?

राजेन्द्र अच्छा ! यह आपका संशोधन है। फिल्म कम्पनी को लिख कर भेज दो। लेकिन अगर वार करना है तो पहिले प्रोफेसर साहब के नोटस पर करो।

विजय (स्वप्नवत देखते हुए) अच्छा भाई यही सही।

राजेन्द्र लेकिन भाई वार करने में प्रोफेसर साहब के नोटस सही सलामत रहें। अगर हमने आज रात बस मे पढ़ाई कर ली तो कल किसी भी पिक्चर का मैटिनी शो मेरे जिम्मे रहा।

विजय अब कोई शो नहीं देखूँगा राजेन्द्र !

राजेन्द्र अरे पागल ! शो नहीं देखेगा तो जिन्दगी का प्लाट सीजन का इन्सपिरेशन कहाँ से मिलेगा ?

यह गीत तो मेरे कलेजे में बस गया है—

प्यार किया तो डरना क्या ?

(गीत के स्वर गूँजते हैं, और धीरे धीरे पर्दा गिरता है)

पानीपत की हार

पात्र

बाळाजी
जनकोजी
भास्कर
स्त्री
द्वारपाल
कासिद
राजगुरु
नाना

ताप्ती नदी के पास बुरहानपुर
सध्याकाल—२० जनवरी, सन् १७६१

बुरहानपुर मे बालाजी बाजीराव का शिविर । पानीपत के भीषण युद्ध की आशका म वे पूना से चल कर ताप्ती के किनारे बुरहानपुर तक आ गये हैं । एक ऊँचा और विस्तृत तम्बू है जिसमे रेशम और सोने के तारों की झालरें लगी हैं । रग बिरगे परदे । फर्श पर रेशमी बिछावन, जिन पर सोने का काम किया गया है ।

मध्य में एक ऊँचा सिंहासन है । उससे हटकर छोटे छोटे आसन हैं किन्तु इस समय जनकोजी भोंसले और भास्करराव अपने आसनों के समीप खडे हुए हैं । बालाजी बाजीराव अशान्त होकर टहल रहे हैं ।

चारों ओर एक निस्तब्धता छाई है । पश्चिम के सूय की हल्की सुनहली किरणें बाइ ओर से शिविर में प्रवेश कर रही हैं । बालाजी बाजीराव एक क्षण ठहरकर जनकोजी भोंसले को सम्बोधित करते हैं ।

बालाजी (अशान्ति से टहलते हुए एक क्षण रुककर) राज्यश्री का अपमान ! क्या यह सत्य नहीं ह कि सदाशिव राव भाऊ ने दिल्ली में राज्यश्री का अपमान किया ?

जनकोजी समाचार तो यही ह, श्रीमन्त !

बालाजी जसे कोई पागल दपण में अपना मुख देख कर उस दपण को ही चूर-चूर कर दे ! कोई मतवाला हाथी अपने ही महावत को परो से कुचल दे ! कोई मूख सुगन्धि फैलाने के लिए फूलो की माला हाथो में मसल दे ! यह किस बुद्धि का कमव ह ? कल के समाचार का एक-एक शब्द एक भटकी हुई चिनगारी ह जिससे महाराष्ट्र के वैभव में आग लग सकती ह ।

भास्कर शान्त हों श्रीमन्त ! आपकी राजनीति का सागर किसी भी

अग्नि को बुझा सकता है।

बालाजी भास्कर! वास्तविकता समझो—यह बलि-पशु का सतोष ह जिसके भविष्य में एक नगी तलवार ह। सदाशिव राव भाऊ न दिल्ली पर विजय प्राप्त की। राजधानी में प्रवश करत ही उनकी धन की तृष्णा इतनी बढ़ गयी कि उन्होंन राजसिंहासन के स्वण शृगार को गलवा डाला! चाँदी की छत उखाडकर उसके सिक्के ढलवा डाल! मरे राजकोष स वे दो करोड सिक्के ल गय थे! व सब क्या हुए?

जनकोजी यह भी समाचार ह श्रीमन्त! कि उन्होंन राजस्थान के नरशो से तीन करोड सिक्के और भी प्राप्त कर लिय थे।

बालाजी इतनी धन राशि के होते हुए फिर राज सिंहासन की मर्यादा नष्ट करन की क्या आवश्यकता थी? जनकोजी! क्या तुम नहीं देखत कि दिल्ली की राजलक्ष्मी नत्रो में आँसू भरकर हमार सामन खडी ह? वह सिसकत हुए शब्दो से कह रही ह कि म महाराष्ट्र के हाथो में नहीं उन लुटरो के हाथों में पड गयी हू जो राज मर्यादा नहीं जानते। जिस सिंहासन पर महाराष्ट्र का साहसी सनिक हमारा बडा विश्वासराव बठता उसका सोना उखाड दिया जाय! राज भवन की रूपहली छत तोड दी जाय! यह कौन सी राज-मर्यादा ह! राजधानी की राजलक्ष्मी की यह वाणी क्या सत्य नहीं ह?

जनकोजी सत्य ह श्रीमन्त!

बालाजी तो फिर महाराष्ट्र को इसका क्या प्रायश्चित्त भोगना होगा? भगवान गजानन से पूछो। उदगर के युद्ध में सदाशिव राव भाऊ न निजाम अली को पराजित कर दौलताबाद असीरगढ और बीजापुर के दुग लिय और ६२ लाख की वार्षिक आय प्राप्त की। इसी विजय का यह अहकार ह जिससे भाऊ

उत्तर भारत की रातनीति को खिलौन की भाँति तो॰ रहा ह और महाराष्ट्र की मयाग कलङ्कित हो रही है।

जनकोजी श्रीमन्त ! मुझे आज्ञा दें म अपनी सेना लेकर उत्तर भारत की ओर बढ़ूं। श्रीमन्त भाऊ के अमर्यादित काय से भरतपुर के महाराज सूरजमल अपनी तीस हजार सेना लेकर भरतपुर लौट गये और इन्दौर के होल्कर तटस्थ हो गये।

बालाजी और भाऊ न उन्हें रोकन का प्रयत्न नहीं किया ?

भास्कर श्रीमन्त ! भाऊ ने ही तो दोनो का अपमान किया। जब हमारी सेना राजसी वभव क साथ—बड़े-बड़े तोपखानो खेमा और सनिको की स्त्रिया और बच्चा के साथ—धीरे धीरे आगे बढ रही थी तो महाराज सूरजमल और महाराज होल्कर ने श्रीमन्त भाऊ को सलाह दी थी कि सनिका के परिवारा और भारी खेमा को ग्वालियर या झासी में छोड दिया जाय और हल्के सामान के साथ सेना फुर्ती से आगे बढ़े तब श्रीमन्त भाऊ ने दोना नरशो का अपमान कर दिया।

बालाजी अपमान कर दिया ? किस भाँति ?

भास्कर श्रीमन्त भाऊ न होल्कर नरश से कहा कि तुम्हारे पूवज बकरी भेड चरात रह ह ता यह सना गडरिया की नही ह जो बनजारा की भाति चले ! भरतपुर-नरश से कहा कि तुम जाट हो। जाटो म इतनी बुद्धि कहाँ कि व राजनीति और वभव की बात समझ सकें ! यह बात सुनकर दोना ही रुष्ट हो गय। भारतपुर नरेश तो रणक्षेत्र से अपनी सेनाएँ भी हटा ले गय !

बालाजी घोर अदूरदर्शिता ! यह सब एसे अवसर पर हुआ जब हम पानीपत की युद्धभूमि पर अहमदशाह अब्दाली की शक्ति को सदव के लिए कुचलने का आगे बढ रहे ह। सदाशिव राव भाऊ से मुझे पहिले से ही आशका थी किन्तु उनका अहकार इस

सीमा तक बढ़ जाएगा, इसकी कल्पना नहीं थी। नाना फड़न-वीस को भी गहरा धक्का लगा है। कहीं इस हमारे आत्मसम्मान पर भी संकट न आ जाए।

भास्कर एक बात पर और भी विचार करें श्रीमन्त! दिल्ली जीतने पर श्रीमन्त भाऊ ने दिल्ली के शाह आलमगीर को हटाकर महाराष्ट्र के चिरंजीव विश्वासराव को दिल्ली का सम्राट घोषित कर दिया। चिरंजीव तो सम्राट होते ही किन्तु इतनी शीघ्र घोषणा करना ठीक नहीं हुआ। इस घोषणा से अवध के नवाब शुजा उद्दौला और दूसरे मुसलमान सरदार जो हमारे सहायक रहे हैं वे सब मन ही मन असंतुष्ट हो गए हैं। इस समय तो हमें मुसलमानों की सहानुभूति भी चाहिए।

जनकोजी किन्तु भास्करराव! अधिक चिन्ता की बात नहीं है। श्रीमन्त भाऊ के साथ बीस हजार सवार दस हजार पैदल और इब्राहीम गारदी का तोपखाना भी है। सिंधिया की फौजें भी हैं।

बालाजी किन्तु साथ में अहंकार और अदूरदर्शिता भी तो है। यह महाराष्ट्र का स्वभाव नहीं है जनकोजी! छत्रपति शिवाजी ने भी आलमगीर औरंगजेब से लोहा लिया। बड़ी से बड़ी फौजों के मुकाबले में उन्होंने जैसी दूरदर्शिता दिखलायी वैसी इतिहास में कहाँ है? अफजल खाँ जैसे चालाक और कूटनीतिज्ञ सरदार को एक क्षण में समाप्त कर देना छत्रपति का ही काम था। औरंगजेब के चक्रव्यूह से निकल आना इतिहास की अद्वितीय घटना है। लेकिन भाऊ सदाशिव राव छत्रपति शिवाजी का उदाहरण नहीं समझ सके।

जनकोजी अधिक चिन्ता न करें श्रीमन्त! पानीपत के युद्ध में हमारी ही विजय होगी। त्र्यम्बक सदाशिव पुरन्दरे हमारी सेना के बड़े कुशल सेनापति हैं। साथ ही विट्ठल शिवदेव विंचूरकर,

शमशेर बहादुर बलवन्त गजानन मेहन्दले एक से एक चुने हुए वीर सेना के साथ है। महाराष्ट्र की शक्ति बडे से बडे अहकार से नष्ट नही हो सकती। फिर साथ में श्रीमन्त के चिरजीव विश्वासराव भी तो है। यद्यपि वे केवल उन्नीस वर्ष के है किन्तु उनके सामने बडे से बडे वीर के भी पैर उखड जाते है।

भास्कर वे तो मेरे बचपन के साथी रहे है श्रीमन्त! उनकी वीरता तो ऐसी है कि वे एक साथ दस सनिको से लड सकते है।

बालाजी (गहरी सांस लेकर) विश्वासराव—महाराष्ट्र के आदर्शों की रक्षा करने में समर्थ! इसी विश्वास से उसका नाम राजगुरु ने विश्वासराव रक्खा। भाऊ सदाशिव राव चाहते थे कि पानीपत के युद्ध में उसे न भेजा जाय। वह बालक है। किन्तु मैने ही उसे जाने का आदेश दिया। मैंने कहा कि महाराष्ट्र के बालक युद्धभूमि में ही बडे होते है। उनकी तलवार रणक्षेत्र में ही भवानी के कृपाण से शक्ति प्राप्त करती है। उनका रक्त तभी सार्थक होता है जब वह अपने रक्त से रणभूमि का अभिषेक करे।

जनकोजी वे तो श्रीमन्त! शत्रुओ के रक्त से रणभूमि का अभिषेक करेंगे। फिर आपके आदेश से राजस्थान के सभी नरेश श्रीमन्त भाऊ की सहायता कर रहे है। जसे ही श्रीमन्त भाऊ चम्बल पार कर आगे बढे कि जनकोजी सिंधिया, दामाजी गायकवाड, जसवन्तराव पोवार, अप्पाजी आठावले अन्ताजी मनकेश्वर और गोविन्दराव बुन्देले अपनी अपनी सेना लेकर उनसे मिले है। हमारी सैन्य शक्ति अपार है श्रीमन्त!

बालाजी यह पानीपत का युद्ध है, जनकोजी! इसी में महाराष्ट्र के भाग्य का निर्णय है। अफगानिस्तान का अहमदशाह अब्दाली महाराष्ट्र का उत्कर्ष सहन नहीं कर सकता। इसीलिए वह

अवसर देखकर आता है। और मैं कहता हूँ कि शत्रु को अवसर देना ही राजनीति की सबसे बड़ी भूल है। तुम जानते हो जनकोजी! शत्रु के आने का अवसर क्या है? अवसर है हमारी परस्पर की फूट! जब हम छोटी-छोटी बातों पर राष्ट्र की इकाई भूल जाते हैं तब हम जंगली जानवरों की तरह अपनी-अपनी माँदें अलग बनाते हैं और व्याघ्र हमें एक-एक कर समाप्त कर देता है।

जनकोजी सत्य है श्रीमन्त!

बालाजी सदाशिव राव भाऊ यही भूल करते हैं। उन्होंने अपनी ही पंक्ति में फूट कर दी और अहमदशाह अब्दाली व्याघ्र की तरह महाराष्ट्र पर टूटना चाहता है।

भास्कर मुझे विश्वास है वह घेर कर मारा जायगा श्रीमन्त!

बालाजी युद्ध और वर्षा के बादलों पर विश्वास कैसा? आग और पानी कब किस ओर बरस जाय, कौन जानता है भास्कर! यद्यपि हमारी सैन्य शक्ति महान् है किन्तु हृदय में अनेक प्रकार की शंकाएँ सर्प की भाँति चल रही हैं। पानीपत का नाम एक फूत्कार की भाँति हृदय में गूँज रहा है। आज भगवान गजानन की आरती दो बार बुझी! कहीं महाराष्ट्र की आरती के दो दीप न बुझ गये हों।

जनकोजी शत्रुओं के दो वीर मारे गये होंगे श्रीमन्त! आप आज्ञा दें तो दस हजार सैनिक लेकर मैं भी पानीपत की ओर प्रस्थान कर दूँ।

बालाजी तुम नहीं, मैं जाऊँगा जनकोजी! समाचार जानने की उत्सुकता में पूना से यहाँ बुरहानपुर तक आ ही गया हूँ। नर्मदा पार कर शीघ्र ही दिल्ली पहुँचना चाहता हूँ। नाना फड़नवीस में भी मेरा मन लगा हुआ है। उसका न जाने क्या हाल होगा!

उसके प्राण का दायित्व भी हम पर है।

भास्कर आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं है श्रीमन्त! जनकोजी को ही जाने की अनुमति प्रदान करें। वे वहाँ से शीघ्र ही विजय का समाचार लावेंगे।

बालाजी (सोचते हुए) विजय ... विजय ... राज्यश्री के अपमान पर विजय! ... पवित्र में पट होने पर भी विजय!

(बाहर किसी के क्रन्दन की ध्वनि। सिसकियाँ क्रमशः अधिक जोर से सुनाई पड़ती हैं।)

बालाजी (चौंककर) यह कैसा क्रन्दन? (भास्करराव से) भास्करराव! बाहर जाकर देखो।

भास्कर (सिर झुकाकर) जैसी आज्ञा श्रीमन्त! (शीघ्रता से प्रस्थान)

बालाजी आज प्रातःकाल जब भगवान् गजानन की आरती हवा के तीव्र झोंके से बुझ गई तभी शंका का विष मेरे हृदय में फैलने लगा था कि पानीपत से आता हुआ समाचार भी कहीं मेरी आशा की आरती न बुझा दे! (सिसकियाँ तीव्रता से सुनाई देती हैं) यह कौन स्त्री है?

(शिविर के बाहरी दरवाजे से एक स्त्री शीघ्रता से भास्करराव के साथ आती है। वह विह्वलता में बालाजी बाजीराव के चरण पकड़ लेती है।)

स्त्री (सिसकियाँ लेते हुए) पांडुरंग ... पांडुरंग चला गया। श्रीमन्त! युद्ध में ... युद्ध में मारा गया ... मेरा पांडुरंग ... (सिसकियाँ लेकर) मेरा अकेला लाल ... पांडुरंग मुझे छोड़कर ... चला गया। (सिसकियाँ जोर-जोर से लेती है।)

बालाजी (संतोष के स्वरों में) पांडुरंग चला गया? मातृभूमि पर रक्त की बूँदें भी चढ़ती हैं देवि! आँसू की बूँदें नहीं! उठो। (भास्कर से) भास्कर! यह कौन स्त्री है?

भास्कर सेनानायक पाण्डुरंग सदाशिव [illegible] की माँ हैं । श्रीमन्त ! यह अभी पानीपत के गाँव से आयी है ।

बालाजी तो पाण्डुरंग की मृत्यु हुई ! कोई बात नहीं देवि ! महाराष्ट्र में हजारों माताओं ने अपने पुत्रों की बलि दी है । यदि उनके नेत्रों से अश्रु धारा बहती तो महाराष्ट्र में प्रलय की बाढ़ आ जाती । नहीं नहीं उनके अश्रु पानी बनकर नहीं बहे उनके अश्रु प्रतिशोध के स्फुलिंग बन गये । तभी तो महाराष्ट्र में इतना प्रकाश है । इतनी उष्णता है । तुम भी अपने आँसुओं को संचित रखो । दुर्दिन में महाराष्ट्र के काम आवेंगे । (स्त्री बालाजी राव के पैर छोड़कर उठती है । उसकी सिसकियाँ बन्द होती हैं ।) आज महाराष्ट्र धर्म की कसौटी पर कसा जा रहा है । सही सूचना जान बूझकर छिपायी जा रही है और महाराष्ट्र की तीखी तलवार म्यान से निकली है ! बोलो देवि ! पानीपत के युद्ध में हमारे सैनिकों की विजय कब तक निश्चित हो जायगी ? तुम तो पानीपत से ही आ रही हो ?

स्त्री (सम्हलकर) समाचार अच्छे नहीं हैं श्रीमन्त ! हमारी सेना का कार्यक्रम निश्चित ढंग से नहीं चलता ।

बालाजी (आश्चर्य से) क्या ?

स्त्री जब आक्रमण का अवसर नहीं था तभी श्रीमन्त भाऊ ने आक्रमण करने की आज्ञा दी और उसी में हमारी सेना के चार हजार व्यक्ति कट गये ।

बालाजी (आश्चर्य) चार हजार !

स्त्री (सिसकियाँ लेकर) चार हजार उन्हीं में आपका पाण्डुरंग भी था । सेना में सबसे आगे । उसकी तलवार की गति जैसे भवानी की तलवार की गति थी । हर हर महादेव कहकर शत्रु पर बाज की तरह टूटा । जब शत्रु उसकी तलवार के सामने आते

ये तो गाजर मूली की तरह कट जाते थे। कितनों का उसने रक्त बहाया। लेकिन उसका भी रक्त बहा !

बालाजी (दुःख से) बहुत शोक है मुझे देवि !

स्त्री वीर सैनिक शत्रुओं का रक्त बहाकर जीवित भी तो लौटते हैं। मेरा पाण्डुरंग जीवित नहीं लौट सका ! मुझसे कहता था श्रीमन्त ! कि मैं तुम्हें लेकर तुम्हें नकर श्रीमन्त को विजय की सूचना दूँगा। आज मैं ही उसकी मृत्यु की सूचना लेकर आई हूँ। (सिसकियाँ) मैं उसके बिना जीवित नहीं रहूँगी श्रीमन्त !

बालाजी धैर्य रखो देवि ! तुम मेरे दुःख का अनुमान क्या नहीं करतीं ? तुम्हारा तो केवल एक ही पुत्र रणभूमि की बलि हुआ है मेरे चार हज़ार पुत्र मारे गये ! विश्वासराव कहाँ है ? वह भी तो सेना के सामने युद्ध करता है।

स्त्री श्रीमन्त ! विश्वासरावजी के सम्बन्ध में मैं कुछ नहीं जानती। मैं तो पहले ही युद्ध में अपने पुत्र को खोकर चली आई हूँ। (हल्की सिसकी)।

बालाजी विश्वासराव भी रणकुशल है। उसने हज़ारों शत्रुओं को मारा होगा। वह हाथी पर सवार होकर युद्ध करना अच्छी तरह जानता है। उसने तो हाथी पर से ही युद्ध किया होगा !

स्त्री मैं नहीं जानती श्रीमन्त !

बालाजी तुम नहीं जानतीं किन्तु सेना का प्रत्येक वीर उसे जानता है। जब दोनों हाथों से वह तलवार चलाता है तो ज्ञात होता है जैसे एक ही तलवार दस तलवारें बन गई हैं। अच्छा होता यदि पाण्डुरंग उसके साथ ही रहता। वह कवच की भाँति पाण्डुरंग की रक्षा करता।

स्त्री मेरे पाण्डुरंग का ऐसा भाग्य कहाँ था, श्रीमन्त ! वह वीरता

से लड़ा और रणभूमि में सो गया।

बालाजी वह रणभूमि में ही युद्ध की शय्या पर सोया है। पुत्र की कीर्ति ही माता के हृदय का संताप दे सकती है। विपत्ति से विवाद नहीं किया जा सकता देवि! यदि शोक को उत्तर देना है तो साहस का कवच धारण करो। तूफान और काली घटाओं में इन्द्र धनुष बनो। तुम्हारे पुत्र का बलिदान तो ऐसा है कि मृत्यु की भी आँखों में आँसू आ जाय! किन्तु तुम हँसो इसलिए कि तुम माता हो! तुमने ऐसे पुत्र को जन्म देकर अपना मातृत्व अमर कर लिया है।

स्त्री श्रीमन्त के वचनों से मुझे जीवन दान मिला है नहीं तो पुत्र के बिना मैं जीवित नहीं रह सकती थी।

बालाजी तुम्हारा पुत्र तो जीवित है देवि! महाराष्ट्र के कण-कण में जीवित है। पहले वह सीमित था अब असीम हो गया। प्रभु ने सबसे सुन्दर देह फूल की बनायी। किन्तु उन देहों में वह प्राण की प्रतिष्ठा करना भूल गया! तुम्हारे पुत्र ने उन देहों में प्राण की प्रतिष्ठा की है। और आज प्रत्येक फूल रक्त की मुस्कान में बदल कर आशा और उल्लास का संदेश दे रहा है।

स्त्री मैं धन्य हुई श्रीमन्त!

बालाजी कोई भी विपत्ति लम्बी नहीं है देवि! यदि तुम उसे देश प्रेम और राष्ट्रीयता से नापो। सूर्य की भाँति परिस्थितियों के उज्ज्वल पक्ष को ही देखो। (भास्करराव से) भास्करराव! वीर जननी के विश्राम की व्यवस्था राजकीय शिविर में हो।

भास्कर जो आज्ञा श्रीमन्त!

बालाजी (स्त्री से) जाओ देवि! विश्राम करो।

स्त्री श्रीमन्त! इसी प्रकार दीन दुखिया की चिन्ता करें। (प्रणाम करती है।)

(भास्कर के साथ स्त्री का प्रस्थान)

बालाजी जानकोजी ! जननी का हृदय देखा ! सृष्टि की किसी भी वस्तु से महान् ! पाडुरग ने मातृभूमि पर जीवन निछावर किया और माता ऐसे पुत्र पर ही जीवन निछावर करना चाहती है ।

जनकोजी श्रीमन्त ! मुझे तो कुछ बोलने का साहस ही नहीं हुआ । जितना उसके करुण-क्रन्दन से हृदय द्रवित हो रहा था, उतना ही आपके उत्साहमय वाक्यों के प्रवाह से उमग और उत्साह की किरणें फूट रही थीं । श्रीमन्त ही उसे धैर्य दे सकते थे अन्यथा वह अपना जीवन तो समाप्त ही करने जा रही थी । मैं अवाक होकर निराशा और आशा के द्वन्द्व को देखता रहा । अन्त में आपकी आशा का सन्देश ही विजयी हुआ ।

बालाजी जनकोजी ! माता अपने पाण्डुरग की ममता में इतनी अधिक लीन हो गई कि वह यह नहीं सोच सकी कि महाराष्ट्र के जो चार हजार वीर कट गये हैं उनकी माताएँ भी तो उसी की भाँति दुखी होंगी । फिर हमारा विश्वासराव भी तो युद्ध में गया और पाण्डुरग की भाँति वह भी सेना के आगे युद्ध करता है । वह महाराष्ट्र की नींव में शत्रुओं का रक्त भर रहा है जिससे नींव और भी सुदृढ़ हो जाय ।

जनकोजी सचमुच श्रीमन्त ! महाराष्ट्र की नींव की सुदृढ़ता श्रीमन्त विश्वासराव की वीरता की तलवार के सहारे है । फिर यह तो भवानी की इच्छा है कि वे किसे रणभूमि में अमरत्व का वरदान देती हैं । राज्य तो बनते बिगड़ते रहते हैं ।

(द्वारपाल का प्रवेश)

द्वारपाल श्रीमन्त की जय !

बालाजी आज्ञा है ।

द्वारपाल श्रीमन्त ! पानीपत के साहूकार ने जो क़ासिद भेजा है, वह

द्वार पर उपस्थित है।

बालाजी शीघ्र ही उसे भेजो। बहुत दिनों से उसकी प्रतीक्षा थी।

द्वारपाल जो आज्ञा। (प्रस्थान)

बालाजी पानीपत के साहूकार से सच्ची सूचनाएँ मिल सकेंगी। हम आज भी पानीपत के युद्ध का परिणाम नहीं जान सके हैं।

जनकोजी श्रीमन्त! पानीपत का साहूकार आपका सेवक है। उसने प्रत्येक महत्त्वपूर्ण घटना के समाचार भेजने का वचन दिया था। अवश्य महाराष्ट्र की विजय की सूचना होगी।

(क़ासिद का प्रवेश)

क़ासिद (हाथ जोड़कर) श्रीमन्त की जय!

बालाजी स्वस्ति। तुम पानीपत से आये हो, क़ासिद?

क़ासिद हाँ श्रीमन्त!

बालाजी साहूकार जी सानन्द हैं?

क़ासिद सानन्द नहीं हैं, श्रीमन्त! बहुत चिन्तित हैं।

बालाजी हम भी बहुत चिन्तित हैं! पानीपत के युद्ध में महाराष्ट्र के भाग्य का क्या निर्णय हुआ? भाऊ विश्वासराव और नाना फड़नवीस तो कुशल से हैं?

क़ासिद यह पत्र भेजा है उन्होंने श्रीमन्त (पत्र आगे बढ़ाता है)

बालाजी जनकोजी! पत्र पढ़ो।

जनकोजी जो आज्ञा। (क़ासिद के हाथ से पत्र लेकर पढ़ते हुए) राजमान राज श्री पन्त प्रधान पेशवा बालाजी बाजीराव की सेवा में साहूकार केशव का दण्ड प्रणाम स्वीकार हो। आगे समाचार यह है कि पानीपत के युद्ध की ज्वाला में हमारे दो मोती घुल गये!

बालाजी (चौंककर क्षीण स्वर से) जनकोजी!

जनकोजी श्रीमन्त! सम्भवतः पत्र के अन्त में कोई सन्तोषप्रद समाचार हो।

पूरा सुनने की कृपा करें। (पुनः पढ़ते हुए) हमारे दो मोती घुल गये सत्ताइस मोहरें खो गयी और चाँदी और ताँबे के खोये हुए सिक्कों की गणना भी नहीं की जा सकती। सामन्तों द्वारा साथ न देने के कारण पानीपत की लड़ाई में हार !

बालाजी (बीच ही में) पानीपत की लड़ाई में हार ! (करुण स्वर) पानीपत की लड़ाई में हार !

जनकोजी श्रीमन्त ! अपने को सम्हालें !

बालाजी जनकोजी ! यह क्या हो गया ? पानीपत के युद्ध में इतनी अधिक सेना के होते हुए हार ? यह असम्भव है, यह समाचार झूठ है।

कासिद श्रीमन्त ! क्षमा करें। पानीपत की हार मैंने इन्हीं आँखों से देखी है। भगवान् की कृपा होती अगर मेरी आँखों की ज्योति उसी समय नष्ट हो जाती ! हज़ारों महाराष्ट्र वीर अफगानियों और पठानों की तलवारों से कट गये ! उनके रक्त की धारा से सारा पानीपत लाल हो गया !

बालाजी पानीपत लाल हो गया ! कासिद ! क्या अहमदशाह अब्दाली की तलवार इतनी तेज़ थी ? ओह ! (सिर पकड़कर) यह क्या हो गया।

क़ासिद श्रीमन्त ! अहमदशाह अब्दाली के पैर तो उखड़ चुके थे। उनकी सेना भाग रही थी। उसी समय श्रीमन्त होल्कर की फ़ौज ने मैदान छोड़ दिया। उनके सिपाही जान-बूझकर पीछे हटते हुए रणक्षेत्र से भाग उठे। तभी अहमदशाह अब्दाली की फौज आगे बढ़ी और उसकी हार जीत में बदल गयी।

बालाजी (विह्वलता से) तो तो होल्कर ही इस हार का उत्तरदायी है ? भाऊ ने उसकी बात नहीं मानी इसीलिए उसने मौके पर धोखा दिया ? भाऊ और विश्वासराव ने कुछ नहीं किया ?

द्वार पर उपस्थित है।

बालाजी शीघ्र ही उसे भेजो। बहुत दिनों से उसकी प्रतीक्षा थी।

द्वारपाल जो आज्ञा। (प्रस्थान)

बालाजी पानीपत के साहूकार से सच्ची सूचनाएँ मिल सकेंगी। हम आज भी पानीपत के युद्ध का परिणाम नहीं जान सके हैं।

जनकोजी श्रीमन्त ! पानीपत का साहूकार आपका सेवक है। उसने प्रत्येक महत्त्वपूर्ण घटना के समाचार भेजने का वचन दिया था। अवश्य महाराष्ट्र की विजय की सूचना होगी।

(क़ासिद का प्रवेश)

क़ासिद (हाथ जोड़कर) श्रीमन्त की जय !

बालाजी स्वस्ति। तुम पानीपत से आये हो, क़ासिद ?

क़ासिद हाँ श्रीमन्त !

बालाजी साहूकार तो सानन्द है ?

क़ासिद सानन्द नहीं है, श्रीमन्त ! बहुत चिन्तित हैं।

बालाजी हम भी बहुत चिन्तित हैं ! पानीपत के युद्ध में महाराष्ट्र के भाग्य का क्या निर्णय हुआ ? भाऊ विश्वासराव और नाना फड़नवीस तो कुशल से हैं ?

क़ासिद यह पत्र भेजा है उन्होंने, श्रीमन्त (पत्र आगे बढ़ाता है)

बालाजी जनकोजी ! पत्र पढ़ो।

जनकोजी जो आज्ञा। (क़ासिद के हाथ से पत्र लेकर पढ़ते हुए) राजमान राजे श्री पन्त प्रधान पेशवा बालाजी बाजीराव की सेवा में साहूकार केशव का दण्ड प्रणाम स्वीकार हो। आगे समाचार यह है कि पानीपत के युद्ध की ज्वाला में हमारे दो मोती घुल गये !

बालाजी (चौंककर बीच ही में) जनकोजी !

जनकोजी श्रीमन्त ! सम्भवतः पत्र के अन्त में कोई संतोषप्रद समाचार हो।

पूरा सुनने की कृपा करें। (पुन पढ़ते हुए) हमारे दो मोती घुल गये सत्ताईस मोहरें खो गयी और चाँदी और ताँबे के खोये हुए सिक्कों की गणना भी नही की जा सकती। सामन्तो द्वारा साथ न देने के कारण पानीपत की लड़ाई म हार !

बालाजी (बीच ही में) पानीपत की लडाई में हार ! (करुण स्वर) पानीपत की लडाई में हार !

जनकोजी श्रीमन्त ! अपने को सम्हालें।

बालाजी जनकोजी ! यह क्या हो गया ? पानीपत के युद्ध में इतनी अधिक सेना के होते हुए हार ? यह असम्भव ह, यह समाचार झूठ ह।

कासिद श्रीमन्त ! क्षमा करें। पानीपत की हार मने इन्हीं आँखो से देखी ह। भगवान् की कृपा होती अगर मेरी आँखो की ज्योति उसी समय नष्ट हो जाती ! हजारो महाराष्ट्र वीर अफगानियो और पठानों की तलवारों से कट गये ! उनके रक्त की धारा से सारा पानीपत लाल हो गया !

बालाजी पानीपत लाल हो गया ! कासिद ! क्या अहमदशाह अब्दाली की तलवार इतनी तेज़ थी ? ओह ! (सिर पकडकर) यह क्या हो गया।

कासिद श्रीमन्त ! अहमदशाह अब्दाली के पर तो उखड चुके थे। उनकी सेना भाग रही थी। उसी समय श्रीमन्त होल्कर की फौज ने मदान छोड दिया। उनके सिपाही जान-बूझकर पीछे हटते हुए रणक्षेत्र से भाग उठे। तभी अहमदशाह अब्दाली की फौज आगे बढी और उसकी हार जीत में बदल गयी।

बालाजी (विह्वलता मे) तो तो होल्कर ही इस हार का उत्तरदायी ह ? भाऊ ने उसकी बात नहीं मानी इसीलिए उसने मौके पर धोखा दिया ? भाऊ और विश्वासराव ने कुछ नहीं किया ?

फासिद श्रीमन्त ! जैसे ही श्रीमन्त होल्कर की सेना भागी कि श्रीमन्त विश्वासराव ने अपना हाथी शत्रुओं को मारकाट के बीच में बढ़ा दिया। सैकड़ों शत्रुओं को हाथी के पैरों के नीचे दबाते हुए उन्होंने अपने बायें हाथ के भाले से घुड़सवारों की छाती छेद दी और दाहिने हाथ की तलवार से शत्रुओं के सिर उड़ा दिये।

बालाजी विश्वासराव ! मैं जानता था कि तुम शत्रुओं से महाराष्ट्र के मरे हुए वीरों का बदला लोगे। हाँ, फिर क्या हुआ ?

फासिद जब श्रीमन्त विश्वासराव इस तरह शत्रुओं के सिर उड़ा रहे थे उसी समय श्रीमन्त ! उसी समय उनके पेट में गोली लगी।

बालाजी (करुणा से) गोली ! क्या क्या वे घायल हो गये ?

फासिद वे हाथी पर ही निढाल होकर बैठ गये श्रीमन्त ! यह खबर पाते ही श्रीमन्त भाऊ घोड़ा दौड़ा कर उनके पास पहुँचे। श्रीमन्त विश्वासराव को आहत देखकर उनकी आँखों से आँसू गिरने लगे। तभी श्रीमन्त विश्वासराव ने कहा—(उत्साही स्वर में) काका ! आँसू बहाने का समय नहीं है। हारते हुए युद्ध को जीत में बदलिये। एक-एक क्षण रक्त की बूँद बनकर बह रहा है। शत्रु को मारिए

बालाजी (गहरी साँस लेकर) धन्य हो। विश्वास ! तुम महाराष्ट्र के सच्चे सपूत हो ! (उत्सुकता से) फिर ?

फासिद श्रीमन्त विश्वासराव की ललकार सुनकर भाऊ शत्रुओं के बीच में घुस गये। और फिर उनका पता नहीं चला कि वे कहाँ गये ! दोनों ही वीर पानीपत की भेंट हो गये !

बालाजी (करुणा से) भेंट हो गये ! आह ! (सिर पकड़ लेते हैं)

दो मोती घुल गये तभी साहूकार ने एसा लिखा ! भगवान् गजानन ! यह तुमन क्या किया ? य दोना रत्न अपनी ऋद्धि सिद्धि का कोप इन्ही से भरना था तुम्हें ? हाय भाऊ ! हाय विश्वास !

जनकोजी श्रीमत ! चलिए ! शयन कक्ष म चलिए ! आपका स्वास्थ्य पहल से ही खराब ह ।

बालाजी (तीव्रता से) मर सम्बध म क्या बात कर रह हो ! भाऊ और विश्वास के विषय में बातें करो। दोनो वीर मेर सिंहासन को अपन रक्त से अभिषिक्त कर चल गय और म अस्वस्थ होकर उसी सिंहासन पर बठा हूँ । क्या म धिक्कार के योग्य नहीं हू ?

जनकोजी श्रीमत ! आप तो युद्ध म जाने के लिए प्रस्तुत ही थे। आपकी दुबलता देखकर ही श्रीमन्त भाऊ न आपसे रुक जान की प्राथना की थी।

बालाजी और म रुक गया। जनकोजी ! म समरभूमि में जान से रुक गया और व दोना चल गय । युद्ध-यात्रा पर जान से पहिले भाऊ और विश्वासराव मेर पास आय थ । दानो वीर वप में सज हुए थ । दोना न मर चरण स्पश किय और जान की आज्ञा माँगी । मन भगवान गजानन के चरणा के फूल उन दोना के मस्तक पर रक्ख । उस वीर-वेष में मेरा विश्वासराव कितना सुदर लग रहा था जसे स्वामी कार्त्तिकेय युद्ध के लिए सजे हो ! बडी-बडी आँखो म युद्ध का अनुराग ! हसकर उसने मुझ पिता नही कहा— पत प्रधान 'श्रीमन्त पेशवा' कहा और एक सनिक की भाँति सिर उठाया। मने देखा उसके माथे पर टीका नहीं त्रिपुड ह । मन भी हसी में पूछा—सनिक ! तुम्हारे मस्तक पर त्रिपुड ! उसन कहा—सेवक को रणक्षेत्र

में रौद्र रूप धारण करता है इसीलिए मस्तक पर निपट अंकित किया है। मन कहा—भगवान् शंकर तुम्हारी रक्षा करें.. (निर्बल स्वर से) किंतु रक्षा नहीं हो सकी!

जनकोजी यह एकमात्र संयोग है श्रीमंत! कि उन्हें गोली लग गयी।

बालाजी यह गोली मुझे लगना चाहिए थी। यदि मैं वहाँ होता तो विश्वास को पीछे कर मैं अपने वक्षस्थल पर गोली खाता। लेकिन मैं वहाँ नहीं पहुँच सका। लेकिन इस गोली का पूरा बदला लिया जायगा। (कासिद से) कासिद! चलो पानीपत मेरे साथ। मैं अहमदशाह से युद्ध करूँगा। तुमने मेरे बच्चे के साथ युद्ध कर क्या वीरता दिखलायी! मुझसे युद्ध करो। मुझसे युद्ध (शब्द गले में उलझ जाते हैं)

कासिद धैर्य रक्खें श्रीमन्त! आपका प्रताप तो देश में चारों ओर फैला है। अहमदशाह पानीपत का युद्ध जीतकर भी पानीपत में नहीं है। वह अफगानिस्तान की तरफ चला गया। जीतकर भी जैसे वह हार गया है श्रीमंत! उसकी इतनी हार हुई है कि वह उसे जीत कर भी पूरा नहीं कर सकता।

बालाजी लेकिन मेरी कितनी हानि हुई है कासिद! यह कौन जान सकेगा! मैं दुखी हूँ। तुमसे फिर बात करूँगा। तुम जाओ।

कासिद जो आज्ञा। (प्रस्थान)

बालाजी पांडुरंग मन की माँ से कहना जनकोजी! कि मैंने भी अपना प्यारा पुत्र खो दिया है। और मेरी आँखों में आँसू नहीं है। कहना कि पांडुरंग अकेला नहीं गया है। उसके साथ मेरा विश्वासराव भी है और साथ में लक्षाधिक महाराष्ट्र के सैनिक। मेरा सूर्य प्रकाश की अनन्त किरणों के साथ डूबा है। अब अँधेरी रात है और मैं हूँ।

(अपना सिर हथेली से टेक लेते हैं। निस्तब्धता।

एक क्षण बाद घंट की ध्वनि सुनायी पड़ती है)

जनकोजी श्रीमन्त ! राजगुरु का आगमन हो रहा है ।

बालाजी नदी की बाढ़ ने जब किनारा को तोड़ दिया तब शरद ऋतु की निर्मलता आ रही है ! जब नेत्रों की ज्योति समाप्त हो गयी तब अंजन की रेखा का क्या उपयोग होगा ?

(राजगुरु का प्रवेश)

राजगुरु (आते ही) धर्मासाठा मरावें । मरोनि अवघ्यासा मारावें मारिता मारिता घ्यावें । राज्य आपलें ।

बालाजी राजगुरु के चरणों में बाजाराव का प्रणाम । (सिर झुकाते हैं)

जनकोजी चरणों में जनकोजी का प्रणाम । (सिर झुकाता है ।)

राजगुरु स्वस्ति ! पंत प्रधान ! शोक से अपने जीवन को कुरूप मत बनाओ । पानीपत की हार केवल परिस्थितियों की हार है वीरों की हार नहीं और जब वीरों की हार नहीं तब तुम्हारा निरुत्साह और शोक अनुचित है । यदि तुम्हारे हृदय में निरुत्साह और शोक आ गये तो मैं समझूँगा कि ये दोनों अहमदशाह अब्दाली के गुप्तचर हैं जो तुम्हारे हृदय से आरम्भ कर सारे महाराष्ट्र को कत्ल करने आये हैं । इन गुप्तचरों को दूर करो नहीं तो ये तुम्हारे हृदय को ही दूसरा पानीपत बना देंगे जिससे जीत का कोई अंकुर नहीं उग सकता ।

बालाजी राजगुरु ! मेरे हृदय में जिज्ञासा है कि महाराष्ट्र ने ऐसा कौन सा पाप किया जिसका परिणाम इतना भयावह हुआ ? पानीपत ने हमारा पानी उतार लिया, हमारी पत नष्ट कर दी । भाऊ और विश्वासराव भी चले गये यह किस महापाप का दण्ड है ?

राजगुरु पंत प्रधान ! न यह पाप है न महादण्ड । राज्य में महापाप तो तब होता है जब राजा निरंकुश और अत्याचारी हो जनता की सुख-सुविधा छीन ली जाय, उस पर अनकानेक कर लगाये जाय,

जब दीन प्रजा को खान-पीने और रहने की सुविधा न हो। ऐसा तो तुम्हारे राज्य में नहीं है। तुम तो प्रजा को अपनी सन्तान समझते हो। पानीपत की हार महाखण्ड भी नहीं है। महाखण्ड तो तब होता जब राज्य आततायियों के हाथ में चला जाता। जनता की सभ्यता और संस्कृति समाप्त हो जाती। जनता का नैतिक बल और धर्म नष्ट कर दिया जाता। यह तो कुछ भी नहीं हुआ। केवल सुदूर रणक्षेत्र में हमारा थोड़ी सी सेना वीरगति को प्राप्त हुई। मैं देखता हूँ कि इस थोड़ी-सी पराजय की प्रतिक्रिया होगी। समस्त महाराष्ट्र फिर से एकता के सूत्र में बंधेगा और पानीपत का बदला शत्रुओं के ऐश्वर्य और वैभव से लिया जायगा। समर्थ स्वामी रामदास ने कहा है —

आहे तितुके जतन करावें। पुढे आणिक मलवावें।
महाराष्ट्र राज्यचि करावें। जिकडे तिकडे।

बालाजी आप के कथन से शांति मिली राजगुरु!

राजगुरु आज रात में भगवान गजानन की आरती होगी। उसमें पंत प्रधान आने का कष्ट करें।

बालाजी अवश्य उपस्थित होऊंगा। एक बात और बतायें राजगुरु! पानीपत से कोई सूचना मिली कि नाना फडनवीस कहाँ है? वह युद्ध में तो नहीं मारा गया? दुबला पतला बीमार लड़का विश्वासराव की भांति प्रिय! वह कैसे बचा होगा!

राजगुरु नाना फड़नवीस सुरक्षित है।

बालाजी (उल्लास से) सुरक्षित है? धन्य गजानन! धन्य राजगुरु! वह कहाँ है?

राजगुरु वह पानीपत से दो घंटे पूर्व लौटा। मेरे ही साथ यहाँ आया है। द्वार पर है।

बालाजी (विह्वलता से) द्वार पर है? जनकोजी! तुम जाकर देखो

ग्रौर उसे शीघ्र ही मेरे पास लाम्रो।

जनकोजी जो ग्राना श्रीमन्त। (प्रस्थान)

बालाजी राजगुरु! नाना फडनवीस बच गया। भगवान गजानन! तुमने मेरे नाना को बचा लिया। मुझे तो ऐसा लगता है राजगुरु! जैसे मेरा विश्वासराव ही ग्रा गया। भाऊ के साथ गया था। काशी ग्रौर वृन्दावन की तीर्थ-यात्रा करने। रण-यात्रा भी कर ली उसने।

राजगुरु ग्रच्छा! ग्रब ग्राप नाना फडनवीस से मिलें। किन्तु किसी कारण से ग्राप दुःखित न हों। मैं चलूंगा मुझे पूजा के लिए देर हो रही है।

बालाजी प्रणाम करता हूं। भगवान गजानन से प्रार्थना करें कि महाराष्ट्र के भविष्य पर ग्रांच न ग्राने पावे।

राजगुरु (हाथ उठाकर) स्वस्ति।

(प्रस्थान। उनके प्रस्थान पर फिर घंटा बजता है।)

बालाजी (सोचते हुए) ग्रोह नाना! तुम बच गये। नहीं तो मेरे दुर्भाग्य ने मेरे सभी रत्न मुझसे छीन लिये थे। तुम्हारा बचकर ग्रा जाना तो वैसा ही है जैसे किसी को उसकी खोयी हुई दृष्टि फिर से प्राप्त हो जाय!

(जनकोजी के साथ नाना फडनवीस का प्रवेश)

बालाजी ग्रोह! नाना तुम ग्रा गये। (उठकर) देखूं, कहीं तुम्हें तो कोई घाव नहीं लगे? तुम स्वस्थ ग्रौर सकुशल हो!

नाना श्रीमन्त की जय!

बालाजी नाना! मेरी जय मानते हो! जय—जय—(व्यंग्य की हंसी हंसते हैं) मेरा परिहास न करो, नाना! ग्रहमदशाह ग्रब्दाली की जय बोलो। पानीपत में उसने मेरी दोनों भुजाएं काट लीं। भाऊ ग्रौर विश्वास! उनका रक्त देखा था तुमने! कितना

साल था ? (जनकोजी से) जनकोजी ! तुम अब मुझे अकेला रहने दो नाना के साथ। इस समय मुझे किसी सेनापति की आवश्यकता नहीं है। तुम जाओ।

जनकोजी जो आज्ञा ! श्रीमन्त ! (प्रस्थान)

बालाजी अभी राजगुरु आये थे नाना। उन्होंने समय गुरु रामदास की वाणी सुनायी। मन उनसे बड़ी शक्ति पायी। बड़ी कठिनाई से मन अपने आँसू तो रोक लिए किन्तु भाऊ और विश्वासराव के रक्त की बूंदें भरा आँखों के भीतर ही भीतर बह रही है नाना ! जो किसी के हाथों से न पोंछी जा सकती।

नाना श्रीमन्त ! दोनों वीरों का रक्त इतिहास भी नहीं पोंछ सकता। बहने दीजिए उसे। महाराष्ट्र की फूट की संधियाँ शायद उसी रक्त से भरेंगी। मैं लज्जित हूँ कि अपना रक्त बहाने का अवसर न पा सका। श्रीमन्त भाऊ ने शपथ देकर मुझे रणभूमि से लौटा दिया।

बालाजी वे तीर्थ-यात्री को रण-यात्री कैसे बना सकते थे ? भाऊ ने ठीक किया कि मेरे सहारे के लिए उन्होंने तुम्हें वापस लौटा दिया। लेकिन तुम बतलाओ नाना ! जो तुम्हें भाई के समान प्रिय था उस विश्वासराव को खोकर मैंने क्या नहीं खो दिया !

नाना श्रीमन्त ने एक वीर पुत्र के पिता होने का गौरव प्राप्त किया है। इस पानीपत के युद्ध में हारकर भी महाराष्ट्र ने युद्ध-वीरों को उत्पन्न करने का गौरव घोषित कर दिया है। वह पराजय पाने पर भी विजय है।

बालाजी तुम सत्य कहते हो नाना ! हमारे महाराष्ट्र के वीर यदि विजयी नहीं हो सके तो शत्रु को मारकर मरने का साहस तो दिखला सके !

नाना यदि यही साहस भविष्य में परस्पर की फूट की जड़ उखाड़

सका तो सत्य ही हिंदू पद-पादशाही की राजनीति प्रखण्ड राजनीति होगी, श्रीमन्त ।

बालाजी किन्तु पानीपत की हार

नाना (बीच ही मे) श्रीमन्त ! क्षमा करें। मैं बीच ही में बोल रहा हू । पानीपत की हार की बात जल्दी से जल्दी भूलन की बात है। हम विपत्तियो के पक्षिया को सिर पर उडने से नही रोक सकते किन्तु उन्हें हृदय में घोसले बनाने से रोक सकते हैं।

बालाजी लेकिन यह कैसे भूला जा सकता है कि आज महाराष्ट्र के दो परम वीर सदाशिवराव भाऊ और विश्वासराव नहीं हैं।

नाना श्रीमन्त ! यदि हमारी पूर्व दिशा की खिडकियाँ बन्द कर दी जाय तो क्या सूर्योदय का प्रकाश हमे नही मिलेगा ? प्रकाश तो सब तरफ से आने का रास्ता खोजता है। श्रीमन्त ! हम कपडा को उलट कर नही पहिनते लेकिन यदि हम बादला को उलट कर देखें तो हमें प्रकाश ही प्रकाश दिखलायी देगा। इस समय तो धैर्य और साहस ही हमारा सहारा है। हमारा दुःख हमारी वीरता की ही छाया है क्योकि हम प्रकाश में खडे हैं। छाया का महत्व नहीं है श्रीमन्त ! प्रकाश का महत्व है।

बालाजी तुम्हारी वाणी से प्रकाश मिलता है नाना ! यद्यपि तुम मेरे बच्चे के समान हो किन्तु समस्त जीवन की गति विधि में तुम्हारी दृष्टि है। भगवान गजानन तुम्हें शक्ति दें कि भविष्य में भी तुम प्रकाश दे सको।

नाना श्रीमन्त ! आपका आशीर्वाद अमर रहे। जिस प्रकार आकाश को अपनी नीलिमा पर और धरती को अपनी हरीतिमा पर विश्वास है उसी प्रकार मानव को अपने साहस पर विश्वास होना चाहिए। हमारे श्रीमन्त विश्वासराव ने इसी सत्य की घोषणा की है। जब मुझे अपने इस भाई पर इतना गर्व है तो

आपको अपने पुत्र पर कितना गर्व न होगा!

बालाजी आज मन तुम्हें अपने पुत्र का महत्व लिया।

नाना मैं कृतार्थ हुआ श्रीमन्त! आपके पुत्र को बहुत कड़ी परीक्षाएं देनी पड़ती हैं। महाराष्ट्र में मैं अपनी वही परीक्षा दूँगा। महाराष्ट्र में उसका भगवा झण्डा फिर से लहरायेगा। भगवान गजानन की कृपा हो। आप महाराष्ट्र के बिखरे वीरों को फिर से एकत्र करें। लोग कहते हैं कि गुलाब चाहे जहाँ उगे अपने साथ काँटे भी उत्पन्न करता है। मैं कहता हूँ ठीक है किन्तु जहाँ काँटा है वहाँ कुछ समय बाद गुलाब भी होगा।

बालाजी मुझे भी विश्वास है नाना! कि हमारी हार ही विजय की दुन्दुभी बनेगी।

नाना मैं धन्य हूँ श्रीमन्त! कि आपने शोक ने साहस का रूप ले लिया। साहस तो आप में है ही कुछ क्षणों के लिए शोक समाचार से दब गया था। यह निश्चय मानें श्रीमन्त! उत्साह की गति पृथ्वी की सबसे सुन्दर लकीर है और प्रसन्नता की ध्वनि पृथ्वी की सबसे मधुर ध्वनि है।

बालाजी तुम महाराष्ट्र में ही नहीं सारे भारतवर्ष में अमर रहोगे नाना! चलो मेरे साथ विश्राम-कक्ष में चलो।

नाना चलिए श्रीमन्त! आप स्वस्थ हों। मैं प्रण करता हूँ कि पानीपत की हार को जीत में बदल दूंगा। महाराष्ट्र का अगला चरण विजय से आरम्भ हुआ था उसका भरतवाक्य भी मेरे जीते जी विजय से समाप्त होगा।

बालाजी तथास्तु! अब से महाराष्ट्र का समस्त उत्तरदायित्व मेरे दूसरे पुत्र चिरंजीव माधवराव और तुम पर होगा। चलो मेरे साथ।

(प्रस्थान)



बादशाह अकबर का दीने-इलाही

[स्वोक्ति रूपक]

यह इबादतखाना ! आखिर क्यों बना ! शेख अब्दुल्ला नियाजी की भोंपड़ी इस जगह क्या बुरी थी। लेकिन जिस तरह मिट्टी से रतन निकलता है उसी तरह शेख अब्दुल्ला नियाजी की भोंपड़ी से यह इबादतखाना उठ खड़ा हुआ। हमने इसे क्यों बनवाया ? फैजी ने मशवरा दिया कि हर मुल्क को हम आप सबसे मिलकर इबादत का राज समझें। बंगाल का सुलेमान करारानी भी यही करता था—हमने उसे शिकस्त दी—खुदा करे उसे दायमुल वजूद हासिल हो। उसकी तरह हम भी इबादत का राज समझें।

अबुलफजल का कहना है कि हिन्दुस्तान में पहले भी इस तरह की जमायतें हुई हैं—अशोक कनिष्क और हर्ष के जमाने में। चीन में ताइसिंग ने एक जमाने में मजहबी तर्सफिए किए हैं। हजरत कुबला खान ने भी पेकिंग में सभी मजहबों के लोगों को इकट्ठा किया था और चीन के अधर को दूर किया। सिकन्दर लोदी और सुलेमान करारानी की जमायतें तो ताजी मिसालें हैं जिनमें दीनी मसले हल किए गए। तब यह जरूरी है कि हमारे इतने बड़े मुल्क में जहाँ बहुत-सी मजहबी गलतफहमियाँ फैली हुई हैं ऐसी कोई जमाअत हो। उसी के लिए यह इबादतखाना आपके सामने है। इस इबादतखाने के मदरसे में पहले सिर्फ सुन्नी शरीक होते थे कुछ अर्से बाद शियाओं को भी शिरकत मिली और अब सुन्नी और शिया के साथ हिन्दू पारसी जैन सिख बौद्ध यहूदी और ईसाई भी यहाँ अपने अपने मजहब और धर्म का राज हमें समझाते हैं। कुछ सुन्नियों को यह पसन्द नहीं आया। क्या बदायूनी ! तुम्हें भी शायद शिकायत होगी ? लेकिन इसे हम गलत समझते हैं। अब हिन्दुस्तान हमारा है इसकी हर एक अच्छाई और बुराई हमारी है। अब इस मुल्क में अम्नो अमान है। जूद और करम हमारी आँखें हैं। बाहर से आने वाले कितने अकवर मन्द लोगों ने इसे अपना वतन बनाया है। इसकी हर एक फिज़ा हमारे चैन और सुकून के लिए है। यह खुदा का नूर है। और बदायूनी ! हिन्दुस्तान ही क्यों आप

दुनिया पर नजर डाल। समन्दर पार के इन्सान भी बेदार हो उठे है। इस्लाम में मेहदी फिरका भले ही गलत हो लेकिन अपने पूरे जोर पर है चीन में पिंग की तरफ आप अपनी नजर उठायें। ईरान के सूफिया की जमात दुनिया भर में फैल गई है। तुर्किस्तान में सुलेमान के नूर का जल्वा है। फारस में शाह इस्माइल का क्या असर है और चीन में युग लो ने नई दुनिया कायम कर दी है तो हिन्दुस्तान में हजरत तमूर का खानदान गफलत की नींद में क्यों कर सो सकता है! हिन्दुस्तान की तवारीख भी सूरज की किरन से लिखी जानी चाहिए तारीकी की स्याही से नहीं। अबुल फजल हमारी आइन लिखना चाहते है। वे भी इस बात को जानते है।

इस बेदारी के आलम में हम खान्दान तमूरिया की हस्ती दुनिया को दिखलाना चाहते है।

अज पये हर गिरिया आखिर खन्दा ईस्त।
मर्द आखिरबी मुबारक बन्दा ईस्त।

अपनी जिन्दगी की आखिरी मंजिल पर जो नजर रख सकता है वही बन्दा मुबारिक है। इस जिन्दगी की आखिरी मंजिल क्या है? हम कहते है जिन्दगी की आखिरी मंजिल है खुदा के करीब पहुचना जो दुनिया के हर जर्रे में मौजूद है।

सरा पर्दय चर्ख गर दन्दों वी
दरू शमहाए फरो जिन्दा वी

इस घूमते हुए आसमान के पर्दे के नीचे इस शमअ को देख जो रौशन है। अगर हम मुल्क के कामों से फुरसत मिले और खुदा हमें एक दूसरी जिन्दगी बख्शे तो हमारी ख्वाहिश है कि हम इस पर पूरे तौर से कह सकें। तो यह शमअ सब जगह रौशन है। इसी रौशनी की किरन बांधने की कोशिश हर एक मजहब ने की है। मंजिल एक है रास्ते जुदे जुदे है। कोई सीधा है कोई टेढा कोई दाहिने कोई बाएं। मंजिले मकसूद एक है।

तो यह रास्तों का झगड़ा है, मंजिल का नहीं। हमने देखा है कि चीज वही है बस रास्ते जुदा-जुदा हैं। और इसी वजह से इन्होंने कत्ल-ए-आम बरपा कर दिए हैं। गुरुओं का काट कर रख दिया है, किस्म के हिस्से कर दिए हैं और इन्सान के दामन में आग लगा दिए हैं। हम कहेंगे कि नफस के दायरे में रूह को मिटा दिया है। हमारी इस बात से शायद इन्हीं के आगे पर मुस्कराहट है। शायर हूं न! दुनिया का मजीवा ग़रीब शायर।

तो हम कह रहे थे कि दुनिया का सबसे बड़ा मजहब समझा जाना चाहिए जो इन रास्तों को नहीं देखता, मंजिल मक़सूद को देखता है।

गर विसाल दोस्त मी दारी हवस।
नफ़्स रा वा रूह गरदा हम नफस॥

अगर तू अपने दोस्त से विसाल की हविस रखता है तो तू रूह पर नफस को लुटा दे। यही वजह है कि इस इबादतखाने में आप सब अपने दोस्त से विसाल की हविस रखते हैं और नफस को रूह पर लुटाने के लिए आए हैं। जब रूह ही मुस्तकिल है तो नफस की कोई हस्ती नहीं। जो नफस को तरजीह देते हैं वो रूह को पहिचानते नहीं। इसीलिए हम दूसरे को शक की निगाह से देखते हैं। हमने इस शक को मिटाने की दवा ईजाद की है। हमने अपने दीन को इलाही के जल्वे से रौशन किया है जिसमें रूह की कोई हस्ती नहीं है और रूह की कोई किस्म नहीं है और रूह की हस्ती के सामने नफस की कोई हस्ती नहीं है। यह दीन इलाही है। इलाही को पहिचानने का सबसे आसान रास्ता है।

बदायूनी! तुम समझते होगे हमने इस्लाम के उसूलों के खिलाफ कुछ कहा। हरगिज़ नहीं। हम खुदा के बंदे हैं लेकिन हम खुदा के नूर को रवायतों में महदूद नहीं करते। हम समझते हैं कि खुदा के नूर ने इस दुनिया में कितने खूबसूरत तरीकों से अपने को रौशन किया है।

बजिल्वे रूह बा शौक व हकीकतवसूल व हजरत करीम। शस्त और साफ़ नज़र ही इस दीन की सबसे बड़ी सिफ़त है। अगर हम मरकज पर

अपनी पाकीजा नजर कायम रक्खें तो हम कभी इधर उधर नहीं भटक सकते। हमारा रास्ता सीधा और साफ है। जो सूफ़ी है वह अपने सफ पर कायम है, वह चाहे सुफ पहिने या न पहिने।

हम कोई नई बात नहीं करना या कहना चाहते। जिस तरह बीरबल ने कहा—बिखरे हुए मनका को जोडकर एक खूबसूरत माला तयार करना ही हमारा मकसद है। इसीलिए अपने इस दीन इलाही के लिए न हम किसी खास किस्म की मस्जिद तैयार करना चाहते हैं न कोई खास मुल्ला में मुजाहिद की जरूरत ही समझते हैं। कुरान हमारे लिए भी उतनी ही पाक है जितनी इस्लाम के सभी बन्दों के लिए। और यह भी हम कह देना चाहते हैं कि दीन इलाही क्या किसी भी दीन में शामिल होने के लिए किसी भी शख्स के लिए जोरो जबदस्ती की शर्त नहीं है। इस सिलसिले में हम एक बार फिर वही बात दोहराना चाहते हैं जो हमने सलीम से कही थी कि कुरान की आयत है कि अगर खुदा चाहता तो सारी दुनिया इस्लाम को अपना दीन मानती लेकिन जब खुदा ने ऐसा नहीं चाहा तो बन्दे को क्या हक है कि वह लोगों को इस्लाम में आने के लिए जबरदस्ती करे? अक्ल और मन्त्र से जो इस्लाम में आना चाहता है जरूर आए। आप इसे समझें कि इस दुनिया में १० में ८० आदमी काफ़िर या हिंदू हैं। अगर मैं तलवार लेकर इन ८० आदमियों को कत्ल कर दूं तो यह खुदा का बन्दा अबुलफतह जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर बादशाह गाजी क्या सिर्फ दुनिया के पांचवें हिस्से को ही खुदा का नूर समझे और सारी खिलक़त को जिसे खुदा ने इतना खूबसूरती से रूह अता फरमाई है, हमेशा के लिए गारत कर दे?

इसीलिए दीन इलाही की जरूरत है जिसमें किसी तरह की जोर ओ जबदस्ती नहीं है। हमारे सीने में इस दीन इलाही की रौशनी इसी इबादतखान के मुबाहसा से आई है। जनाब मुबारक, फैजी और ताजुद्दीन ने इस रौशनी को तेज किया है और दिल से अंधेरा दूर किया है। अब हम बार

यत की नजर से भी गम्म देख सकते हूँ तानसेन की गुर में भी कायनात के जौहर का निसार पा सकते हूं। विश्वनाथ की तसवीरों से भी जिन्दगी का राज समझ सकते हूं और शरा फैजी के योगवाशिष्ठ के तरजुम स भा गिनवन की तूपी देख सकते हूं। इनके सिवाय आप जैन अवस्था के जान बार दस्तूर महयर जा राना म उरिम आपनाय ग्रौर ग्रातिश में हक की परस्तिश कर सकते हूं। जन जगद्गुरु हीर विजय और बोध ' समन की महिमा में हम खुदा की रहमत देख सकत हू। सिख गुरु अमरदास के जप में हम जिक्र का जल्वा महसूस करत ह। दीन इलाही में खुदा की रहमत हमन दिल के कोन कोन में पूलती-फलता दखी ह। हर दिल उसके लिए अजीज ह हर श उसक लिए तसवार ह।

हमें एक बात याद आ गई। बदायूनी न एक बार हमसे पूछा कि तसवीरों से हम नफरत क्या नहीं करत ? हमने फ़ौरन ही जवाब दिया कि मुसव्विर न खुदा को पहचानन का एक नया तरीक़ा ईजाद किया ह। जब वह किसी की तसवीर खींचता ह तो खूबसूरती का जाल बिछा देता ह—और नाक मुंह बनते चन जात हं लकिन खूबसूरत तसवीर बना कर भी वह उसमें जान नहीं डाल सकता। और खुदा छोटी स छोटी और बडी स बड़ी खूबसूरत शक्ल में जान डाल सकता ह। तो मुसव्विर समझता ह कि खुदा का जल्वा क्या ह ! बदायूनी चुप हो गये। हम बदायूनी की लियाकत की इज्जत करते ह लकिन हमें अफ्सोस ह कि बदायूनी हस नही सकते। खुदा क करीब पहुच कर उनके लबों पर मुस्कुराहट के फूल क्या नहीं खिलत ?

हम कहाँ से कहाँ पहुच गए ! हमें देर हो रही ह। शायद आप लोग भी जाना चाहत हो लकिन आज हम मसरत महसूस करतहैं कि हमन अपन दिल में उठन वाल जज्बात का इजहार किया। दीन इलाही दुनिया का दीन ह बशर्ते कि दुनिया खुदा के जात और सिफत समझे। आप पूछ सकते हैं कि दीन इलाही का रास्ता क्या ह ? रास्ता आप अपन दिल से पूछिए

और मुझे कामिल यकीन है कि हर एक इनसान उस रास्ते को जानता है लेकिन उस पर अमल नहीं करता। हर एक दीन और धर्म के मुवाहिसा से हमने सिर्फ दस बातें चुनी हैं। सुनिए —

पहली है जूद और करम। दरियादिली और मेहरबानी कुरान की हदीस है कि जब तक तुम अपनी सबसे प्यारी चीज कुर्बान नहीं कर सकते तब तक तुम हकीकत से वाकिफ नहीं हो सकते। इसीलिए हर एक को दरियादिल और मेहरबान होना जरूरी है।

दूसरी बात है बुरे काम करने वाले को माफ कर देना और उसके गुस्से का जवाब शीरीं जबान से देना। अगर तुम्हें कोई जहर दे तो उसे शक्कर दे।

कम म बाश अज़ दरख्त साया फगन।
हर कि संगत जनद समर ब वरवशश।

तू साया देनेवाले दरख्त से कम न साबित हो। जो तुझे पत्थर मारे, उसे तू फल दे।

तीसरी बात है, दुनियावी ख्वाहिशात से परहेज कर। समझ ले कि दुनियावी जिन्दगी एक खेल और बाजी है।

अलहजर अज हुब्बे दुनिया अलहजर
बहरे नानो जर मखुर खूने जिगर।

मुहब्बते दुनिया से तू परहेज कर। रोटी और दौलत के खातिर तू अपने जिगर का खून मत पी।

चौथी बात है दायमुल वजूद के लिए तू इस दुनियावी जिन्दगी की कैद से नजात हासिल कर।

पाँचवीं बात है कामों को तू अक्ल और अन्देशे से अंजाम दे। इसका हम पहले जिक्र कर चुके हैं।

मर्द आखिर बीं मुबारक बन्दा ईस्त।

छठी बात है दुनिया में खुदा का ऐजाज तू तभी देख सकता है जब तू

होशियारी से काम ले। हमने पहले भी कहा है कि—

सरापरदए चश्म गर दस्त यीं।
दर शमहाए फरो जिस्तायीं।

सातवीं बात है सबके लिए नर्म जबान और खुशकलाम रखना जरूरी है।

आठवीं बात है दूसरे की बात हमेशा अपनी बात से मुकद्दम समझो।

इबादत बजुज़ खिदमते खल्क नस्त।
तसबीहो सज्जादहो ब दल्क नस्त।

खल्क की खिदमत से बढ़कर कोई इबादत नहीं है।

नवीं बात है दीन के लिए तू दुनिया को तर्क कर दे और अपने को खुदा पर छोड़ दे॥

दसवीं और आखिरी बात यह है कि ए बिरादर अगर तू अपने दोस्त से वस्ल चाहता है तो तू रूह और नफ्स को एक में मिला दे।

बस इन्हीं दस बातों में दीन इलाही है।

खुदा ने हमें यह मुल्क दिया। इसे हम शीरीं जबान दें मुहब्बत दें इबादत दें।

अल्लाहो अकबर

• • •

बापू

[रूपक]

पात्र

निर्देशक
उमेश
सतोष
इन्सपेक्टर
शकूर
दयाराम
सकटा प्रसाद
शान्ता
नरेश
हिन्दू
मुसलमान
सिख

निर्देशक बापू ! तुम युग पुरुष हो ! इस युग का इतिहास तुम्हारे पद चिह्नों की रेखाओं से लिखा जायगा। भय और कष्टों को कुचलते हुए जब तुम्हारे चरण बढ़े तो कोई शक्ति उनकी गति नहीं रोक सकी। और वे चरण वहाँ जाकर रुके, जहाँ स्वाधीनता का सिंह-द्वार था।

बापू ! तुमने हमें स्वाधीनता दी। दासता की कालिमा से हमारा जीवन धुंधला हो गया था। तुम सत्य के ऐसे सूर्य थे जिसके उदय से हमारे जीवन में प्रकाश छा गया।

तुमने जीवन में क्रान्ति उपस्थित कर दी। पश्चिमी सभ्यता ने वस्तुओं के प्रभाव से स्वार्थों का जो संघर्ष हमारे मन में उत्पन्न किया था वह तुमने वस्तुओं के यथार्थ मूल्यांकन से सहज ही दूर कर दिया था। इस यंत्र युग में तुमने चरखे का महत्व समझाया। चरखे के पीछे स्वावलंबन और श्रम के रहस्य में तुमने संसार के अर्थ शास्त्र को अर्जित कर लिया। भौतिकवाद के कठोर संघर्ष में तुमने अध्यात्मवाद से प्रेरित आत्म-परिष्कार और हृदय परिवर्तन के सत्य को स्पष्ट कर दिया। पशु बल के सामने तुमने सत्याग्रह की विजय दिखला कर संसार को चकित कर दिया और शताब्दियों से पराधीन देश को स्वतंत्रता का प्रकाश दिखला दिया। विज्ञान के समक्ष तुमने विश्वास को अधिक शक्तिशाली प्रमाणित किया।

(उमेश और संतोष में बातें हो रही हैं)

उमेश भाई संतोष, आज बात क्या है। बिस्तर पर लेटे हुए हो।

संतोष (गिरे हुए स्वर में) आओ उमेश ! बैठो।

उमेश बैठ तो जाऊँगा ही। लेकिन और दिनों तो तुम मक्खन की

तरह उमग और उत्साह से भरे नजर आते थे लेकिन आज तो

सतोष क्या पिक्चर देखकर लौट रहे हो ?

उमेश पिक्चर तो रोज ही देखता हूँ। तुम्हारी सूरत का ही एक पिक्चर देख रहा हूँ। लेकिन ये सिर पर बाल बिखरे हैं और सूरत ये बनी गम की

सतोष तुम तो अपनी जबान ही मुझ पर मांजने लगे। जरा बीमार क्या पड गया

उमेश बीमार ! अच्छा बीमार पड गए ? कैसे ?

सतोष यो ही जरा सर्दी लग गई ? हल्का सा बुखार हो आया और कुछ खाँसी भी उठ खडी हुई !

उमेश वह बैठ नहीं सकती ?

सतोष इसीलिए तो लेट गया हूँ कि खाँसी बैठ जाय !

उमेश देखो यह उठना बैठना ठीक नहीं। यह इन्फ्लूएंजा है। बिगड जाय तो महीना तुम्हें बिस्तर पर रखे ! इसकी अभी से फिक्र करनी चाहिए। पेनिसिलीन का इनजक्शन लेना चाहिए।

सतोष पेनिसिलीन का इनजक्शन ?

उमेश हाँ किसी डाक्टर को दिखलाओ ! उससे इनजक्शन लो।

सतोष मैं डाक्टरों के चक्कर में नही पडता। एक बार उनके चगुल में फसा कि बीमारी न रहने पर भी महीना बिस्तर पर रहना पडेगा।

उमेश ऐसी बात नही। अच्छे डाक्टरो का इलाज थोडी ही देर में बीमारी को ऐसा गायब कर देता है जैसे कभी-कभी तुम्हारे दिमाग से अकल गायब हो जाता है। (हसी)

सतोष अच्छा ! तुम तो डाक्टरों के एजेण्ट मालूम होते हो। मैं तो समझता हूँ कि बीमारी में विश्राम करना बहुत जरूरी है।

और एक बात और

उमेश वह क्या ?

सतोश वह यह कि मन की शक्ति से बीमारी को दूर किया जाय।

उमेश (हस कर) ओफ ओह ! मन की शक्ति से ? ऐसी मन की शक्ति होती तो आज दुनिया के बादशाह होते।

सतोष हा सकते हो ! राम बादशाह ही तो थे स्वामी रामतीर्थ।

उमेश अच्छा तो ! रामतीर्थ ही राम बादशाह बन। यह किसकी शक्ति थी ?

सतोष राम की।

उमेश राम की शक्ति से बीमारी भी दूर हो सकती ह ?

सतोष अवश्य यदि राम की शक्ति में विश्वास हो। देखो ! महात्मा गाधी क्या कहते ह —

('राम नाम' का रिकार्ड बजता है।)

निर्देशक म तो मानता हू प्रार्थना कुछ नही करेगी, पुरुषार्थ कुछ नही करेगा। तो इस मामूली सी खासी हटान में राम नाम को भूल जाऊ ? कसे भूल सकता हू।

महात्मा गांधी ने जिस विश्वास के साथ 'राम' के नाम को महत्व दिया ह वह इस युग म आश्चर्यजनक ह। बापू ! तुमन राजनीति के साथ हृदय की पवित्रता का जो सयोग किया ह वह इतिहास के लिए चिर-स्मरणीय रहेगा।

इस पवित्रता में न्याय का रूप भी कितना पक्षपात रहित था। आज सत्ता हमारे हाथ में ह किन्तु इसका यह तात्पर्य तो नही ह कि हम स्वार्थ के वशीभूत होकर न्याय को अपने पक्ष में करने के लिए अनुचित प्रभाव डालें ? यदि हम ऊँचे पद पर ह तो हमें उसकी मर्यादा रखनी चाहिए।

(दूर से शोर होता है। ये वाक्य सुन पड़ते हैं—'कम्बख्त आँखों में धूल झोंक कर भागना चाहता था।' खूनी तो यही है। हाँ हाँ कमीज तो खून लिया है। इसके कपड़ों पर खून के छींटे देख लीजिए।)

इन्सपेक्टर हाँ तो यही है, वह बदमाश! क्या बे! समझता है कि कानून तेरे बाप की मिलकियत है। चाहा और खून कर दिया। (शकूर से) क्यों शकूर! इसे कहाँ पाया?

शकूर हुजूर! गली से हट कर उस झाड़ी में छिपा हुआ था।

इन्सपेक्टर जहन्नुम में भी छुपना चाहते तो वहाँ भी पकड़ लिया जायगा। कानून की आँखों में धूल नहीं झोंक सकता। क्यों बे खून करना आसान समझ लिया? खून न हुआ लाल पानी हो गया जब चाहे बहा दिया।

शकूर हुजूर! लाल पानी समझा तभी तो इसे काला पानी मिलेगा।

इन्सपेक्टर काला पानी नहीं इसे फाँसी पर चढ़ाऊँगा फाँसी पर। क्यों बे क्या नाम है तेरा?

क़ैदी दयाराम सरकार!

इन्सपेक्टर (हँसकर) दयाराम! नाम तो दयाराम और काम? खून करना। क्या कहना है! नाम के लायक ही तेरा काम क्या है। उस बूढ़े चचा पर तुझे दया नहीं आई?

दयाराम सरकार! पहले तो मैंने उसे बहुत समझाया पर वह गाली पर गाली बकता गया। मैं कहाँ तक गम खाता सरकार! मुझे भी गुस्सा आ गया? मैं अंधा हो गया। मैं नहीं जानता सरकार! कब मेरे हाथों में लाठी आ गई।

इन्सपेक्टर और तुझे यह मालूम हुआ कि नहीं कि लाठी के साथ तेरे हाथों में हथकड़ी आ गई। शकूर! ले चलो इसे थाने में।

शकूर हुजूर! इसके गाँव के एक साहब कौंसिल के मेम्बर भी हैं।

देखिए साहब वे आ भी गए।

(कौंसिल के मेम्बर का प्रवेश)

कौं० मे० आस्वाह !—इन्स्पेक्टर साहब आप ह ? नयराम नी की ! आखिर यह कौन सी बात कि आप इस गाव म तशरीफ लाएँ और आप खबर तक न दें ! कुछ चाय और नाश्ता तो करत ? आखिर म जो इस गाँव में पडा हुआ हूँ वह आप सब लोगा की खातिर ही तो पडा हुआ हू। आप आयें तो ढग से कुछ खाना पीना हो ! नही तो इस गाँव म तो आप लोगा के लायक दूध पानी मिलना भी मुश्किल ह। (पुकारकर) अरे राम हरख ! दौड कर एक कुरसी तो ल आ ! इन्स्पेक्टर साहब इतनी देर से खड ह !

इन्स्पेक्टर काई बात नही ! ड्यूटी पर सब कुछ करना पटता ह। यह तो एक मामूली बात ह ! लकिन माफ कीजिए। म आपको पहिचान नही सका।

कौं० मे० (हँसत हुए) हम्र हम्र हम्र ! अरे आप मुझ नही पहिचानते म तो आपको पहिचानता हू। डिप्टी साहब को भी पहिचानता हू और कोतवाल साहब तो मुझ पर खास महरबानी रखत ह। जब कभी इस गाव में तशरीफ लात ह तो सबस पहले व मर ही गरीबखाने पर तशरीफ लाते ह।

इन्स्पेक्टर अच्छा ?

कौं० मे० जी हाँ ! मेरा नाम सकटा प्रसाद ह। म कौंसिल का मेम्बर हू।

इन्स्पेक्टर अच्छा आप ही सकटा प्रसाद साहब ह !

सकटा ना ! जी ! आपको मन कई बार शहर में देखा ह। और आपके बारे म कोतवाल साहब से भी बात हुई ह। वाह ! क्या कहना ह आपकी मुस्तैदी और होशियारी से तो शहर

भी रोना ह ! आप जैसा अफसर आना तो हमारे शहर के लिए किस्मत की बात ह साहब ! अच्छा तो चलिए। कुछ नाश्ता पानी कर लीजिए।

इस्पेक्टर जी नहीं ! म नाश्ता कर चुका हू। मुझे शहर भी जल्दी लौट जाना ह।

सकटा अब तो आपका काम पूरा हो ही चुका ह ! आप चाहें तो दो रोज ठहर कर शहर जा सकत ह। आप थक आ गए होंग। कुछ आराम तो कर लीजिए !

इस्पेक्टर बहुत-बहुत धन्यवाद ! मुझे जान ही दीजिए।

सकटा मझे एक चिट्ठी कोतवाल साहब के पास भी पहुँचानी है। कुछ देर तो रुक जाइए।

इस्पेक्टर अच्छा गफूर ! तुम मुलजिम को लेकर थान चलो। मैं अभी आता हू।

गफूर जो हुक्म ! (दयाराम के साथ जाता है।)

सकटा आप बहुत महरबान ह इस्पेक्टर साहब ! हाँ तो बात सिफ यही ह कि जो यह खून का मामला ह न ! यह बहुत बढ़ा कर बताया गया ह। दयाराम के चाचा कमजोर तो थे ही। उन्हें गुस्सा आया और व दयाराम को मारन के लिए उठे तो लड खडाकर गिर पडे। उनका सिर फूट गया। दुश्मनो न कह दिया दयाराम न खून किया ह।

इस्पेक्टर जो कुछ भी हो ! अब तो यह तहकीकात से मालूम हो ही जायगा।

सकटा हाँ वह तो मालूम हो ही जायगा। लेकिन आजकल दोस्तो से ज्यादा दुश्मनो की तादाद ह। व तो उल्टी सीधी बातें ही कहेंग।

इस्पेक्टर मेरे चार्ज केस म उल्टी सीधी बातें नहीं चलतीं।

सकटा यह तो म जानता हू इस्पेक्टर साहब ! लेकिन म चाहता हूँ कि यह मामला ऐसा ह जिसम आपको ज्यादा तकलीफ उठाने की जरूरत नही ह । जब खून ही नही हुआ तो खूनी कसा ! इसे तो आपको छोडना ही चाहिए ।

इस्पेक्टर जी ?

सकटा जी हा ! म खुद कोतवाल साहब के पास जा रहा हू । आपकी तारीफ और सिफारिश भी तो करनी ह ।

इस्पेक्टर आप यह तकलीफ न उठाए ! म यह केस छोडूगा नही ।

सकटा छोडन म कोई हज तो नही ह । आग आपकी मरजी ! अब आप इतनी तकलीफ उठाकर आए ह तो आपको भेंट दिए बिना म आपको अपने गाँव से कसे जान दे सकता हूँ । यह रही आपकी भेंट !

इस्पेक्टर यह क्या ह ? मैं ऐसा आदमी नही हू मिस्टर सकटा प्रसाद ! आप इन बातो से मुझ मोल नही ले सकते । म यहाँ एक मिनिट नही ठहर सकता ।

सकटा अरे क्या नाराज हो गए ? यह तो हमारे गाँव का दस्तूर ह साहब ! खर कोई बात नही । कोतवाल साहब को चिट्ठी लिख देता हू ।

इस्पेक्टर जी नही या तो आप डाक से चिट्ठी भेजें या उनसे खुद मिलें । म पोस्टमन नही हू । दयाराम ने खून किया ह उसको सजा उसे मिलनी चाहिए ।

सकटा अब म आपको कसे समझाऊ इस्पेक्टर साहब !

इस्पेक्टर समझान की जरूरत नही ह । आप काउंसिल के मेम्बर ह तो मम्बर की शान के मुताबिक काम कीजिए । महात्मा गाधी के देश में रह कर अब य बातें नहीं हो सकेंगी ।

('याय का रिकाड बजता है ।)

की रोनक है ! आप जैसा
निए किस्मत की बात है
मारता पानी कर लीजिए

इस्पेक्टर जो नहीं ! म मारता कर
जाता ह ।

सकटा अब तो आपका काम पृ
राज टन्र कर शन्र ―
कुछ आराम तो कर ल

इस्पेक्टर बहुत-बहुत धन्यवाद !

सकटा मझ एक चिट्ठी कोत-
दर ता दक जाइए ।

इस्पेक्टर अच्छा शकूर ! तुम
आता हूँ ।

शकूर जो हुक्म ! (दयार

सकटा आप बहुत महरबा
यही ह कि जो यह
बताया गया ह ।
गुस्सा आया और
खडाकर गिर पन्
दिया दयाराम न

इस्पेक्टर जो कुछ भी हा
जायगा ।

सकटा हाँ वह तो मा
से ज्यादा दुश्मन
कहेंग ।

इस्पेक्टर मर चलाय केस

रूप से भाग ने सके। विदेशियो के शासन ने हममें भेद भाव के बीज बो दिए थे।

(अनेक स्थानो पर सभाए हो रही हैं। एक वक्ता हिन्दू सभा मे बोल रहे हैं)

हिन्दू भाइयो और बहिनो ! इस देश में हमारी सख्या सबसे अधिक है। इसलिए राज्य का अधिकार हम लोगो को ही मिलना चाहिए। हिन्दू मुस्लिम दगो में मुसलमानो का ही पक्ष लिया जाता है। बेचारे हिन्दू व्यर्थ में मारे जाते हैं। हिन्दू धर्म सब से पुराना धर्म है। सबसे बडा धर्म है। इसमें वर्णाश्रम धर्म की व्यवस्था है। यह आर्यावर्त्त हमारा है। इसे कोई हमसे छीन नही सकता। हमारा अखड हिन्दुस्तान है। हमारा सनातन धर्म है। राष्ट्रीय स्वयं सेवक सघ हमारा है। हिन्दू महासभा हमारी है। हम मुसलमानो को यहाँ नही रहने देंगे। बोलो हिन्दू महासभा की जय !

निर्देशक और दूसरी ओर

मुसलमान मेरे प्यारे दोस्तो ! कदीम जमाने से हमारी सल्तनत इस मुल्क में रही है। यह लालकिला यह ताजमहल यह फतेहपुर सीकरी यह कुतुब मीनार हमारी इमारतें हैं। आज इस्लाम खतरे में है। हम अपनी सारी कुव्वत लगा देंगे लेकिन अपने हकूक अपने हाथो से नही जाने देंगे। अगर हमारे इस्लाम पर कोई हमला होगा तो हम खून की दरिया बहा देंगे, काफिरो को जहन्नम रसीद करेंगे और देखेंगे कि इस मुल्क पर हमारी ही हुकूमत रहती है। कायदे आजिम जिन्ना, जिन्दाबाद !

निर्देशक और तीसरी ओर

सिख सत श्री अकाल ! भाइयो दे विच आज एलान करदा हूँ क ज हिदुस्तान को जीतने में अगर कोई फौज लडी है वो सिखो

लोग गांधी टोपी पहनते हैं पर आप न जाने क्यों टोपी नहीं पहिनते।

नरेश बात तो उसने ठीक पूछी। फिर?

शान्ता बापू हँसे और बोले कि बीस टोपियों के बराबर का कपड़ा तो आप अपनी पगड़ी में ही पहिन हुए हैं। बाकी उन्नीस व्यक्तियों को नंगे सिर रहना ही पड़ेगा। शायद मैं उन्हीं उन्नीस लोगों में से एक हूँ।

(हंसी)

नरेश बापू ने बड़ा सुंदर उत्तर दिया।

शान्ता हाँ बापू हँसना और हँसाना दोनों ही जानते थे। उनका हृदय पवित्र था इसीलिए उनके मन में हिंसा नहीं थी। इसी चरखे को वे अहिंसा का मूल मंत्र मानते थे। बिना देशों पर आक्रमण किए चरखे के द्वारा वस्त्र तैयार कर वे अन्य देशों का वस्त्र व्यापार खत्म कर देना चाहते थे।

नरेश यह बात तो सच है। मैंने कभी इतना सोचा ही नहीं। आज कल ज्ञात होता है तुम प्रार्थना-सभा में रोज जाती हो। बड़े पते की बातें कहने लगी हो।

शान्ता हाँ प्रार्थना सभा में तो रोज जाती हूँ। अभी १३ दिसंबर को ही बापू ने प्रार्थना सभा में कहा था

('चरखा' संबंधी रिकार्ड बजता है।)

निर्देशक और बापू ने जातीय एकता का शंख-नाद किया उसी का यह फल है कि इतने बड़े देश का संगठन हो सका और इस देश में हिन्दू मुसलमान ईसाई और सिख भाई भाई बन कर रह सके। हमारे देश में सब धर्मों के मानने वाले पूर्ण अधिकार और स्वतन्त्रता से एक साथ रह कर देश की उन्नति में समान

रूप से भाग ले सके। विदेशिया के शासन ने हममें भेद भाव के बीज बो दिए थे।

(अनेक स्थानो पर सभाए हो रही हैं। एक वक्ता हिन्दू सभा म बोल रहे हैं)

हिन्दू भाइया और बहिनो! इस देश में हमारी सख्या सबस अधिक ह। इसलिए राज्य का अधिकार हम लोगा को ही मिलना चाहिए। हिन्दू मुस्लिम दगा में मुसलमाना का ही पक्ष लिया जाता ह। बचार हिन्दू न्यथ में मार जात ह। हिन्दू धम सब से पुराना धम ह। सबसे बडा धम ह। इसमें वर्णाश्रम धम का व्यवस्था ह। यह आर्यावत्त हमारा ह। इसे कोई हमसे छीन नही सकता। हमारा अखड हिन्दुस्तान ह। हमारा सना तन धम ह। राष्ट्रीय स्वय सेवक सघ हमारा ह। हिन्दू महा सभा हमारी ह। हम मुसलमाना को यहा नही रहने देंगे। बोलो हिन्दू महासभा की जय!

निर्देशक और दूसरी ओर

मुसलमान मेर प्यार दोस्ता! कदीम जमान से हमारी सल्तनत इस मुल्क में रही ह। यह लालकिला यह ताजमहल यह फतहपर सीकरी यह कुतुब मीनार हमारी इमारतें ह। आज इस्लाम खतरे में ह। हम अपनी सारी कुवत लगा देंग लकिन अपने हकूक अपन हाथों से नही जाने देंग। अगर हमारे इस्लाम पर कोई हमला होगा तो हम खून की दरिया बहा देंगे काफिरा को जहन्नम रसीद करेंग और देखेंग कि इस मुल्क पर हमारी ही हुकूमत रहती ह। कायदे आजिम जिन्ना, जिन्दाबाद!

निर्देशक और तीसरी ओर

सिख सत श्री अकाल! भाइया दे विच आज एलान करदा हूँ क ज हिन्दुस्तान को जीतने में अगर कोई फौज लडी ह वो सिखा

पात्र

उद्घोषक
सम्राट् अशोक
विक्रमादित्य
स्कन्दगुप्त
हर्षवर्धन
अकबर
नाना फड़नवीस
महात्मा गांधी
जवाहर लाल नेहरू
जनरल डायर
धर्तासिया
घन्चा

उद्घोषक सम्राट अशोक सम्राट विक्रमादित्य स्कन्दगुप्त हर्षवर्धन अकबर महान नाना फडनवीस और महात्मा गांधी जैसे महापुरुषों की परम्परा में विचक्षण बुद्धि और महान प्रतिभा के प्रतीक पंडित जवाहर लाल नेहरू हमारे देश के नव निर्माण के विधायक थे। सम्राट अशोक ने राजनीति की घोषणा करते हुए कहा —

सम्राट् अशोक कुमार सुसीम! राज्यश्री एक महान पर्व मनाती है उसमें महत्वाकांक्षा की भरी नदी में स्नान होता है गुप्त अभिसंधियों का मन्त्र पाठ होता है। प्रशस्तियों के स्तोत्र पढ़े जाते हैं और ऐश्वर्य के पुष्प बिखर जाते हैं। पाटलिपुत्र की राज्यश्री में यह कुछ नहीं होगा। उसमें प्राचीन राजपुरुषों की अर्चना में केवल प्रेम की पुष्पांजलि अर्पित होगी और प्राणों के दीप जलेंगे। यही राजनीति है यही राज्यश्री है।

उद्घोषक सम्राट विक्रमादित्य ने मेघ गर्जन की भाँति कहा —

विक्रमादित्य तुम मेरा न्याय देखना चाहती हो विभावरी? तो सुनो! आर्यावर्त्त को अपना सम्मान स्वयं ही सुरक्षित रखना चाहिए। मालवा गुर्जर और सौराष्ट्र की सीमा अपनी पूर्णता के लिए क्यों किसी से प्रार्थना करे? नदी पहाड़ से कहे कि तुम मेरे लिए किनारा बना दो बिजली बादल से कहे कि तुम मुझे तड़पना सिखला दो? जन-शक्ति स्वयं अपना अधिकार प्राप्त करे उसमें हीनता कैसी?

उद्घोषक स्कन्दगुप्त ने विद्युत रेखा की भाँति तड़पकर कहा —

स्कन्दगुप्त नीच हूण! तू धन लूटने के लिए नागरिकों को गर्म लौहखंडों से जलाता है खौलते तेल में कपड़े डुबा कर शरीरों पर उढ़ाता

है ? उन्हें कोड़े मारता है ? स्मरण रख इन नागरिकों के पास ऐसी शक्ति है कि उनकी रक्त लहरों का प्रवाह तुम्हें देश की सीमा के बाहर फेंक देगा।

उद्घोषक सम्राट हर्षवर्धन ने कहा —

हर्षवर्धन मैंने शत्रुओं का नाश करने की प्रतिज्ञा की है आचार्य दिवाकर! आर्यावर्त में वर्धन-वंश का प्रताप स्थिर रहे यही मेरा प्रण है। यह पुण्य भूमि है सदाचार की भूमि है और कर्म भूमि है। इसकी सुरक्षा वही कर सकता है जिसने आर्यावर्त की अखण्डता हिमालय के विस्तार में देखी है।

उद्घोषक अकबर महान् ने दीन इलाही की घोषणा करते हुए कहा —

अकबर सरा पर्द-ए-चर्ख गर दम्ज बो।
दरू शम्महाएँ फरो जिन्दा बो॥

इस घूमते हुए आसमान के पर्दे के नीचे इस शम्मा को देख जो रौशन है। यह हिन्दोस्तान है—तो यह शम्मा हर जगह रौशन है। इसी रौशनी की किरन बाँधने की कोशिश हमने की है। हमने देखा कि चीज वही है बन्दिशें जुदी-जुदी हैं और इन्हीं बन्दिशों ने इन्सान के सैकड़ों टुकड़े कर दिए हैं। तअस्सुब को काट कर रख दिया किरन के हिस्से कर दिए! सुनो ने हमें यह मुल्क दिया है इसे हम गोरो जबान दें मुहब्बत दें इखलास दें। अल्ला हो अकबर!

उद्घोषक नाना फड़नवीस ने आवेश पूर्ण स्वर में कहा —

नाना फड़नवीस मैं आपको अपमानित नहीं कर रहा, राघोबा काका! आपके कार्य ही आपको अपमानित कर रहे हैं किन्तु अब आप से मेरी प्रार्थना है कि अपनी जननी जन्मभूमि के प्रति विश्वासघाती न बनें। ये अंग्रेज यहाँ व्यापार की सुविधा माँगने के लिए आए थे पर अब ये हमारे देश पर अधिकार करना

चाहते हैं। ये चाहते हैं कि हम लोग आपस में हमेशा लड़ते ही रहें जिससे ये कभी आपके साथ कभी हमारे साथ सधि करके अपने राज्य की जड़ें जमाते जाएं। यह कभी नहीं होगा। इनको ऐसा नहीं करने दिया जायेगा।

उद्घोषक आगे चलकर अपनी शक्ति और साधना के विषय में राष्ट्र पिता महात्मा गांधी ने कहा —

महात्मा गांधी और इसलिए मैं हिन्दुस्तान से अहिंसा का रास्ता अख्त्यार करने के लिए नहीं कहता कि वह कमजोर है। मैं चाहता हूँ कि वह अपनी ताकत और अपने बल को जानते हुए अहिंसा पर अमल करे—मैं चाहता हूँ कि हिन्दुस्तान यह पहिचान ले कि उसके एक आत्मा है जिसका नाश नहीं हो सकता और जो तमाम शारीरिक कमजोरियों पर फतह पा सकती है और तमाम दुनिया के शारीरिक बलों का मुकाबिला कर सकती है।

उद्घोषक और अंत में राष्ट्र विधायक प० जवाहरलाल नेहरू ने कहा —

जवाहर लाल हम भारतीय प्रजाजन भी अन्य राष्ट्रों की भांति यह अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानते हैं कि हम स्वतन्त्र होकर रहें अपनी मेहनत का फल हम खुद भोगें और हमें जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक सुविधाएं मिलें जिससे हमें भी विकास का पूरा-पूरा मौका मिले। हम यह भी मानते हैं कि अगर कोई सरकार ये अधिकार छीन लेती है और प्रजा को सताती है तो प्रजा को उस सरकार के बदलने या मिटा देने का भी हक है। हिन्दुस्तान की अंग्रेजी सरकार ने हिन्दुस्तानियों की स्वतन्त्रता का ही अपहरण नहीं किया बल्कि उसका आधार भी गरीबों के रक्त शोषण पर है और उसने आर्थिक, राजनीतिक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से भी हिन्दुस्तान का नाश कर दिया है। इसीलिए हमारा विश्वास है कि हिन्दु

स्तान को अंग्रेजों से सम्बन्ध विच्छेद करके पूर्ण स्वराज्य या मुकम्मिल आज़ादी प्राप्त कर लेनी चाहिए।

उद्घोषक इस प्रकार पं० नेहरू ने महात्मा गांधी के विचारों को कायरूप में परिणत करने के लिए सारे देश की जनता को अपने व्यक्तिगत सम्पर्क से फौलाद की दीवार बना लिया।

(राजनीति में उनका प्रथम उत्थान)

सन् १६१६ में जलियाँवाला गोली-काँड।

(गोलियों को चलने की आवाजें। प्रत्येक गोली से आहत व्यक्ति का कराह के साथ कहना— महात्मा गांधी की जय !' भगदड़ और चीख।)

उद्घोषक जलियाँवाला बाग। चारों ओर ऊँचे-ऊँचे मकानों से घिरा और बन्द। एक ओर करीब सौ फीट तक कोई मकान नहीं सिर्फ पाँच फीट ऊँची दीवार है। गोलियाँ तड़ातड़ चल रही हैं और लोग दाएं बाएं गिरकर मर रहे हैं। इन्हें कोई रास्ता नहीं सूझ पड़ता। वे दीवार की ओर बढ़कर चढ़ने का प्रयत्न कर रहे हैं। तभी गोलियाँ दीवारों की ओर लक्ष्य कर चलाई जाती हैं। शवों और आहतों के ढेर दीवार के दोनों ओर पड़े हैं। (फिर कराह और चीख) इन भारत माँ के बेटों का हत्यारा जनरल डायर हंटर कमीटी में अपना बयान देकर लौट रहा है।

(लाहौर से देहली जाने वाली रेलगाड़ी की आवाज। जनरल डायर के शब्द।)

ज० डायर दि सिटी ग्रव अमृतसर डिपेंडस ग्रान माई मरसी !

दूसरा स्वर मे आइ नो जनरल डायर ! हाउ इज दिस ?

डायर आइ थॉट आइ शुड रिड्यूस दिस रिटेर सिटी टु एशस बट दन आइ फेल्ट पिटी एंड आइ हड टु रस्ट्रेन माइसेल्फ। ओह माइ

मरसी सेन्ड दि पीपुल ।

उद्घोषक जनरल डायर अपनी दयाशीलता की डींग हाँककर अमृतसर की कुशलता की बात कह रहा है नहीं तो उसने उस विद्रोही शहर को खाक में मिला दिया होता। पडित जवाहरलाल नेहरू सयोग से उसी रेल के डिब्बे के ऊपर के बथ पर लेटे हुए हैं और वे मन ही मन सोचते हैं।

जवाहर लाल (धीमे स्वर में फुसफुसाहट के साथ) ग़रीब जनता का कातिल यही हत्यारा डायर है। सैकडो आदमियों को भून कर रख दिया और अब अपनी मेहरबानी की डींगें हाँकता है! भारतीय जनता का यह कष्ट! मैं उस कष्ट को दूर करूंगा— आज से यही मेरा प्रण है।

उद्घोषक और उसी समय से जवाहरलाल नेहरू भारतीय जनता के प्राण बन गये। भारतीय जनता की आह और कराह उनके दिल की धड़कनें बन गई।

(राजनीति में नेहरू जी का द्वितीय उत्थान)

नेपथ्य में—सम्मिलित स्वर से—

भारत माता की जय! जवाहरलाल नेहरू की जय! महात्मा गांधी की जय! जवाहरलाल नेहरू अ अ जिन्दाबाद।

उद्घोषक ८ अक्तूबर १९२९। लाहौर कांग्रेस के अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू। यह लगभग निश्चित था कि कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन के सभापति महात्मा गाँधी होते। उनके दूसरी बार कांग्रेस के अध्यक्ष होने पर स्वतन्त्रता-सग्राम की बागडोर उनके हाथ में मजबूती से रहती लेकिन गाँधी जी भविष्य-द्रष्टा थे। लखनऊ की अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी में महात्मा गाँधी ने अपना नाम वापस लेकर जवाहरलाल नेहरू का नाम प्रस्तावित कर दिया जिसे सबने स्वीकार कर लिया और

पण्डित नहरू लाहौर अधिवशन क अध्यक्ष बन। इनसे पूव लाड इरविन न कांग्रस और सरकार के बीच समझौत के लिये गांधी जी और सरदार पटल को निमंत्रित किया किन्तु कोई परिणाम नहीं निकला। तभी लाहौर कांग्रेस के मच स पण्डित जवाहर लाल नहरू न भारत क लिए पूण स्वाधीन होन की घोषणा की।

जवाहर लाल हम भारतीय प्रजाजन भी अन्य राष्ट्रों की भांति अपना यह जन्म सिद्ध अधिकार मानते हैं कि हम स्वतन्त्र होकर रहें अपनी महनत का फल खुद भोगें और हमें जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक सुविधाए मिलें जिसमें हमें भी विकास का पूरा-पूरा मौका मिल। हम यह भी मानत ह कि अगर कोई सरकार य अधिकार छीन लती ह और प्रजा को सताती ह तो प्रजा को उस सरकार को बदल देन या मिटा देन का भी हक़ ह। हम शपथपूवक सकल्प करते ह कि पण स्वराज की स्थापना के लिए कांग्रस समय-समय पर जो आज्ञाए देगी उनका पालन करत रहेंगे। हिन्दुस्तान की अंग्रेजी सरकार न हिन्दुस्तानियों की स्वतन्त्रता का ही अपहरण नहीं किया ह बल्कि उसका आधार ही गरीबों के रक्त शोषण पर ह और उसन आर्थिक राजनीतिक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से हिन्दुस्तान का नाश कर दिया ह। इसलिए हमारा विश्वास ह कि हिन्दुस्तान को अंग्रेजों से सम्बन्ध विच्छेद करके पूण स्वराज या मकम्मिल आज़ादी प्राप्त कर लनी चाहिए।

(नेपथ्य मे सम्मिलित स्वर से—प० जवाहरलाल नेहरू जिन्दाबाद! भारत माता की जय!)

उद्घोषक राजनीति में प० नहरू का ततीय उत्थान।

सन १६४७ की पन्द्रह अगस्त को भारत स्वतन्त्र हुआ। स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधान मन्त्री पंडित जवाहरलाल नेहरू निर्वाचित हुए जिनके सम्बन्ध में महात्मा गांधी ने कहा था—मैं कहूँगा कि जवाहर तो किसी से भी धोखा करनेवाला नहीं है जैसा उसका नाम है वैसा ही उसका गुण है। उनकी सरकार में सरदार या जो दूसरे आदमी हैं, उनको भी मैं पहिचानता हूँ। (प्रवचन २ नवम्बर, १९४७) महात्मा गांधी से आशीर्वाद पाकर जवाहरलाल नेहरू ने देश का निर्माण किया। उन्होंने सारे देश में भ्रमण करते हुए जनता से निकटतम सम्पर्क स्थापित किया। वे गरीब जनता के सुख दुःख में भाग लेनेवाले उनके ही बन्धु थे। एक बार वे भाषण देने के लिये फूलपुर गए।

ध्वनि (ग्रामीणों का शोर-गुल)

एक : को हो बतसिया ! आज तू काहे बरे सहर माँ बठि के मुखिया तू बतरावत रही ?

बतसिया : तूँ हमका का समझत हौ ! चच्चा ! अरे हम आज लिचकर सुने गए रहे।

चच्चा : लिचकर ?

बतसिया : हाँ हाँ लिचकर।

चच्चा : केकर लिचकर रहा ?

बतसिया : अरे तुम सुनेन नाही ? जवाहरलाल जी आय रहे लिचकर देय के बरे।

चच्चा : (अट्टहास) अरे हम हूँ तौ उहाँ रहे। बिल्कुल उनके समनवे ठाढ रहें। उनकी आँखिन तू भाल जोडक। वाह ! कसन देवतन के अस उनकर रूप झलकत रहै।

बतसिया : तौ तुम हमसे ठट्ठा करत रह ? समनवे ठाढ होइ के लिचकर

सुनत रहे और आँसिन फाटकर पूछत है केकर लिचकर !
(बुरा मानकर) जा चच्चा ! अब हम तोहसे बोलबै न
करब—हाँ!

चच्चा अरे बतसिया ! देवतन की बातन में बुरा मान का परत है ?
अरे हमार गोड़ टूट होत तब हम तोह से कहत कि अरे
बतसिया ! अपन चाचा क भूँखे पे चढ़ाय क जवाहर महातमा
से लिचकर गुनाव से बर ल चलो । औ तुन तैं कहाँ रही ।

बतसिया हमतो उहं मठवे रामधन गावत रहे—

रघुपति राघव राजाराम ।
पतित पावन सीताराम ॥

चच्चा आहा ! हम तो आपन आँखिन का सुख उठावा । वाह का
मसन रूप रहा ! निचाट सफेद खद्दर के पजामा सेरवानी और
बाँकी टोपी और आहि प गुलाब क फूल तो हाय हाय सेर
वानी प अस खिला रहा जसन हमार किसानिन का भाग
खिला बाट । एसन हँस-हँस क लिचकर देत रहे जसे फूल
झरत होय ! हे बतसिया जसन फूल ! एक गुलाब तो सेरवानी
प रहा मुला सबन्न गुलाबन से फूल मुट त झरत रह !

बतसिया उतो आपन गरे त उतार कै हमका फूल की माला दिहे रह ।

चच्चा अरे तुम लोगन के चाचा हाय बतसिया ! हमहूँ तुम्हार चाचा
अहैं मुला कहाँ राजा भाज औ कहाँ गगू तेली । उतो हमार
देश के राजा अहैं । किसानन औ मजदूरन के दुख दूर करे के
बर ऊ जसे औतार लिहैं होय ।

(नेपथ्य म तीन बार प० नेहरू की जय ।)

उद्घोषक जन जन के प्राणों में निवास कर उन्होंने सच्चे राष्ट्रीय अर्थ
में भारत का निर्माण किया । इन सबट के दिनों में वे इतन
बड़े देश के एक महान कर्णधार थे । भारत में तीन पचवर्षीय

योजनाएं चला कर उन्होंने देश को संसार की प्रतिद्वन्द्विता में प्रगति के पथ पर अग्रसर करा दिया। भारत का औद्योगीकरण और भारत की वैज्ञानिक उन्नति के लिए उन्होंने क्या नहीं किया? राजनीति के क्षेत्र में उन्होंने पंचशील का विस्तार कर तटस्थता की नीति अपनायी और इस प्रकार उन्होंने संसार में एक तीसरी शक्ति को जन्म दिया जो संघर्षशील देशों में समझौता करा सके।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू भारतीय संस्कृति के प्राण थे। उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत को बहुत बड़े सम्मान का अधिकारी बनाया। उन्होंने अशोक चक्र का प्रवर्त्तन करके सम्राट अशोक के प्रारम्भ में कहे गये वे शब्द चरितार्थ किये —

अशोक भारत की राष्ट्रीय परम्पराओं में केवल प्रेम की पुष्पांजलि अर्पित होगी और उसमें प्राणों के दीप जलेंगे—यही राजनीति है—यही राज्यश्री है।

आज सम्पूर्ण देश अपने अश्रुपूर्ण नेत्रों से अपने हृदय सम्राट और राष्ट्र निर्माता अनमोल जवाहर की स्मृति में श्रद्धांजलि समर्पित करता है।



सामाजिक

जीवन का प्रश्न

[समस्या-मूलक एकांकी]

पात्र

सुखदेव
मनबोध
रामजतन
चम्पादे
सोनिया
सरसी
अभय
रतन

(सध्या का समय है । दिन म काफी गरमी पड चुकी है । आकाश मे बादल आ गए हैं और हवा जोर से बहने लगी है । धीरे धीरे वह आंधी का रूप धारण कर चुकी है । रह रह कर हवा के झोंके पेडो और मकान की दीवालों से टकराते हैं । कुछ दूर से समीप आती हुई आवाज—सुखदेव ! सुखदेव भैया !)

(सुखदेव का प्रवेश)

सुखदेव (प्रवेश करते हुए) कौन ह माइ ! इस आंधी में भी चन नहीं लेन देता !

मनबोध सुखदेव भया ! म हू मनबोध ।

सुखदेव मनबोध ? आज चरा के न आए ?

मनबोध भया ! बडे जोर की आंधी आ गयी ।

सुखदेव हाँ आधी ता वड जोर की आई । रोज इसी वक्त आती ह जस उसकी आत्त पड गयी ह । (अधिक जोर का शब्द) ओफ ओह जरा देखो तो ! अर वड जोर ह भया ! तुम्हार ! (रोकने के स्वर म) अरे बस बस

मनबोध अरे सुखदेव भया ! मरी पगडी पगली भी गई। (पकडने के लिए दूर जाते हुए) अर रही-सही इज्जत भी न रक्खी । एसी फर से उडा दी । (लौटते हुए) धन्न मातमरा ! अरे जरा तो खबर करती ।

सुखदेव अरे क्या खबर करगा ! आधे घट स तो झकझोर रही ह । खती जमीन में नाट गई होगी । अब क्या जिन्दगी मिट्टी में मिलन से वचगी ! जिन्दगी भी जायगी, मनबोध ! यह आंधी मिटा के रहगी । (आंधी बहुत धीमी पड जाती है । दूर से

उसकी हलकी आवाज सुनाई देती है।) अरे थामी पड़ गयी। तुम्हारी मातसरी बहुत सी मान गई। अरा वाह री मातसरी !

मनबोध जब सिर की पगड़ी उड़ा दी तब क्या मातसरी रहा !

सुखदेव तुम अपनी पगड़ी का ही बहुत समझते हो मनबोध ! किसन के सिर की पगड़ी भी उड़ रही है। उसके घर में भी आँधी आई है। उसकी लड़की सरसी को जानते हो ? सारे गाँव में सरसी का चक्कर अरे जरा पगड़ी कसके बाँधो ढीली बाँधते हो तभी तो जरा से झोंके में चिड़िया की तरह फुर से उड़ जाती है।

मनबोध चाहे जितनी कसके बाँधूँ पगड़ी सिर पर रहने की नहीं।
(आँधी थम जाती है। दूर धीमा शब्द होता है।)

सुखदेव शायद इसीलिए लोगों ने पगड़ी बाँधना बन्द कर दिया !
(हँसता है—रुककर सहसा) अरे आँधी थम गयी। पहले कितनी ताकत से चली थी ! इसमें यह ताकत कहाँ से आती है ? मनबोध !

मनबोध (कुछ तेज स्वर से) ताकत ! अरे यह हमारी बदकिस्मती की ताकत है। एक तो हमारी किस्मत ही कंकड़-पत्थर की है उन्हीं को उड़ाकर हमें मारती है। अभी हमें मार ले। लेकिन जब हम भी आँधी की तरह बन गए तो धरी रह जायगी यह सारी सेखी !

सुखदेव तुम तो बड़ी बातें मार रहे हो मनबोध ! छोटे सरकार के सामने तो मुँह खोलने की हिम्मत नहीं पड़ती। ऐसे बबस हो जाते हो जैसे पीपल के पेड़ पर लटके हुए चमगादड़ हो।

मनबोध तो मैं छोटे सरकार को थोड़े ही ललकारता हूँ वे तो अपने राजा हैं। क्या आलीशान सुभाव पाया है वाह ! राजा आदमी ! अरे जमींदारी चली जाने से सुभाव थोड़े ही बदल

जाता ह । अब तो बाहर से आ गए होंगे छोटे सरकार !

सुखदेव अभी तक तो नही आए। सुबह से शिकार खेलने गए ह अभी तक नही लौटे ! उस पर यह आधी आ गयी। छोटे सरकार कही भटक न गए हो ।

मनबोध अरे जगल में छोटे सरकार की एक गाय भी भटक गई भया ! वह कहने के लिए आया था। छोटे सरकार कही मुझ पर नाराज न हो जाँय। सब गाए तो मन थान पर बाध दी। एक थान खाली ह। छोट सरकार कही नाराज न हो जाँय !

सुखदेव छोटे सरकार तो बड ऊचे ख्याल के ह जी ! हा काका साहब जरूर नाराज हो जायेंगे ।

मनबोध तो भया ! तुम मुझे बचाना। मेरा कोई कसूर नही ह। सब गाए एक साथ चर क लौट रही थी। तभी जोर की आधी आ गई। म समझता था कि सब गाए लौट आइ लकिन जब उन्हें बाधने लगा तो एक गाय का थान खाली !

सुखदेव तब तो काका साहब तुम्हारा सिर भी खाली करग। तुम काका साहब का गुस्सा नही जानत ।

मनबोध जानता हू भया ! इतन दिन मालिक की नौकरी करके भी न जानू गा ! पर भया सुखदेव ! तुम मालिक के पुरान नौकर हो। उनक घर के आदमी जसे हो ! तुम्हारे कहने से मुझे माफी मिल जायगी ।

सुखदेव मिल तो जायगी पर अब तो आँधी थम गई ह। अब जाकर गाय खोज लाओ। भगवान चाहेगा तो रास्त में ही मिल जायगी ।

मनबोध ठीक ह जाता हू भया ! पर पहले छोटे सरकार का पता तो लगाऊ ! व कहाँ रह गए ह !

(नेपथ्य मे गीत सुनाई देता है ।)

ए ए ए ए ए ए
धारे बहु नन्दिया तैं धारे बहु मोरा पिया उतरइ दे पार रे

मनबोध राम जतन आ रहा है।

सुखदेव हाँ रोज उधर से घर पर लगता है इसी रास्ते से। बड़ी मीठी आवाज है इसकी।

मनबोध बातें भी बड़े ढंग की करता है। अच्छा भया! चलें अब। नहीं तो उसकी बातों में उलझ जाऊंगा। फिर देर हो जायगी। धान सरकार जान कहाँ होंग। अच्छा जयराम जा की।

सुखदेव जयराम जी की।

(मनबोध का प्रस्थान। रामजतन के गीत की आवाज धीरे धीरे पास आती है।)

—काहे की तोर नया र काहे की पतवार ! रे ए ए ए ए

सुखदेव वाह कितनी मीठी आवाज है!

(गीत चलता जाता है।)

के तोर नया खवया र के धन उतरब पारि र
धीर बहु नन्दिया त धीर बहु मोरा पिया उतरइ दे पारि रे
धरम क मोर नया रे सत की है पतवारि र
सया मोरा नया खवया र हम धन उतरब पारि रे॥

(आवाज अब बिलकुल पास आ जाती है। धीरे बहु नदिया त धीरे बहु मोरा पिया)

रामजतन जयराम भया सुखदेव!

सुखदेव जयराम रामजतन! अरे अभी लडके ही हो पर भाई! ऐसा गीत छेडत हो कि सारी दुनियाँ का गठरी म बाँध के खूटी पर टाँग देते हो जसे। और आवाज भी ऐसी मीठी कि जसे भगवान न गन्ने को छील कर तुम्हारा गला बनाया है। भाई!

ऐसा अग्निबान मत गाया करो। ऐसी ठंडी आग लग जाती है कि जैसे बरफ के टुकड़ों से गरम धुआं निकलने लगता है। वाह वा! (बन कर गाता है।) धीरे बहु नदिया तू धीरे बहु

रामजतन अरे रहने दो सुखदेव भैया! तुम तो बिलकुल सियार का सेर बना देते हो। ऐसी तारीफ करते हो कि बबूल के पेड़ में आम निकल जाय। यह तो मैं यूँ ही जी बहलाता हूं। और फिर छोटे सरकार का हुकुम है कि जब यहाँ से गुजरो तो एक तान छेड़ दिया करो। मालिक है न भीतर!

सुखदेव नहीं रामजतन! वे अभी शिकार से नहीं लौटे। कह गए थे शाम को लौट आएंगे सो अभी तक लौटे नहीं। माँ जी दो घंटे से उनकी राह देख रही हैं। जाने कब तक लौटें।

रामजतन लौट रहे होंगे पर आज बड़े जोर की आँधी आ गयी थी। भाई! बड़ा नुकसान किया इस आँधी ने। जाने कितने पेड़ गिर गए। हवा ऐसी झपटी जैसे डाका हो!

सुखदेव मुझे तो अपनी घरवाली की याद आ गयी, भाई! जब गुस्से में आती है तो घर तहस नहस कर डालती है। ऐसी झपटती है कि कपड़े-लत्ते तार तार हो जाते हैं। और आँधी तो बरसात के मौके पर उठती है। उसकी आँधी तो हर दूसरे तीसरे रोज उठ जाती है। हर हफ्ते में दो-तीन बार बरसात हो जाती है।

रामजतन अरे यह तो घर घर का हाल है भाई! (दोनों हँसते हैं।) ठाकुर किशन सिंह को तो तुम जानते ही होंगे। वही रुपया का लेन देन करते हैं। इस लेन देन में उनकी बुद्धि भी बिक गई जैसे। रोज उनमें और उनकी स्त्री में खटपट होती रहती है सरस्वती को लेकर। ठाकुर साहब उसकी शादी एक जगह

ए ए ए ए ए ए
धीरे बहु नदिया तैं धीरे बहु मोरा पिया उतरइ दे पार रे

मनबोध राम जतन आ रहा है।

सुखदेव हाँ राज उसका पसार लगता है इसी रास्ते से। बड़ी मीठी आवाज है इसकी।

मनबोध बातें भी बड़ ढंग की करता है। अच्छा भया! चलें अब। नहीं तो उसकी बातों में उलझ जाऊंगा। फिर देर हो जायगी। वहां सरकार जान बहीं होंगे। अच्छा जयराम जी की।

सुखदेव जयराम जी की।
(मनबोध का प्रस्थान। रामजतन के गीत की आवाज धीरे धीरे पास आती है।)
—काहे की तोर नया रे काहे की पतवार! रे ए ए ए ए

सुखदेव वाह कितनी मीठी आवाज है!
(गीत चलता जाता है।)
के तोर नया खवया रे के धन उतरब पारि रे
धीरे बहु नदिया त धीरे बहु मोरा पिया उतरइ दे पारि रे
धरम के मोर नया रे सत का है पतवारि रे
सया मोरा नया खवया रे हम धन उतरब पारि रे॥
(आवाज अब बिलकुल पास आ जाती है। धीरे बहु नदिया त धीरे बहु मोरा पिया)

रामजतन जयराम भया सुखदेव!

सुखदेव जयराम रामजतन! अरे अभी लड़के ही हो पर भाई! एसा गीत छेड़ते हो कि सारी दुनियाँ की गठरी में बाँध के खूँटी पर टाँग देते हो जैसे। और आवाज भी एसी मीठी कि जैसे भगवान ने गन्ने को छील कर तुम्हारा गला बनाया है। भाई!

एसा अग्निवान मत गाया करो। ऐसी ठंडी आग लग जाती ह कि जसे बरफ के टुकडा से गरम धुआ निकलने लगता ह। वाह वा! (बन कर गाता है।) धार बहु नन्दिया तू धीरे बहु

रामजतन अरे रहन दो सुखदेव भया! तुम तो बिलकुल सियार का सेर बना दते हो। एसी तारीफ करत हो कि बबूल के पड में आम निकल जाय। यह तो म यू ही जी बहलाता हू। और फिर छोट सरकार का हुकुम ह कि जब यहां से गुजरो तो एक तान छड दिया करो। मालिक ह न भीतर!

सुखदेव नही रामजतन! व अभी शिकार स नही लौटे। कह गए थे शाम का लौट आएग सो अभी तक लौटे नही। माँ जी दो घट से उनकी राह देख रही ह। जाने कब तक लौटें।

रामजतन लौट रह हागे पर आज बड जोर की आधी आ गयी थी। भाई! बडा नुकसान किया इस आधी ने। जान कितन पेड गिर गए। हवा एसी झपटी जसे ताडका हा!

सुखदेव मझ तो अपनी घरवाली की याद आ गयी, भाई! जब गुस्स में आती ह तो घर तहस नहस कर डालती ह। एसी झपटती ह कि कपडे-लत्त तार-तार हो जात ह। और आंधी तो बर सात के मौके पर उठती ह। उसकी आंधी तो हर दूसरे तीसरे रोज उठ जाती ह। हर हफ्ते में दो-तीन बार बरसात हो जाती ह।

रामजतन अर यह तो घर घर का हाल ह भाई! (दोनो हंसते ह।) ठाकुर किशन सिंह को तो तुम जानते ही होगे। बडा रुपया का लन-देन करत ह। इस लेन-देन में उनकी बुद्धि भी बिक गई अस। रोज उनमें और उनकी स्त्री में खटपट होती रहती ह सरस्वती की लकर। ठाकुर साहब उसकी शादी एक जगह

तय करता है उनका रूपी दूसरी जगह ।

सुखदेव यह सरस्वती कौन ?

रामजतन अरे वही सरसो ! प्यार में उसे लोग सरसी कहते हैं ।

सुखदेव अच्छा ! वही सरसी जो इस कोठी में आती है ? हाँ, मन भी उसे देगा है । अच्छी है !

रामजतन अच्छी है ? भया सुखदेव ! अब क्या कहूँ कि कसी है ! चलती है तो जैसे चाँदनी के उजाले में भरी नदी में लहरें उमगना है । हँसती है तो जैसे कोई पानी भरने के लिए गंगा जी में कलसा डुबो रहा है ।

सुखदेव बड़े गहरे डूब हो रामजतन !

रामजतन वह तो बाढ़ की नदी है सुखदेव ! बस कुछ पूछो मत । मैं तो जब कोई बिरहा गाता हूँ तो उसी का ध्यान हो आता है । उसे जो देखता है देखता ही रह जाता है ।

सुखदेव हमारे काका साहब के सामने भी तो एक रोज आई थी । काका साहब उसे देखते ही रह गए ।

रामजतन जो दुनियाँ देख चुके हैं वे भी उसे देखते रह गए ?

सुखदेव बात ही कुछ ऐसी है रामजतन ! मालूम होता है काका साहब कुछ और ही बात सोच रहे हैं !

रामजतन क्या ? कौन-सी बात सोच रहे हैं ?

सुखदेव हमारे छोटे सरकार ने अभी तक शादी नहीं की । काका साहब उनसे सकड़ों बार कह चुके । माताजी भी बहुत कहते थक गईं । बहिन अलग परेशान हैं, पर छोटे सरकार के कान पर जूँ तक नहीं रेंगी । काका साहब ज़माना देखे हुए हैं । उन्होंने एक काम किया । जन्माष्टमी के दिन एक उत्सव किया । उसमें सरसी का गाना छोटे सरकार को सुनवा दिया । छोटे सरकार ने सरसी को देखा और सरसी ने छोटे सरकार को ।

रामजतन ता देखने से क्या हो गया ?

सुखदेव यह हा गया कि मरमी न फूल तो कृष्ण जी के चरणा में डाने और आखें छाटे सरकार के चरणा में।

रामजतन अच्छा एसी बात ह ?

सुखदेव हाँ एसी बात ह। किसी से कहने की नहीं ह।

(चम्पादे का प्रवेश)

चम्पादे सुखदेव अभी तर छोट सरकार नही आए ?

सुखदेव नहीं मा जी ! प्रणाम !

रामजतन म भी प्रणाम करता ह मा जी !

चम्पादे किसी का प्रणाम लन की फुरसत नहीं ह मुझे। छोटे सरकार नही आए और यहाँ प्रणामो की बौछार हो रही ह। सब दिखावटी ! जब स जमीन्दारी गई ह घर के नौकर भी सिर चढ़ गए। हम तो जमीदार नही रहे य लोग हो गए हं। वहाँ छाट सरकार जगला-जगला भटक रह हागे यहाँ चम्पादे नौकरा का भा नही भज सकती।

सुखदेव नही माँ जी ! मनबोध उन्हें देखने गया ह मा जी !

चम्पादे तुम क्या नही गए ? तुम्हार पर में मेंहदी लगी ह ? उन्हें खोजन जा नही सकते ? पुरान नौकर होकर तुम हमारा नमक इसी तरह अदा करोगे ? मालिक की तकलीफ में तुम्हें दद नही होता ? अभय प्रताप जगली सूअरा का शिकार करत हं। उन्हें पहने तुम्हारा शिकार करना चाहिए। तुम लोग किस जगली सुअर स कम हो।

रामजतन माँ जी ! म उन्हें खोजने जाता हूँ।

चम्पादे तुम जाओगे ? गीत गा-गा के उन्हें खोजोगे। और यह सुखदेव सुख की नीद सोयगा। तुम लोग बठो म उन्हें खोजने जाऊगी। सुखदेव ! मेरा घोडा तयार कराओ।

सुखदेव (हाथ जोड़ कर) माँ जी ! मुझे माफी दी जाय। आइन्दा कभी ऐसी भूल नहीं होगी। बाबा साहब का हुकुम था कि मैं शाम को कोठी के दरवाजे पर ही पहरा दूँ इसलिए दरवाजे पर ही बैठा रहा। वैसे मेरो कोई खता नहीं है।

रामजतन हाँ माँ जी ! गलती की माफी हो। हम दोनों खोज सरकार को लाउन जाएंगे।

चम्पादे अच्छी बात है। दोनों जाओ और जल्दी से जल्दी मुझे खबर दो कि अभय प्रताप कहाँ है।

सुखदेव जो हुकुम ! चलो रामजतन ! प्रणाम माँ जी !

रामजतन प्रणाम माँ जी !

(दोनों का प्रस्थान)

चम्पादे (सोचते हुए) जमींदारी गई—इज्जत भी गई। और हमारे लिए इज्जत का प्रश्न जीवन का प्रश्न है। सब बेशर्म होकर जिन्दगी बिता रहे हैं ! (पुकार कर) सोनिया ! सोनिया !

सोनिया (नेपथ्य से) आ गई माँ जी !

चम्पादे सब दिन गीत और नाच ! जैसे इसी में जिन्दगी बीत जायगी। जमींदारी जाने पर कोई विवाह के लिए भी नहीं पूछेगा। सोलह बरस की हो गई अभी बचपन नहीं गया !

(सोनिया का प्रवेश)

सोनिया कहिए माँ जी !

चम्पादे अभी तक अभय प्रताप नहीं आया। मुझे चिन्ता है शिकार में कहीं घायल न हो गया हो ! इतनी देर तो उसे कभी हुई नहीं और तू निश्चिन्त बैठी है ?

सोनिया माँ जी ! मैं तो बहुत चिन्तित हूँ। देखिए आज मन कोई उपन्यास नहीं पढ़ा। शाम के वक्त मैं नाचती थी तो मैंने आज पैरों में घुंघरू भी नहीं बाँधे। सरसी को साथ गाने के लिए

बुलाया पर उससे बात तक नहीं हुई। और रामायण से सगनौती भी निकाली तो निकला 'सुनि सिय सत्य असीस हमारी ।'

चम्पादे 'पूजहिं मन कामना तुम्हारी।' यह सगनौती तूने अपने लिए निकाली है या अभय प्रताप के आने के लिए?

सोनिया भैया के आने के लिए। अब दूसरी बात क्या हो सकती है! माँ जी ! भैया के ब्याह की? तो उन्होंने तो जंगल की चिड़िया से ब्याह किया है। दिन भर उन्हीं का गाना सुनते रहते हैं। शिकार खेलना ही उनकी मनोकामना है। कहीं बैठ गए होंगे नदी के किनारे। लकड़ी फेंककर देख रहे होंगे कि लहरें किस तरह बढ़ कर उनके पैरों को चूमती हैं।

चम्पादे तू जितना भोला है उतना भोला अभय प्रताप नहीं है।

सोनिया भैया तो मुझसे भी अधिक भोले हैं माँ जी! जात-पात कुछ मानते ही नहीं। उस दिन एक अंग्रेज से काली हबशिन की शादी करा दी।

चम्पादे अंग्रेज से हबशिन की शादी?

सोनिया हाँ अंग्रेज से हबशिन की शादी। मेरे बचपन का एक अंग्रेज गुड्डा था न? तो उसकी हबशिन गुड़िया से शादी करा दी? और सरसी से कहा तू ब्याह के गीत गा।

चम्पादे अपनी तो खुद शादी करता नहीं, गुड्डे गुड्डी की शादी करता फिरता है।

सोनिया हाँ माँ जी! उस दिन मैंने कहा कि भैया! किससे शादी कराओगे? तो हँस कर कहने लगे, कहने लगे कि कहा नहीं जाता माँ जी। (लजीली मुख मुद्रा)

चम्पादे क्या नहीं कह सकती? किससे शादी करेगा?

सोनिया वह? (शरमा कर) हँस कर कहने लगे कि जब तेरी शादी हो

जायगी ता ता तरी गाग मे शा्ा बर्ग्ग ता।

चम्पादे (हसकर) तरी गाग ता ? पागल क ी का। गरगी ता क्या नर्ों वर लता यर भी ता ठाकुर की सगरी ह। काका गारब भी तरा हाग।

सोनिया (पुकार कर) गरमा या गरगी !

सरसी (नेपथ्य से) चाई सानिया !

चम्पादे भ त्रा ? गरगी भार्ई ह ! कितनी माठी भावाज ह इसकी।

सोनिया वासनी ह ता जम मितार बजता ह माँ जा ! मन उसम कहा कि ईश्वर न कर तू कभा राय। नकिन भगर कभी रोई तो बाँसुरी बजगी।

(सरसी का प्रवेश)

सरसी माँ जी ! प्रणाम करती हूँ।

चम्पादे जीती रह बटी ! कब भाई !

सरसी साँझ को वता बहन सानिया न बुला भजा या मझे।

चम्पादे भा जाया कर बटो ! सानिया हमशा तरो बातें करती रहती ह। भभय तो चला जाता ह शिकार खलन। बचारी रह जाती ह सानिया भकली। किससे बातें कर ! भभी तक भभय नहो भाया। म काका सान्ब को खबर दू। वे भाद्मी भेजें। तुम लोग बात करो।

(प्रस्थान)

सोनिया एक बात कहू।

सरसी हूँ।

सोनिया माँ जी को तू बहुत पसन्द ह सरसी !

सरसी उनकी दया ह सानिया ! तुम्हें पसन्द भाऊ तब कुछ बात ह। एक लोकगीत ह—

मोरी अँखियाँ तो तुम प रीझीं,
बस जइयो क्जरवा की ओट।

सोनिया आह—अपने कजरवा की ओट बसाओ तब जानूँ।

सरसी अच्छा ले बसा लिया तुझे।

सोनिया कहीं भागेगी तो नहीं ?

सरसी भाग क जाऊँगी कहाँ ! सात सुरों की रागिनी में हिर फिर के फिर वही स्वर आ जात हैं। वे रागिनी से निकल नहीं सकते, उसी तरह तुम्हें छोड़कर कहाँ जा सकती हूँ ! घूम फिर कर फिर तुम्हारे सामने आ जाऊँगी।

सोनिया अच्छा यह बता सरसी ! तुझे अपने पिता का घर अच्छा लगता है या यह घर ?

सरसी कभी-कभी तो पिताजी रात भर बाहर रहते हैं। उनके बिना घर सूना-सूना सा लगता है। पर मुझे तो सभी घर अच्छे लगते हैं जहाँ कोई प्रेम से बोलनेवाला हो। तुम मुझसे प्रेम से बोलती हो तो यह घर अच्छा लगता है। पिताजी बड़े दुलार से बोलते हैं तो अपना घर अच्छा लगता है। प्रेम से घर बनते हैं, घर से प्रेम नहीं बनता।

सोनिया यह प्रेम होता क्या है सरसी ? तू प्रेम का नाम बहुत दुहराती है।

सरसी प्रेम तो मैं भी नहीं जानती। लोग कहते हैं कि प्रेम से दो मन मिल जाते हैं लेकिन कैसे मिल जाते हैं यह मैं नहीं जानती। मन तो दिखाई नहीं देता, फिर मन का मिलना लोग कैसे जान लेते हैं ? हवा हवा से मिल जाय तो उसको भी लोग प्रेम कह देते होंगे ?

सोनिया अच्छा बता तेरा मन किसी से मिला है ?

सरसी मिला है।

सरसी मेरी माता जो कभी-कभी पिता जी से यह कहती है। एक गरीब आत्मा जितना अपनी स्त्री को चाहती है फूल की तरह सिर माथ पर रखता है उतना बड़ा आत्मा नहीं। बड़ा आदमी तो अपनी स्त्री को पैर में चुभा हुआ कांटा समझता है जिसे वह दूसरी स्त्री का कांटा बनाकर निकालता है।

सोनिया तू बड़े पते की बातें करती है सरसी! मगर घबरा नहीं। मेरे भैया—

सरसी अरे तुम्हारे भैया तो शिकार से आ गए हाय। अब क्या होगा!

सोनिया (सुनकर) हाँ आ गए। तू यहीं रह!

सरसी (करुण स्वर में) नहीं नहीं। वे फिर मुझे देख लेंगे।

सोनिया देखें और देखते ही रह जायें! क्या बुराई है?

सरसी हाय! तुम तो मेरी लाज चुटकी में लेकर ऐसे फूंक देती हो कि किसी की भी आँखों में भर जाय! मैं जाती हूँ।

सोनिया लेकिन वे तो इधर ही आ रहे हैं। हम लोग भैया के कमरे में ही छिप जायें।

सरसी हाँ यहीं छिप जायें। इस आलमारी के पीछे।

(दोनों छिप जाती हैं। अभय प्रताप का प्रवेश। वह तन्दुरुस्त है और चुस्ती से बातें करता है। कंधे पर बंदूक है। आवाज में इतनी गहराई है जैसे प्रतिध्वनि गूंज कर लौटती है।

अभय सुखदेव!

सुखदेव आया सरकार! (सुखदेव का प्रवेश)

अभय सुखदेव! साथ के लोगों से कह दो कि बाहर की रविशों पर बैठें। ओफ! कितनी गर्द कपड़ों में भर गयी! इतनी तेज आँधी—(सुखदेव का प्रस्थान।) कितने पेड़ों की डालें टूट-टूट कर गिरी हैं जैसे किसी की जमींदारी

के टुकड़े हुए हों।—सुखदेव!

सुखदेव (नेपथ्य से) जी सरकार! (प्रवेश)।

अभय देखो, कोई इस वक्त मेरे पास न आए। मैं माँ से मिलूँगा। (रुककर) कोई पीछे है? (घूर कर देखता है।) कोई नहीं! देखो मेरे नहाने का इंतज़ाम करो और हाँ मातादीन से कहना कि आज मेरे घोड़े की अच्छी मालिश हो। मेरा मोती आज इतना दौड़ा है कि आधा भी मात खा गई!

सुखदेव जो आज्ञा सरकार!

अभय हाँ और सुनो! किशन भी मेरे साथ आया है। उसके पैरों में गहरा घाव आ गया है। काकाजी से कहना कि उसके पैरों में दवा लगा दें। माँ से कहना कि मैं आ गया हूँ। समझे!

सुखदेव जैसी आज्ञा सरकार! (प्रस्थान)

अभय (पुकार कर) रतन! (नेपथ्य से) सरकार! (रतन का प्रवेश)

अभय जूते खोलो। आह—मैं कितना थक गया हूँ!

(कोउच पर लेट जाता है। रतनलाल जूते खोलता है।)

अभय (अपने आप) जंगल की झाड़ियाँ—जैसे जगह जगह जंगली सूअर सिमिट के बैठ गए हैं। टेढ़े तिरछे काँटे जैसे साँप और बिच्छू, जंगली पौधे बन गये हैं—चुभते हैं तो जैसे ज़हर का डंक मार देते हैं।

रतन सरकार! अपने गाँव का जंगल तो बहुत घना है।

अभय हर साल साफ़ कराता हूँ लेकिन बन जाता है। जैसे किसी ग़रीब किसान का कर्ज़ हो।—जंगली सूअर उसमें छिपे रहते हैं—खेतों की फ़सल ऐसी बरबाद करते हैं जैसे इन्हीं के खाने के लिए खेत बोए गए हैं।

रतन सरकार! पैर मल दूँ? जूते में कसे-कसे अकड़ गए होंगे।

अभय मन दो। कोई आया तो नहीं !

रतन कोई नहीं सरकार ! राम जतन आया था।

अभय वह पंडित ? बहुत अच्छा गाता है। बेचारा गरीब है मगर किसी राजदरबार का गवया होता तो महलों में रहता ! लेकिन किस्मत—उसकी किस्मत तो गलियों में बिखरी है। यहीं से वहीं जैसे अपने गीत का ही रास्ता बना कर चलता है। मैं उसे अपने यहीं रखूँगा। शिकार में भी अपने साथ ले जाऊँगा। सुनते हैं संगीत से जानवर भी खिंचकर चले आते हैं।

रतन ठीक है सरकार ! (देख कर) माता जी आ गई।

(चम्पादे का प्रवेश)

चम्पादे अभय ! आज तू कहाँ इतनी देर तक रह गया था ? हम लोग तो तेरा रास्ता देखते देखते थक गए।

अभय (उठकर) माँ जी ! आज कुछ न पूछो। पहले तो बड़ी आँधी आयी फिर एक जंगली सुअर ने शिकार में बड़ा डाला। यों तो जंगली सुअर खेती ही बरबाद करता है आज वह एक गाय से उलझ गया। वह उस गाय को मारने ही वाला था कि मैंने गोली दाग दी। वह गोली की मार खाकर भागा। मैंने अपना घोड़ा तेज किया और उसका पीछा किया। वह अपने को बचाता हुआ इतना तेज भागा कि मैंने मौका उसका पीछा किया।

चम्पादे जंगली सुअर सचमुच बड़ा परेशान करता है !

अभय वह जैसे ही बन्दूक की मार के भीतर आया वैसे ही मैंने एक गोली में उसका काम तमाम कर दिया !

चम्पादे तुम भी बहुत थक गए होगे अभय !

अभय घोड़ा बहुत थक गया और मुझे झाड़ियों के काँटे लगे। कभी भी पर नवीन शिकार में इसकी कुछ याद भी नहीं रहती

और माँ जी ! जब मैं लौटा तो देखा कि वह कानी गाय तुम्हारी ही गाय थी जो जगल में भटक गयी थी।

चम्पादे किन्तु गाय कहाँ है ?

अभय मनबाघ रास्ते में मिल गया। उसी को सौंप दी। वह लेकर आता होगा।

चम्पादे अभय ! भगवान की बड़ी कृपा समझो कि तुम जगल में मौके से पहुँच गए नहीं तो जगली सुअर न मेरी गाय मार डाली होती !

अभय जिसकी ज़िन्दगी है, उसे कोई नहीं मार सकता माँ जी !

रतन (नेपथ्य से) सरकार मैं आऊँ ?

अभय क्या है रतन ?

रतन सरकार काका साहब ने किशनसिंह ठाकुर के पैरों में दवा लगा दी।

अभय ठीक है। अभी किशनसिंह ठाकुर घर नहीं जायेंगे। मैं उनकी चोटें देखूँगा।

चम्पादे किशन सिंह वही न जो रुपया का लेन-देन करते हैं ? उन्हें चोट कैसे लगी ?

अभय माँ जी ! आज बहुत बड़े भेद की बात मालूम हुई।

चम्पादे भेद की ? कैसे भेद की बात ?

अभय किशन सिंह डाकू है। वह डाकुओं के गिरोह में है।

चम्पादे डाकुओं के गिरोह में ?

अभय हाँ डाकुओं के गिरोह में। रात में वह डाका डालता है दिन में रुपया के लेन-देन का व्यवहार करता है।

चम्पादे तुझे कैसे मालूम हुआ ?

अभय जब मैं अपने साथियों के साथ जगल से लौट रहा था तो एक झाड़ी में कुछ लोग छिप कर बातें कर रहे थे। रुपयों का

बटवारा करते समय उनमें झगड़ा होने लगा तभी हमारे आदमी पहुँच गए। मारपीट शुरू हो गयी। किशनसिंह को भी चोट आयी।

चम्पादे आदमी तो बड़ा सीधा मालूम देता था।

अभय हाँ मैं भी उसे सीधा आदमी समझता था लेकिन वह डाकू निकला! जब डाकू भाग गए तब वह पड़ा हुआ कराह रहा था। मैंने पास पहुँच कर उसे पहिचाना। अरे यह तो किशन है! चल नहीं सकता था घुटनों पर उसे गहरी चोट लगी थी। मैंने दो आदमियों को चारपाई लेने भेज दिया। और उससे बातें कीं।

चम्पादे बड़ा बहुरुपिया बना था!

अभय हाँ जब मैंने उससे कहा कि मैं तुम्हें पुलिस के हवाले कर दूंगा तो वह हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ाने लगा और माफी माँगने लगा। मैंने उससे जब सच्चा-सच्चा हाल बतलाने को कहा तो उसने अपना सारा भेद खोल दिया और क़सम खायी कि आइन्दा कभी डाका नहीं डालूंगा।

चम्पादे उसकी क़सम का क्या भरोसा?

अभय एक बात और मालूम हुई!

चम्पादे वह क्या?

अभय सरसा उसकी बेटी नहीं है।

चम्पादे (आश्चर्य से) सरसी उसकी बेटी नहीं है? तब किसकी बेटी है? यह तू क्या कह रहा है?

अभय किशन ने सरसी को पाल-पोस कर बड़ा किया है। वह अहीर की लड़की है।

चम्पादे अहीर की?

अभय एक बार डाकुओं ने अहीर के घर डाका डाला। गाय भैंस छोड़

कर ले गए। उन्होंने अहीर और उसकी स्त्री को कत्ल कर दिया। उसकी छाती से बच्ची बिस्तर पर पड़ी रो रही थी। किशनसिंह उसे उठाकर घर ले आया। तभी से सरसी उसके पास है।

चम्पादे यह बात गाँव में किसी को नहीं मालूम ?

अभय यह बात सरसी भी नहीं जानती। जब कभी उसके बाप की बात चलती है तो किशन और उसकी स्त्री में लड़ाई हो जाती है। मैं इस गुत्थी को सुलझाना चाहता हूँ।

चम्पादे तू कैसे सुलझाएगा ?

अभय सरसी का विवाह

चम्पादे किसके साथ करेगा ? पहले तो मैं समझती थी कि सरसी ठाकुर की लड़की है। इसी घर में चली आएगी।

अभय तो अब भी आ सकती है।

चम्पादे (आँखें फाड़ कर) क्या ? अब भी आ सकती है ?

अभय हाँ, आ सकती है। देखो माँ ! पहले मैं विवाह नहीं करना चाहता था। सोचा था, कि जमींदारी रही नहीं मन का सब उमंगें मन में ही घुट कर रह गयी, तो विवाह का कोई अर्थ नहीं है। शिकार खेलता हूँ, वही जिन्दगी में एक शौक है। जिन्दगी भर खेलता रहूँगा। लेकिन—अब कुछ और बात सोचता हूँ।

चम्पादे जो बात सोचता है, वह हो नहीं सकता। यह गुड्डा की शादी नहीं है कि अग्रज गुड्डा हरिजन गुड्डी से शादी कर ले ! जाति पाँति तोड़ कर शादी नहीं हो सकती।

अभय हो सकती है और होकर रहेगी।

चम्पादे (तेज स्वर में) हम लोग राजपूत हैं, अभय !

अभय राजपूतों ने ही आपस में लड़ कर देश की स्वतन्त्रता खोयी है।

माँ ! यदि हमारे राजाओं ने छोटी-छोटी बातों में अपनी शक्ति न खायी होती तो उनका ओर कोई देख भी नहीं सकता था। जब कोई पहाड़ ज्वालामुखी बन जाता है तो वह अपनी ही आग से अपने चारों ओर की हरियाली नष्ट कर देता है और आग की नदी में सारी भूमि नष्ट हो जाती है।

चम्पादे मैं तेरा बकवास नहीं सुनना चाहती। जब किसी को कोई स्वार्थ साधना होता है तो वह ऋषि-मुनियों की बातें अपने चारों तरफ लपेट लेता है और खुद साधू-महात्मा बन जाता है। लेकिन होता है वह पक्का स्वार्थी।

अभय इसमें मेरा कोई स्वार्थ नहीं है माँ जी ! सरसी की बातें अब लोगों को मालूम हो गयी हैं। अब इस गाँव में उसकी जिन्दगी दूभर हो जायगी। उस भोली-भाली लड़की को अपमान से बचाने के लिए मैं उससे विवाह करूँगा।

चम्पादे लेकिन तू राजपूत है और वह अहीर की लड़की !

अभय तो इससे क्या हुआ ! जब समाज छोटा था तो सुविधा के लिए हमने अपने भाइयों में समाज के काम बाँट दिए थे। इसीमें जाति-पाँति की सीमाएं बन गयी थीं। लेकिन अब तो हमारा समाज बहुत बड़ा हो गया। अब तो सभी व्यक्ति देश और समाज का काम कर सकते हैं। सब एक देश-वासी हैं।

चम्पादे तू समझता है कि तेरी बातों में आकर मैं अपने कुल धर्म को भूल जाऊँ ? मैं इस घर में नहीं रहूँगी अभय ! चम्पादे यह सहन नहीं करेगी। वह घर छोड़ कर चली जायगी।

अभय कभी माँ भी अपने घर-बार को छोड़ सकती है ? अपने बेटे को छोड़ सकती है ? अब तो तुम सारे समाज की माँ हो। जब तुम ऐसा समझोगी, माँ ! तभी तो हम कुछ कर सकेंगे। उलझे हुए जीवन का प्रश्न हल होगा। आज का जीवन तो एक

काला भौंरा है जो प्रश्न चिह्नों के परों से ही चलता है। जब तक तुम उसे उन्नारता और सहानुभूति के पंख नहीं दोगी तब तक वह सुख के फूलों के पास तक उड़ कर जा ही नहीं सकता और आनन्द का रस नहीं पा सकता।

(फिर आँधी की आवाज सुनायी पड़ती है।)

चम्पादे आँधी ! ये आँधी फिर उठी ! आग बुझा आऊं नहीं तो इस आँधी में सारा घर जल जायगा।

(जाती है।)

अभय जाओ माँ ! घर की रक्षा करो क्योंकि तुम माँ हो !

(शीघ्रता से सोनिया का प्रवेश)

सोनिया भया ! भया ! भीतर चलो। न जाने क्या सरसो बेहोश होकर गिर पड़ी !

अभय सोनिया ! सरसो बेहोश हो गयी ? आज जीवन के चारों ओर आँधी बह रही है ! सब उसमें उड़ रहे हैं। हम एक दूसरे को साथ लेकर चलें तो सभी बच सकेंगे। जिन्दगी की नदी में बाढ़ आ गयी है। साथ रहेंगे तो बचेंगे नहीं तो डूब जायेंगे।

(आँधी की आवाज तेज होती है। दूर से रामजतन का गीत सुन पड़ता है।)

'धीर बहु नदिया त धीर बहु
मोरा पिया उतरइ दे पार !

(आँधी की आवाज तेज होती है और उसमें वह गीत खो जाता है।)

शहनाई की शर्त

पात्र

राजन
राजन की माँ
आगंतुक

कानपुर का एक मुहल्ला।
रात के तीन बजे।
शीतकाल का प्रारम्भ। १ अक्टूबर, १९६०।

(एक साधारण कमरा। राजन इसी में सोता है। बायीं ओर का दरवाजा राजन की माँ के कमरे की ओर जाता है। दाहिनी ओर का दरवाजा बाहर सड़क की ओर खुलता है। कमरे के बीचोबीच एक खिड़की है जो पीछे की गली की ओर खुलती है।

कमरे में कोई सजावट नहीं है। बाएं कोने में एक साधारण सी चारपाई है जिस पर दरी और चादर बिछी हुई है। सिरहाने एक तकिया और पताने एक ऊनी चादर। सामने की दीवाल पर चारपाई के समीप तीन खूटियाँ लगी हुई हैं जिन पर अलग-अलग कुरता, कमीज और कोट टँगे हुए हैं। खिड़की के दाहिने ओर एक कलेंडर है जिसमें अक्टूबर महीने का पृष्ठ है। चारपाई के समीप ही एक छोटी टेबिल है जिस पर टाइमपीस पड़ी रखी है। आस पास दो कुर्सियाँ रेलवे टाइम टेबिल और कुछ पुस्तकें, अखबार और पत्रादि रखे हैं। दीवाल पर महात्मा गांधी जवाहरलाल नेहरू और सुभाषचन्द्र बोस के चित्र लगे हैं जो पुराने कलेंडरों से काट कर कार्डबोर्ड पर चिपकाए गए हैं। उस फर्श पर एक दरी बिछी हुई है।

एक ५२ वर्षीया स्त्री फर्श पर बैठी हुई स्वेटर बुन रही है। उसके पास ही मोढ़े पर एक लम्प रखा हुआ है। उसकी रोशनी अधिक तो नहीं है किन्तु उस स्त्री को बुनने में कोई कठिनाई नहीं हो रही है। बीच बीच में स्त्री रुक कर शून्य में देखने लगती है फिर बुनने में लीन हो जाती है।

वातावरण में सन्नाटा और शान्ति है। कभी कभी पक्षी के पंख

फड़फड़ाने की आवाज़ और झींगुर की झनकार सुनायी पड़ जाती है। रात के तीन बजे का घंटा दूर से सुनायी देता है। घण्टा सुनने पर वह स्त्री बनना छोड़ कर दरवाज़े की ओर देखती है फिर उठ कर बाहर खुलने वाले दरवाज़े तक जाकर बाहर देखती है। दो क्षण रुक कर निविस पैरों से फिर अपनी जगह लौट आती है। बैठ कर अनमन रहता से फिर बनने लगती है।

कुछ क्षणों बाद दरवाज़े पर किसी के आने की आवाज़, दरवाज़ा खटखटाया जाता है लेकिन खुला होने के कारण स्त्री नहीं उठती वह दरवाज़े की ओर देखने लगती है। कहती है—खुला है।

राजन का प्रवेश। स्वस्थ और देखने में आकर्षक। आयु २८ वर्ष। सामान्य कुर्ता जवाहर वास्केट, धोती और चप्पलें पहने हुए है। वह आते ही ठिठक जाता है।)

राजन (आग्रह के स्वर में प्रश्न की मुद्रा) माँ तुम अब तक सोई नहीं?

(माँ कुछ नहीं बोलती।)

राजन रिक्शावाले ने बड़ा तंग किया। (वास्केट उतार कर खूंटी पर टाँगते हुए) तीन मील का रास्ता! महाशय रिक्शा ऐसे चला रहे थे मानो बारात के साथ चल रहे हों! (चप्पलें कोने में उतार कर माँ के पास आते हुए) मैंने कहा—भाई! कुछ पैसे ज्यादा ले लेना तेज़ी से चल चला—लेकिन बेचारा कैसे चले! खाने को मिलता नहीं ताक़त कहाँ से आए? और अब ठंड भी पड़ने लगी है। (सहसा) माँ! तुम कुर्सी पर बैठ जाओ। ठंडी ठंडी हो गयी होगी। मैं तो समझता था कि तुम सो गयी होगी। यहाँ तुम स्वेटर हो बन रहा है। रात के तीन बज गए हैं। जानती हो?

माँ (भरे कंठ से) शीला चली गयी राजन!

राजन (टहलते हुए) माँ को तो बच्चों के जाने का दु:ख होता ही है।

माँ चलते समय उसकी आँखों से कितने आँसू गिरे! वहा मेरी छाती में समा गए हैं। (शब्द कंठ में रुक जाते हैं।)

राजन दीदी से बड़ी ममता है!

माँ चलते समय कैसे लिपट कर रोई थी मेरे गले से? (आँखों से आँसू झलक उठते हैं। अपने आँचल से पोंछती है।)

राजन अब तुम भी रोने लगी माँ! रास्ते में भी दीदी की आँखों में आँसू थे। मैंने समझाया—बहुत रो चुकीं, दीदी! हर एक काम की हद होती है अब चुप हो जाओ। दिवाली में फिर तुम्हें लेने आऊँगा। तुम्हारे ही हाथों से इस छोटे-से घर में दिए रखे जायेंगे। तुम्हीं लक्ष्मी जी का पूजन करोगी। जीजा तुम्हें जल्दी भेजते नहीं इसलिए जीजा जी को वश में करने का मंत्र जगाऊँगा। रात भर एक पैर से खड़े होकर माँ! दीदी आँसुओं में भी मुस्करा उठीं।

माँ (मुस्कराकर) बातें करने में तो तू एक ही है। अच्छा किया तूने जाते वक्त अपनी दीदी को हँसा दिया। गाड़ी में उसे जगह मिल गयी थी? (फिर बुनने लगती है।)

राजन बड़ी भीड़ थी माँ! गाड़ी में। एक बजे की गाड़ी दो बजे आयी, तीन नम्बर के प्लेटफार्म पर। चार थे हम लोग। दीदी में नौकर और सामान। पाँच बार गाड़ी की सूचना हुई, तब छठी बार गाड़ी आई।

माँ तूने तो सारी गिनती ही गिन डाली।

राजन मैंने दीदी को खूब हँसाया। अपने मित्र टिकट इन्सपेक्टर से कह रखा था। अच्छी जगह मिल गयी। मैंने बर्थ पर दीदी का बिस्तर खोल दिया और कहा—दीदी! शकुन्तला के पत्र लेखन की मुद्रा में लेट जाओ। वे लेट गयीं। जैसे आरती

के बाद देवी शयन कर रहा है।

माँ बड़ा भक्त है अपनी बहिन का !

राजन भक्ति में बड़ा रस होता है माँ। तुम तो जानती हो हमेशा कीर्तन करती हो। चाहता हूँ कि रात भर दीदी के गुणों का कीर्तन करूँ लेकिन (घड़ी की ओर देखते हुए) सवा तीन बज चुके। माँ अब तुम भी सो जाओ।

माँ मुझे नींद नहीं आएगी बेटा ! आज शीला के बिना कुछ अच्छा नहीं लगता। अच्छी अच्छी बातें कर तो मेरा मन कुछ बहल जाय।

राजन इतनी रात गये ? (हाथ झुलाकर) ठीक है। मन ही बहलाना है सो मैं दस तरह की बातें कर सकता हूँ। जिन्हें तुम अपने स्वेटर के साथ बुन लो। लेकिन माँ ! कुर्सी पर बैठ जाओ। नहीं तो फर्श की ठंड तुम्हें तकलीफ देगी।

माँ अच्छा बेटा ! बैठ जाऊँगी कुर्सी पर। ठंड से क्या जीना ही कितने दिन है ! (उठकर कुर्सी पर बैठते हुए) तू तो ऐसी बातें करता है कि हजार मन उदास हो हँसी आ ही जाती है। नहीं तो शीला के बिना यह सूनापन मुझे चैन न लेने देता ! (फिर बुनना आरम्भ करती है।)

राजन तो यह बुनना तो बंद करो।

माँ तेरे लिए ही तो बुन रही हूँ बेटा। बाँह उतार लूँ तो एक काम खतम हो जाय ! शीला भी तेरे लिए बुन रही है। देखूँगी मैं जल्दी खतम करती हूँ कि शीला। यहाँ रहती तो जल्दी खतम कर लेती। वहाँ इलाहाबाद में हजार झंझटें। (बुनती है।)

राजन तो दीदी हमेशा तो यहाँ रह नहीं सकतीं। उन्होंने पंद्रह दिन रह लिया यही बहुत किया। सारी गृहस्थी दीदी ही को तो

देखनी पड़ती है। जीजा जी को तो आफिस के काम से ही फुरसत नहीं। ये कब तक रहती यहाँ, आखिर किसी न किसी दिन तो उन्हें यहाँ से जाना ही पड़ता।

माँ ठीक है, बेटा! लड़की पराये घर के लिए तो होती ही है। मधुमक्खी अपने छत्ते में शहद सजाती है, चाहे जो तोड़ कर ले जाय! जिसको न कभी देखा न समझा, उसीके हाथ बिक आओ। चार की खुशामद करके उसे चाबी सौंप दो और हाथ जोड़ कर कहो कि हमारी तिजोड़ी का धन तुम्हारे लिए ही है ले जाओ।

राजन (हँसते हुए) लेकिन जीजा जी चोर नहीं हैं माँ! बहुत बड़े अफसर हैं। मोटर बंगला नौकर सभी कुछ तो है उनके पास। फिर जीजा जी भी दीदी को बहुत मानते हैं माँ! ज्यादा दिन उनके बिना नहीं रह सकते। इधर पंद्रह दिनों में ही बुलावा भेज दिया। दीदी बहुत सुखी है, माँ!

माँ उसका भाग है, बेटा! लेकिन तेरे पिता जी ने कितनी दौड़ धूप की तब ऐसा घर पाया!

राजन आज पिता जी होते!

माँ (विह्वल होकर) राजन!—(बुनना छूट जाता है।)

राजन (अपनी गलती महसूस कर) ओह माफ करो माँ! कैसी बात कह दी! (बात पलटने के विचार से) अच्छा, माँ! दीदी ने जाते समय फिर तुमसे प्रणाम कहा। (सहसा स्मरण कर) हाँ, माँ! दीदी अपना हाथी दाँत की मूठवाला चाकू तो यहाँ नहीं भूल गयी?

माँ हाँ भूल गयी है, बेटा! आज उसने इस स्वेटर का ऊन काटने के लिए चाकू निकाला था—फिर यहीं छोड़ गयी। न उसे याद रहा न मुझे। सहेज कर अपने पास रख ले। वह वहाँ

पी। उस म पास दरी पर है।

राजन (दरी पर झुक कर नीचे से चाकू उठाता है।) यह रहा। अच्छा चाकू है! (देखता है।) कहाँ रखूँ इसे? अभी तो तकिए के नीचे रख सकता हूँ। रात में कोई मैं बहुत अच्छे सपन हो देखूँगा। सुबह दिवान से रख दूँगा। (तकिए के नीचे रखने के लिए बिस्तर के समीप जाता है, रख कर लौटते हुए) जब कोई घर से जाता है माँ! तो सब के मन पर जाने की याद ही छा जाती है। और सब बातें भूल जाती हैं। दीदी अपना चाकू ही भूल गयीं!

माँ शीला का जाना भी कैसा हुआ बेटा! शाम तक कोई बात नही थी। तुम्हारे जीजा जी का तार आया और शीला की तयारी हो गयी। इसी रात की गाडी से।

राजन हाँ आखिरी गाडी तो रात ही की थी। रलववाला ने भी कानपुर जसे शहर के लिए कसा आधी रात का वक्त चुना है! आधी रात—पहले यहाँ खूब व्यापार होता था। अब चोरबाजार होता है। ठीक है कानपुर में चोरबाजारी आधी रात के वक्त ही ठीक होती है। इसीलिए गाडी का टाइम भी यही रखा।

माँ हम लोगों को चोरबाजारी से क्या करना है बेटा! यह तो चोर लोग ही सोचें और फिर जो चोर होता है उसे क्या दिन! क्या रात!

राजन हाँ चोर होते भी कई तरह के हैं माँ! एक चोर तो वे होते हैं जो—

माँ (बीच ही में) बेटा! रात में चोरों का नाम लेना ठीक नही। कहते हैं चोर-चोर कहने से रात में चोर आ जाते हैं।

राजन आए भी तो क्या ले जाएंगे! अपने पास धरा ही क्या है!

(चारपाई की ओर संकेत करते हुए) यह टूटी चारपाई !
जिस पर गद्दा भी नहीं है, सिर्फ दरी चादर और तकिया !
यह टूटी-सी टेबल पुरानी घड़ी एकाध कुर्सी—यह फटी दरी
जिस पर बैठ कर तुम स्वेटर बुन रही हो—

माँ अरे चोरों की कुछ न पूछो ! वे तो गरीबों का घर भी लूट लेते हैं !

राजन तो मेरा ही घर लूट के देखें। माँ ! मैं तो बड़ा प्रसन्न होऊं अगर चोर यहाँ आएं। मैं कहूँगा—शाबाश मेरे दोस्त ! तुमने तो मुझे बड़ा आदमी समझा। दुनिया के सब लोग तो मुझे गरीब क्लर्क समझते हैं एक तुम हो जिसने मुझे बड़ा आदमी समझा ! आओ मुझे लूटो। लेकिन अगर तुम्हें कुछ न मिले तो नाराज मत होना। मेरे दोस्त बन के जाना।

माँ चोरों को देख कर तो लोग घबरा जाते हैं राजन !

राजन वे लोग घबरा जाते हैं माँ ! जिनके पास लाखों का माल होता है। माल लेने की जबरदस्ती में चोर हथियार भी चलाते हैं—पिस्तौल खींच लेते हैं। यहाँ, है क्या ? जब पैसे ही नहीं हैं तो डर किस बात का ! और चोर इतने मूर्ख नहीं होते माँ ! कि हम लोगों के साथ अपना वक्त बरबाद करें। वही वक्त वे सेठों की तिजोरियाँ लूटने में लगा सकते हैं। मेरी तनख्वाह में तो उन तिजोरियों का ताला भी न आयगा !

माँ तेरी तनख्वाह तो मिल गई होगी। आज पहली तारीख है।

राजन हाँ, माँ ! मिल गई। दोनों की बिक्री में तुम्हें देना ही भूल गया। लेकिन है ही कितना ! महगाई मिला कर सिर्फ ८२ रुपये। एक छोटे से लिफाफे में तनख्वाह ऐसे समा जाती है जैसे मुँह में लमनड्राप। अपनी यह तिजोड़ी है न ! तकिया। उसके नीचे रख लेता हूँ। दिमाग के नीचे दिमाग की कीमत !

माँ तेरे दिमाग़ की कीमत तो बहुत है राजन ! कभी तू भी ऊंची तनख्वाह पायेगा ।

राजन भाग की देखी जायगी माँ ! अभी तो सिर्फ ८२ रुपये मिलता है। फिर इस महीने में तुम्हारी साड़ी के पिछले हिसाब के २० रुपये भी देने हैं ।

माँ तू तो जबरदस्ती ले आया । बुढ़ापे में क्या महीन, क्या मोटी ! तेरे २० रुपये किसी और काम आते ।

राजन किस काम आते ! आजकल २० रुपये क्या होते हैं माँ ! रुपया तो ओस की बूंद बन गया है । ज़रा सच की गर्मी आई कि साफ । देखने भर में अच्छा लगता है । हाथ में उठाओ तो पानी । फिर ८२ की बिसात क्या माँ ! तनख्वाह तो ऐसी लगती है जैसे सेमल की रुई । फूंक मार दो तो कहीं भी उड़ जाय ।

माँ कोई इसे सम्हालने वाला नहीं है बेटे ! तू ब्याह कर ले तो तेरा रुपया भी बचने लगेगा । और तरक्की भी हो जायगी । कहते हैं कि घर की लक्ष्मी आकर तनख्वाह बढ़वा देती है ।

राजन (हंसकर) घर की लक्ष्मी ! घर की लक्ष्मी क्या कोई अफसर है जो तरक्की दे देती है ? छोड़ो माँ ! ये बातें । मुझे ब्याह करना ही नहीं है । ८२ रुपये में हम दोनों का खर्च तो चलता नहीं । तीसरा आदमी आकर तुम्हारी दो रोटियों में भी हिस्सा बटा लेगा !

माँ यह तो अच्छा है बेटा ! मगर मेरे मुंह का अन्न किसी दूसरे के पेट में जाय तो इससे बढ़कर मुझे क्या खुशी होगी।

राजन तुम तो माँ हो । बड़ी मीठी बातें कर लेती हो । कोई कड़वी बात कहने वाली मिली तब !

माँ मैंने ऐसे कौन पाप किए हैं जो कड़वी बात कहने वाली

मिलगा । फिर पढ़ी लिखी लडकी कडवी बात को भी मीठी बना लती ह ।

राजन (उठकर) पढ़ी लिखी लडकी ! ना माँ ! पढ़ी लिखी लडकी से भगवान बचाए ! आजकल की पढ़ी लिखी लडकियां तो एसी ह जसे इश्योरेन्स पालिसी । हर महीने एक भारी प्रीमियम भरते जाओ । फिर आज यह चाहिए—कल वह चाहिए—जब बाहर निकलेंगी तो मालूम होगा कि चलती फिरती नुमाइश जा रही ह । कहा नरगिस की नकल कहा शोला की शकल । इसे मैं हुने सौदे को इस टूटी चारपाई पर सजाऊंगा ? तुम्ही बोलो माँ ! इस इन्द्र धनुष को अपने जसे गध की पूँछ से बाँधूगा ?

माँ (हसकर) तू तो चक्कर देने लगा ! अर किसी सीधी सादी लडकी को घर की लक्ष्मी बना ल । जो हँसे तो फूल गिरें और रोये ना मोती बरसें । पूरा घर का देवी हो ।

राजन अर माँ ! य परियों की कहानियाँ ह । मुझ जसे निराश याद मियां न ही य कहानियाँ लिखी होगी ।

माँ य कहानियाँ नही बट ! य बातें सच ह । हमार घरो में आज भी एसी देवियाँ ह । मन एक लडकी की माँ स बातें की ह । और अच्छी बातें की ह ।

राजन क्या बातें की होगी, माँ ! यह तो तुम्हारी ममता ह । अच्छा छोडो इन बातों को ! न कोई सीधी लडकी मिलगा, न म शादी करूगा ।

माँ बस एसा कहन में आजकल क लडक अपनी शान समझते ह । म शादी-वादी कुछ नही करूगा । कहते तो ऐसा ह लेकिन लडकियों के पसन्द के कपडे पहनते ह । छपे बुशर्ट दिखाते फिरते हैं । कितने ठाठ-बाट से रहते हैं !

राजन दूसरा की क्या ग्रा [illegible] मां ! मैं क्या कर पहनता हूँ ! (खूँटी की ओर संकेत कर) कुरता और पजामा। न फशा—न टाठ-बाट ! एक मामूली मनव कहाँ से ठाठ-बाट करेगा ?

माँ तो क्या जो ठाठ-बाट नहीं करते उनकी शादी नहीं होती ? उनकी शादी में जो सुख है वह ठाठ-बाट करने वालों की शादी में नहीं है।

राजन अब मैं शादी की बात क्या जानूँ !

माँ आग जान लगा। देर-सबेर तो तुझे शादी करनी ही पड़ेगी एक पहिए से गाड़ी कब चली है ?

राजन मैं तो माँ ! एक पहिए पर ही सैर कर रहा हूँ।

माँ जगह-जगह की ठोकर खा रहा है कि सैर कर रहा है ! अच्छी बात है अब मैं उठती हूँ। तेरी बातों में बड़ा काम हो गया। (उठने का उपक्रम करती है।) इस छोटी-सी तिपाई पर मैंने दूध रख दिया है। इसे पी लेना।

राजन इतनी रात गए ? अब दूध नहीं पियूँगा माँ !

माँ अगर कोई कहने वाली होती तो पी लेता। खुद न पीता तो उसे पिला देता। अच्छी बात है जब इच्छा हो तब पी लेना। तेरे सिरहाने रख देती हूँ। (सिरहाने की टेबल पर रखने के लिए चलती है।)

राजन (रोककर) मैं रख दूँगा माँ ! मन हुआ तो सोते वक्त पी लूँगा। अब तुम जाकर सोओ।

माँ मैं सोऊँ ? अब क्या सो सकूँगी ! मैं सोचती हूँ बेटा ! कि अब सुबह होने ही वाली है। नींद तो आएगी नहीं। मैं गंगा-स्नान के लिए चली जाऊँ। काशी की माँ भी जाग उठी होगी और गंगा-स्नान की तैयारी कर रही होगी।

राजन नहीं माँ ! सुबह होने में अभी देर है। एक घण्टे की नींद भी

बहुत है।

माँ लेकिन आँखों में नींद कहाँ है बेटा! गंगा स्नान में मेरा मन भी बहल जायगा, शीला के नाम की भी डुबकी लगा लूँगी।

राजन अच्छी बात है। तुम्हारे आशीर्वाद से ही तो हम लोग जी रहे हैं। जाओ गंगा-स्नान के लिए। लेकिन अँधेरा है। मैं चलूँ तुम्हें पहुँचाने के लिए?

माँ इसकी क्या ज़रूरत है, बेटा! काशी की माँ का घर बगल में ही तो है। दस बार मैं आई-गई हूँ। मैं चली जाऊँगी। तुम आराम से सो जाओ। मैं भीतर से अपनी धोती ले आऊँ।

(बाएं दरवाज़े से भीतर प्रस्थान)

राजन (सोचता हुआ) माँ का हृदय—बच्चों की याद में आँखों से नींद गायब—मुँह अँधेरे गंगा-स्नान—(टहलते हुए) दोनों के नाम की डुबकी लगाएँगी, ठीक है—जाओ गंगा स्नान के लिए (अपना बिस्तर ठीक करने लगता है। बीच बीच में गुनगुनाता जाता है)—गंगा तेरी लहर हमारे मन माई—गंगा तेरी धारा हमारे—

(धोती-तौलिया लेकर माँ का प्रवेश)

माँ अच्छा बेटा! अब जा रही हूँ।

राजन माँ! जाओ—मेरे नाम की डुबकी भी लगा लेना। दोनों तुम्हारी बेटी हैं तो मैं भी तो तुम्हारा बेटा हूँ।

माँ बेटा ही नहीं प्यारा बेटा है—मैं तेरे नाम की भी डुबकियाँ लगाऊँगी।

राजन माँ! गिन कर लगाना।

माँ हाँ, हाँ, गिन कर—भूल जाऊँगी तो फिर से गिनना शुरू करूँगी।

राजन अच्छी बात है तो जाओ—यह टार्च लेती जाओ, रास्ते में

काम देगा। (तकिये के नीचे से टार्च निकाल कर देता है।)

माँ गंगा की गली तो एसा है कि मांस मुँह कर चला जाऊगी। और अब कुछ किया था तो इसी गली से जाना है। मांस मुँह कर लेकिन—मगर दे दे। मैं जाऊगी—(टार्च लेती है।) तुझे और कुछ तो नहीं चाहिए?

राजन और कुछ नही चाहिए माँ!

माँ मन हो तो दूध पी लेना। अच्छा अब तू भी सो। कल तेरा आफ़िस है। सोयगा नहीं तो काम कैसे करेगा! अच्छा अब मैं चलती हूँ। राधे गोविन्द—राधे गोविन्द—

(प्रस्थान)

राजन (माँ को द्वार तक पहुंचा कर लौटता हुआ) मेरी अच्छी माँ—मेरी कितनी चिन्ता—यह दूध—सुना नहीं पिया—कहती है—बहन वाली होती तो पी लेता—और कहती है ब्याह कर तू—मैं क्या ब्याह करूंगा! ब्याह करने वालों के रंग-ढंग ही दूसरे होते हैं। खैर देखा जायगा। अब मैं भी सोऊं—(चारों ओर देखता है।) खिड़की खोल दूं—ठंडी हवा आए—(खिड़की खोलता है) दरवाजा बन्द कर दूं! (दरवाजा बन्द करता है। लौट कर चारपाई के समीप आता है। दूध पीने के लिए उठाता है। एक क्षण रुककर) अब नहीं पियूंगा। सुबह चाय के काम आयगा। अब सोऊं। ईश्वर किसी को गरीब न बनाये! (लैम्प की बत्ती कम करता है। कमरे में बहुत हल्का उजेला रह जाता है। राजन चारपाई पर बैठता है फिर चद्दर फैला कर ओढ़ता है और जय श्री राम कह कर लेट जाता है।)

(दो क्षण की शान्ति। खुली हुई खिड़की से टार्च की रोशनी आती है। फिर वह रोशनी भिन्न भिन्न स्थानों पर

पड़ती है। धीरे धीरे एक व्यक्ति अपने को काले ओवरकोट मे छिपाए खिड़की से उतर कर कमरे में प्रवेश करता है। कोट का कालर उठा हुआ है और उसकी आँखों पर काला जालीदार कपड़ा है। वह टार्च से चारों ओर देखता है। उसके हाथ मे रिवाल्वर है। वह रिवाल्वर सतर्कता से हाथ मे साधे हुए आगे बढ़ता है। खटका होता है।)

राजन (चौंक कर सिर उठाते हुए) कौन ? कौन है ?

(आगन्तुक रिवाल्वर आगे बढ़ाता है और भारी आवाज में बोलता है।)

आगन्तुक चुप ! रिवाल्वर चला दूगा। रुपया निकालो।

राजन रुपया ! (ऊंचे स्वर में) चोर ! (उठता है।)

आगन्तुक वहां रहो। आवाज निकाली तो गोली मार दूगा। रुपया निकालो। (रिवाल्वर उठाता है।)

राजन (चारपाई पर बैठ जाता है) रुपया ? रुपया नहीं है। मैं ग़रीब हूं—मैं ग़रीब क्लर्क हूँ—

आगन्तुक (भारी आवाज में) चुप ! रुपया निकालो (रिवाल्वर सामने करता है।) तुम्हारे तकिए के नीचे लिफाफा है। कल तुम्हें तनख्वाह मिली है।

राजन तनख्वाह का रुपया ! लेकिन—लेकिन तकिए के नीचे—

आगन्तुक मैंने दीवाल के पीछे से सब बातें सुनी है।

(रिवाल्वर तान कर) निकालो लिफ़ाफा।

राजन (गिरे हुए स्वर में) मेरे महीने भर का खर्च—२० रुपये माँ का खाता के—

आगन्तुक शोर नहीं—मेरे पास ज्यादा वक्त नहीं है।

राजन रुपया ले लीजिए। कोई बात नहीं—महीने भर भूखा रहूगा—आपने मुझे बड़ा आदमी समझ लिया ! जो थोड़ा-सा रुपया मेरे

गाग है स माजिए।

आगन्तुक जल्दी करो।

राजन मालूम होता है आप गलती से मेरे घर में आ गए हैं। किसी बड़े सेठ के घर जाते तो ८२ रुपये के बजाय ८२ हजार मिलते! मेरा मकान सुनसान में है जो चाहे चला आए।

आगन्तुक बातें मत करो। लिफाफा मेरे पास फेंक दो।

राजन अच्छा, निकालता हूँ। (उठ कर तकिए के नीचे हाथ डालता और तकिए के नीचे ही चाकू खोल कर खड़ा हो जाता है।) यह चाकू देता? भाक दूँगा।

आगन्तुक (दबी हंसी हंसकर) बेवकूफ! रिवाल्वर के सामने चाकू? एक कदम आगे बढ़े तो गोली तुम्हारी छाती के आरपार होगी। निकालो लिफाफा।

राजन (शिथिल होकर) अच्छा लिफाफा ही ले लीजिए—(तकिये के नीचे से लिफाफा निकाल कर आगन्तुक के आगे फेंकता है।) एक क्लर्क डांट खाते-खाते कायर बन जाता है। चाहे आफिसर हो चाहे चोर हो। उसके लिए दोनों एक हैं। लीजिए यह चाकू भी ले लीजिए गोली मार कर गला भी काट दीजिए! (चाकू भी फेंक देता है) मैं इसी लायक हूँ। कायर क्लर्क!

आगन्तुक (लिफाफा उठाते हुए) मैं कातिल नहीं हूँ और चोर भी नहीं हूँ।

राजन चोर नहीं हैं? किसी गरीब से रात में जबरदस्ती रिवाल्वर के जोर से रुपये छीनते हैं और कहते हैं मैं चोर नहीं हूँ।

आगन्तुक (जोर देकर) नहीं। मुझे रुपये की जरूरत है। कहीं और रुपये हैं?

राजन माँ के पास हैं। वे गंगा नहाने चली गयी हैं।

आगन्तुक मैं जानता हूँ। कितना रुपया है उनके पास ?

राजन (सोचते हुए) तीन रुपया पच्चास नए पैसे—

आगन्तुक (व्यंग्य से) तीन रुपया पच्चास नए पैसे ! बहुत बड़ा जमा है ! (सहसा चीख कर) आह—किसने मेरे कंधे में जोर से काटा ? (कंधे पर हाथ रख कर कराहता हुआ) ओह, किसने काटा—(वह कराहता है, उसके हाथ से रिवाल्वर छूट कर गिरता है। राजन शीघ्रता से रिवाल्वर और चाकू उठा लेता है और लैम्प की बत्ती तेज कर देता है।)

राजन (रिवाल्वर सामने साध कर) अब रिवाल्वर मेरे हाथ में है। निकालो मेरा लिफाफा ! (जोर से) पुलीस पुलीस—

आगन्तुक (अनुनय के स्वरों में) देखिए पुलीस को आवाज न दीजिए। किसी ने मेरे कंधे में बड़े जोर से काट लिया ! (कराहते हुए) आह—

राजन किसने काट लिया—आप कौन हैं ?

आगन्तुक मैं—मैं—उफ फिर किसी ने जोर से काटा ! आह—

राजन बहुत अच्छा काटा। अच्छे मौके पर काटा ! आपको मालूम होना चाहिए कि गरीबों का पहरेदार भगवान है जो जहरीला कीड़ा बनकर चोरों को काट भी सकता है।

आगन्तुक (कराहते हुए) जहरीला कीड़ा ?

राजन हाँ आप कोट उतार कर देखिए।

आगन्तुक मैं—मैं—कोट उतारूँ ? नहीं नहीं मैं कोट नहीं उतारूँगा— (फिर चीख कर) उफ फिर काटा—आह—!

राजन शाबाश ! मेरे प्यारे कीड़े ! तुम इसी तरह काटते रहना ! जब तक कि ये चोर महाशय अपना कोट न उतारें।

आगन्तुक अच्छा अच्छा। उतारता हूँ। उतारता हूँ—

राजन पर कोट उतारने के पहले मेरा ८२ रुपया का लिफाफा हाजिर

काजिए। फिर चिल्लाइए नहीं तो मेरे हाथ में रिवाल्वर है।

आगन्तुक यह नकली रिवाल्वर है पाँच रुपये वाला। असली रिवाल्वर खरीदने के लिए पैसा कहाँ ?

राजन (गौर से देखता हुआ) अच्छा यह नकली रिवाल्वर है! सचमुच बच्चों का खिलौना! (घुमा फिरा कर देखता है।) अँधेरे में इसी के बल पर आप हजारों रुपये लूटते हैं? यह पाँच रुपये वाला रिवाल्वर! (फेंक देता है।) आप बहुत होशियार मालूम देते हैं।

आगन्तुक (कराहते हुए) आह माफ कीजिएगा। मैं कोट उतारता हूँ—आप बहुत सज्जन हैं। मुझे पुलीस के हवाले न करें—परिस्थितियों से लाचार होकर यहाँ आया। मैं चोर नहीं हूँ। (आह भर कर) ओह न जाने कौन-सा कीड़ा मुझे काट रहा है! (आगन्तुक जैसे ही अपना ओवरकोट उतारता है वैसे ही उसकी साड़ी दृष्टिगत होती है। राजन चौंक कर पीछे हटता है।)

राजन (कौतुक से) आप स्त्री हैं?

आगन्तुक दुर्भाग्य से! स्त्री हूँ। (कोट को उलट कर देखती है) यह काली चींटी है। ओह बहुत जोर से काटा है!

राजन लेकिन आपने धोखा खूब दिया! आवाज भी खूब बदली!

आगन्तुक मैंने अनेक बार पुरुषों का अभिनय किया है। आवाज बदलने का अभ्यास महीनों किया है लेकिन आज इस क्रूर चींटी ने मेरा भेद खोल दिया! किस बुरी तरह से काटती है यह कमबख्त चींटी!

राजन इस समय तो वह चींटी किसी हाथी से कम नहीं है जिसने मौके पर आपको बकाबू कर लिया। नहीं तो मैं तो लुट ही गया था! लेकिन स्त्री होकर आपका इतना साहस! आप

मानसिंह डाकू की बहन ह ?

आगन्तुक (सिर नीचा कर) नही एक अनाथ लडकी ! भूख की ज्वाला से तडपती हुई एक अनाथ लडकी।

राजन अनाथ लडकी ? एसा अनाथ लडकी जा दूसरा को अनाथ बना द ! लकिन महाशया जा ! भूत्र की ज्वाला न आज तक किसी लडकी को पुरुष नही बनाया यानी मरे कहन का मतलब यह ह कि पुरुष का वश धारण नहा कराया।

आगन्तुक यह मेर भाग्य का दोप ह !

राजन चाह जिसका दोप हो अब तो भेद खुल गया। यह आँखो की पट्टी भी उतार दीजिए।

आगन्तुक देखिए अब ता म आपका कुछ भी नहीं बिगाड सकता। आप स प्रार्थना करती हू कि आप पुलिस में रिपोट न करें। फिर जो आप आज्ञा देंगे उसका पालन करूगी। यह आँखो स पट्टी भी उतार दती हू। (वह आँखो से पट्टी उतारती है। देखन मे वह अत्यन्त सुन्दरी है। उसे देखत ही राजन भौंचक होकर उसकी ओर दखता है।) मर स्वर्गवासी पिता का यह ओवर कोट जो मुझ पूरी तौर स छिपा लता ह। (टबिल पर रखती है।)

राजन आप इतनी सुन्दर ह ! इतनी सुन्दर लडकी को भी चोरी करने की आवश्यकता पडी ? आप मुझ लूटन आई थी—लेकिन शिष्टता के नाते कहना चाहता हूँ कि आप इस कुर्सी पर बैठ जायें।

आगन्तुक जी नहीं, लकिन म कहना चाहती हूँ कि म चोर नहीं हू।

राजन तो फिर आप कौन ह ? रात क तीसरे पहर आप इस तरह अपन स्वर्गवासी पिता क वस्त्र धारण कर घूमती हैं और नकली पिस्तौल स लोगो को डरा कर रुपए लूटती ह। क्या आपके पिताजी भी चोरी करत थे ?

आगन्तुक जी नहीं—व थोरा बा गला देत थे। व ईमानदार थे इसलिए उनके मरने के बाद मैं और मेरी माता पसेन्शन को मुहताज हो गयी। आज मैं फाइ सहायता नहीं घर पर बूढ़ी माँ दो-ज़ाने का तरस रही हूं।

राजन आप किसी भा दिन मेरे पास आ सकती थीं। मैं आपको थोड़ी बहुत सहायता अवश्य कर देता।

आगन्तुक आप क्या सहायता करते? समार में जा व्यक्ति सहायता करता है वह पहले—वह पहले सहायता को कामना चाहता है—

राजन आप सच कहती हैं। जमाना बहुत खराब है लेकिन मैं व्यापारी नहीं हूँ। क्लर्क हूँ लेकिन ईमानदार इंसान हूँ।

आगन्तुक मैं नहीं जानती थी कि आज के जमाने में एक क्लर्क भी ईमानदार और सज्जन होता है।

राजन मौके पर तो सभी सज्जन हो जाते हैं। मैं भी सज्जन सही लेकिन अगर आप मुझे सज्जन समझती हैं तो इस कुर्सी पर बैठ जाइए और अपना परिचय दीजिए।

आगन्तुक इसलिए आप पुलीस को खबर तो नहीं देंगे?

राजन आप इतनी घबराई हुई क्या हैं? आपको मुझ पर विश्वास क्या नहीं होता? आप ८२ रुपये का लिफाफा अपने ही पास रखिए। मैं पुलिस को खबर नहीं दूंगा।

आगन्तुक (कुर्सी पर बैठ कर) धन्यवाद! मेरा नाम करुणा है। मैं एक अनाथ लड़की हूं पर भिक्षा लेना मनुष्यता का अपमान समझती हूँ आप अपना रुपया वापस न लीजिए।

(कोट से लिफाफा निकाल कर टेबल पर रखती है।)

राजन (दूसरी कुर्सी पर बैठ कर) बातचीत से मालूम होता है कि आप पढ़ी लिखी भी हैं।

करुणा अपने ही परिश्रम से मैंने बी० ए० तक शिक्षा पाई है।

राजन (चौंक कर) बी० ए० तक ? इसीलिए इतना साहसी है ?

करुणा साहसी तो प्रत्येक लड़की को होना चाहिए लेकिन बी० ए० तक पढ़ने के बाद भी यह अभागिन अपनी बूढ़ी माँ का पेट इज्जत से नहीं भर सकी।

राजन इज्जत से नहीं भर सकी ? चोरी करना कौन सी इज्जत की बात है ?

करुणा (शिथिल स्वर में) माँ को भूखी नहीं रख सकती। हिन्दी की किसी फिल्म में चोरी का यह ढंग देखा था ! स्वर्गीय पिता जी का वह ओवर कोट जो मेरे पूरे शरीर को ढक लेता है मेरे बचपन के कपड़ों का यह जाला, यह दिखाने का रिवाल्वर— सभी का उपयोग मैं कर सकी।

राजन अच्छा उपयोग हुआ ! आजकल की बहुत सी हिन्दी फिल्में चोरी की कला ही सिखाती हैं। लेकिन आपको चोरी करने की जरूरत ही क्या थी ? आप बी० ए० पास हैं, कहीं भी आपको नौकरी मिल सकती थी !

करुणा नौकरी का नाम आप मेरे सामने न लें।

राजन क्या ? अपना देश तो अब स्वतन्त्र है ! (चित्रों की ओर संकेत कर) बापू, जवाहर, सुभाष का देश है।—अपनी सरकार की नौकरी।

करुणा अपनी सरकार की नौकरी ! उसकी याद आते ही मेरा हृदय घृणा और शोक से भर जाता है।

राजन क्यों ? मैं भी तो नौकरी करता हूँ। घृणा और शोक की तो कोई बात नहीं।

करुणा लेकिन आप पुरुष हैं स्त्री नहीं। स्त्रियों के लिए नौकरी अभिशाप है। यहाँ रुपये का मूल्य है इंसान का मूल्य नहीं।

जहाँ अधिकार के सामने इन्सान का इज्जत धूल में लोट सकती है।

राजन अच्छा क्या आपने कभी नौकरी की ?

करुणा की ! एक बार नहीं सात बार !

राजन योग्यता नहीं मिला क्या ?

करुणा यहाँ योग्यता कौन देखता है ! यहाँ तो दूसरी ही बातें देखी जाती हैं।

राजन सत्य है मुझे भी थोड़ा बहुत अनुभव है। लेकिन आपकी नौकरी क्यों न चल सकी ?

करुणा यही भयंकर अभिशाप है।

राजन मुझे सुना सकती हैं ?

करुणा बस कहूँ ! मैंने एक नहीं—सात-सात स्कूलों और कालिजों में नौकरी की—लेकिन कहीं भी पन्द्रह दिन से अधिक नौकरी नहीं कर सकी।

राजन कारण ?

करुणा जिस स्कूल या कालिज में मुझे काम मिला उसके अधिकारी और मैनेजर मुझे ऐसी दृष्टि से देखते थे कि मैं सम्मान के साथ वहाँ नहीं रह सकती थी। नौकरी पाने के कुछ दिन बाद ही मुझे नौकरी छोड़ देनी पड़ती थी। ये पढ़े लिखे लोग इतने पतित होते हैं यह मैं नहीं जानती थी।

राजन (सिर नीचे कर) वास्तव में बड़े दुःख की बात है।

करुणा मैं कलंकित जीवन व्यतीत करना नहीं चाहती थी। तितलियों की तरह घूमना बापू के देश का आचरण नहीं है। (गाँधी जी के चित्र की ओर देखती है।)

राजन आप वास्तव में देवी हैं।

करुणा (अपने ही प्रवाह में) मेरे पिता जी नहीं हैं। मैं निर्धन हूँ।

इसलिए मरा विवाह नहीं हो सकता था। मेरे परिवार में कोई नहीं है भाई नहीं बहिन नहीं केवल एक बूढ़ी माँ हैं जिन्होंने मुझे इज्जत के साथ रहने की शिक्षा दी। आज के जमाने में सुखी वह है जो अपनी इज्जत बच देता है बड़ा वह है जो दूसरों का खुशामद में सब कुछ खो देने के लिए तैयार रहता है। और जिसने इज्जत की बात सोची उसकी किस्मत में दर-दर की ठोकरें खाना अपमान तिरस्कार भूख और सब तरह की यत्रणा ! आज वही इज्जत लकर मैं अपनी बूढ़ी माँ को अन्न के दो दाने नहीं दे सकी ! कातन करने के लिए हम दोनों राम मन्दिर में चली जाती हैं। जो प्रसाद मिल जाता है वही हम दोनों के दिन भर का भोजन हो जाता है। मेरी माँ आज मेरे साथ तीन दिनों से भूखी है। पुजारी जी ने प्रसाद देना बन्द कर दिया। इसीलिए मैंने आज यह साहस का काम किया। माँ की भूख नहीं देख सकी ! (गला भर आता है, हलकी सिसकी।)

राजन आप दुखी न हों। मुझे बहुत दुःख है कि आप तीन दिन से भूखी हैं। देखिए मेरी माँ गंगा-स्नान को जाते समय मेरे लिए दूध रख गयी थी। मैंने इसे नहीं पिया। भगवान ने शायद आपके लिए ही इसे बचा रखा है। लीजिए। (दूध का गिलास उठा कर लाता है।) आप यह दूध पी लीजिए।

करुणा मैं दूध पियूँ ? मेरी माँ घर पर तीन दिनों से भूखी है। यहाँ मैं अपनी भूख बुझाने के लिए दूध पी लूँ। आपने मुझे क्या समझा है ?

राजन आप वास्तव में ऊँचे चरित्र की लड़की हैं। आपसे क्या कहूँ ! एक काम करें। आप यह दूध अपने साथ लेती जायँ और अपनी माँ को दे दें। सुबह होने को है दूध वाला आयगा।

मैं सारा दूध आपके लिए घर पर पहुँचा दूँगा। आप अपने मकान का पता बतला दीजिए।

करुणा मकान का पता? इस अभागिन लड़की के मकान का क्या पता! लेकिन अगर आप वास्तव में सज्जन हैं तो मैं परिश्रम का पैसा लूँगी। अब आठवीं बार नौकरी करूँगी। आपके यहाँ नौकरी करूँगी और आपकी माँ को धर्म-ग्रंथ सुनाऊँगी। दो व्यक्तियों के उदर-पोषण के लिए जो उचित समझिए मुझे दे दीजिएगा।

राजन अवश्य दूँगा। यदि माँ की इच्छा होगी तो ऐसा प्रबंध हो जायगा लेकिन नौकरी से पहले आपका विवाह अवश्य हो जाना चाहिए। मैं एकाकी आदमी हूँ। अपने घर में किसी अविवाहिता लड़की को काम नहीं करने दूँगा। लोग दस तरह की बातें कह सकते हैं। फिर आप इतनी शिक्षिता हैं, यह नाम रूप स्वभाव! करुणा देवी! आपका विवाह अवश्य हो जाना चाहिए।

करुणा यह मेरे भाग्य का विधान नहीं है।

राजन तो फिर भाग्य का विधान क्या है? आप भूखी रहें? अपनी माँ को भूखी रखें? और सिनेमा के ढंग से चोरी करें?

करुणा अब चोरी नहीं करूँगी। यदि ढंग की नौकरी नहीं मिली— तो (रुक जाती है।)

राजन (प्रश्न की मुद्रा में) तो?

करुणा तो तो आत्म-हत्या करूँगी।

राजन आत्म-हत्या?—इतनी शिक्षा पाने के बाद आत्म-हत्या? (विनोद के स्वर में) आजकल आत्म-हत्या तो शायद फैशन में दाखिल हो गया है। बात-बात में आत्म-हत्या। हर गली, कूचे मुहल्ले में आत्म-हत्या होती है। छुट्टी की अर्जी देना

और आत्म-हत्या करना—बराबर। हम इतने कमजोर हो गए हैं कि जीवन से संघर्ष नहीं ले सकते।

करुणा लेकिन मृत्यु से संघर्ष ले सकते हैं।

राजन इसी संघर्ष का नाम आत्म-हत्या है। आजकल आत्म-हत्याएँ पाँच तरह से की जाती हैं—(उंगली पर गिनता हुआ) पहली ट्रेन से कट कर—अंग्रेजों ने बहुत पहले हमारी मनोवृत्ति समझ ली थी—इसलिए ट्रेन चला दी—यात्रा तो एक बहाना है। दूसरा ढंग है कुएँ में कूद कर—हमारे बुजुर्ग भी कुछ-कुछ कुएँ की ऐसी उपयोगिता समझते थे। तीसरा ढंग है ज़हर खा कर। चौथा है रस्सी से लटक कर और पाँचवाँ है मिट्टी का तेल कपड़ों पर छिड़क कर। तो आपको कौन सा तरीका पसन्द है? मिट्टी के तेल के लिए तो आपके पास पैसे होंगे नहीं।

करुणा (खड़ी होकर) आप मेरी बात का मजाक उड़ाते हैं?

राजन जी नहीं। आत्म-हत्या बहुत गम्भीर होती है। उतनी ही गम्भीर जितना विवाह। विवाह भी एक तरह का आत्म-हत्या है। पहले उसे कर डालिए।

करुणा यह असम्भव है।

राजन पूरी तरह सम्भव है। मैं उसका प्रबंध कर सकता हूँ। मैं गरीब हूँ लेकिन मंगल कामनाएँ मेरे पास भरपूर हैं। अपनी हैसियत से मैं आपको शादी के लिए यह तकिया भेंट कर सकता हूँ।

(बिस्तर से तकिया उठा लेता है।)

करुणा (तीक्ष्णता से) तकिया? क्या मतलब?

राजन कोई खास मतलब नहीं। यह तकिया ही मेरी सारी सम्पत्ति है। अपनी सद्भावना में मैं और क्या भेंट कर सकता हूँ?

करुणा आपसे भेंट चाहता ही कौन है? आप अपना तकिया अपने

म मारा दूध मारा मिल भाग पर पहुँचा दूँगा। भाप भपन मरान का पता भाला चाहिए।

करुणा मरान का पता? हमा प्रभावित सन्तान के मरान का क्या पता! लेकिन अगर भाप वास्तव में सज्जन हैं तो मैं परिश्रम का पता सुनाऊँगी। अब आठवीं बार नौकरी करूँगी। भापके यहाँ नौकरी करूँगी और भापको माँ का धर्म-ग्रंथ सुनाऊँगी। दो व्यक्तियों के उदर-पोषण के लिए जो उचित समझिए मुझे दे दीजिएगा।

राजन अवश्य दूँगा। यदि माँ की इच्छा होगी तो ऐसा प्रबन्ध हो जायगा लेकिन नौकरी से पहले भापका विवाह अवश्य हो जाना चाहिए। मैं एकाकी आदमी हूँ। अपने घर में किसी अविवाहिता लड़की को काम नहीं करने दूँगा। लोग इस तरह की बातें कह सकते हैं। फिर आप इतना शिक्षित हैं यह नाम रूप स्वभाव। करुणा देवी! आपका विवाह अवश्य हो जाना चाहिए।

करुणा यह मेरे भाग्य का विधान नहीं है।

राजन तो फिर भाग्य का विधान क्या है? आप भूखी रहें? अपनी माँ को भूखी रखें? और सिनेमा में ढंग से चोरी करें?

करुणा अब चोरी नहीं करूँगी। यदि ढंग की नौकरी नहीं मिली—तो (रुक जाती है।)

राजन (प्रश्न की मुद्रा में) तो?

करुणा तो तो आत्म-हत्या करूँगी।

राजन आत्म हत्या?—इतनी शिक्षा पाने के बाद आत्म-हत्या? (विनोद के स्वर में) आजकल आत्म हत्या तो शायद फैशन में दाखिल हो गया है। बात-बात में आत्म-हत्या। हर गली कूचे मुहल्ले में आत्म हत्या होती है। छुट्टी की अर्जी देना

श्रौर आत्म-हत्या करना—बराबर। हम इतने कमजोर हो गए हैं कि जीवन में संघर्ष नहीं ले सकते।

करुणा लेकिन मृत्यु से संघर्ष ले सकते हैं।

राजन इसी संघर्ष का नाम आत्म-हत्या है। आजकल आत्म-हत्याएँ पाँच तरह से की जाती हैं—(उंगली पर गिनता हुआ) पहला ट्रेन से कट कर—अंग्रेजों ने बहुत पहले हमारी मनोवृत्ति समझ ली थी—इसलिए ट्रेन चला दी—यात्रा तो एक बहाना है। दूसरा ढंग है कुएं में कूद कर—हमारे बुजुर्ग भी कुछ-कुछ कुएं की ऐसी उपयोगिता समझते थे। तीसरा ढंग है जहर खाकर। चौथा है रस्सी से लटक कर और पाँचवाँ है मिट्टी का तेल कपड़ों पर छिड़क कर। तो आपको कौन सा तरीका पसन्द है? मिट्टी के तेल के लिए तो आपके पास परमिट होगा नहीं।

करुणा (खड़े होकर) आप मेरी बात का मजाक उड़ाते हैं?

राजन जी नहीं आत्म-हत्या बहुत गम्भीर होती है। उतनी ही गम्भीर जितना विवाह। विवाह भी एक तरह की आत्म-हत्या है। पहले उसे कर देखिए।

करुणा यह असम्भव है।

राजन पूरी तरह सम्भव है। मैं उसका प्रबन्ध कर सकता हूँ। मैं गरीब हूँ लेकिन मंगल कामनाएं मेरे पास भरपूर हैं। अपनी हैसियत से मैं आपकी शादी के लिए यह तकिया भेंट कर सकता हूँ।

(बिस्तर से तकिया उठा लेता है।)

करुणा (तीव्रता से) तकिया? क्या मतलब?

राजन कोई खास मतलब नहीं। यह तकिया ही मेरी सारी सम्पत्ति है। अपनी सद्भावना में मैं और क्या भेंट कर सकता हूँ?

करुणा आपसे भेंट चाहता ही कौन है? आप अपना तकिया अपने

पास रखें और चाहें तो स्वयं अपना विवाह करें। आपने कमरे में आने से पहले मैं आपकी माँ से सब कुछ सुन लिया था। आपको विवाह करना चाहिए।

राजन मुझे कोई अच्छी लड़की ही नहीं मिल रही है विवाह किससे करूँगा?

करुणा तो मत कीजिए।

राजन लेकिन आपको करना चाहिए और मेरी ओर से यह भेंट स्वीकार कीजिए।

(तकिये की ओर संकेत)

करुणा इसलिए मैं मज़ाक पसन्द नहीं करती। यदि आपने मुझे पुलिस से बचाने का विश्वास न दिलाया होता तो मैं आपको इस मज़ाक का मज़ा चखा सकती थी।

राजन मज़ा तो आप अब भी चखा सकती हैं। लेकिन मैं स्वयं एक अपरिचित लड़की से मज़ाक नहीं कर सकता। आपके चरित्र की पवित्रता से, आपकी शिष्टता से आपके स्वभाव से मैं बहुत प्रभावित हूँ। इसलिए मैंने अपनी भेंट प्रस्तुत की थी। देखिए तकिए की भेंट यह है।

(राजन चाकू से तकिया फाड़ता है और सौ-सौ रुपये के दस नोट निकालता है।)

लीजिए यह मेरी भेंट! सौ सौ के दस नोट—एक हज़ार! चोरों के डर से यह रुपया किसी सन्दूक में रख नहीं सकता था—आप ही रिवाल्वर दिखला कर यह रुपया छीन सकती थीं। यह एक हज़ार रुपया है जो तकिये के भीतर मैंने सहेज कर रक्खा था। वही मैं भेंट करना चाहता था। इतने में तो आपका विवाह हो सकता है।

(करुणा कुछ नहीं बोलती।)

मेरे पिछले दस वर्षों की कमाई है। माता जी उठते-बठते आग्रह करती ह कि म कोई अच्छी लडकी देख कर विवाह कर लू। कोई अच्छी लडकी मिलती नहीं विवाह किससे करूँ ! अच्छी लडकी मिलने की आशा में मैंने अपनी गाढ़ी कमाई से एक हजार रुपये इकट्ठे किए थ ।

करुणा तो जमे भी हो। आप इन रुपयों से अपनी माता जी का ही आग्रह पूरा करें। (सहसा) अच्छा अब म जाऊंगी। आप की कृपा के लिए धन्यवाद। (जाने को उद्यत)

राजन अच्छी बात ह आप जाय। यदि कष्ट न हो तो अपना यह कोट और आँखों को यादगारी लेती जांय। साथ ही यह रिवाल्वर भी। अपने पिता जी और अपने शशव जी की ये स्मृतियां ! शायद फिर कभी काम आयें।

करुणा अब ये कभी काम नहीं आएगी। (कोट उठाती है।)

राजन तभी तो आप एसी हो नौकरी करें। हां आप मेरी मां को धर्म ग्रन्थ सुनाने की बात कह रही थी, यदि आप यह कृपा करें तो इन रुपयों म से कितना स्वीकार करेंगी ?

करुणा यह कुछ नहीं कह सकती। म अपनी मां से पूछ कर बताऊंगी।

राजन ठीक ह म भी अपनी मां से पूछ लूगा। (स्मरण कर) हां—आपको अपनी माता जी के लिए यह दूध भी तो ल जाना ह—

(बाहर किसी के आने की आवाज)

करुणा (सशंकित स्वर से) कोई आ रहा ह !

राजन आप घबराए नहीं—दूध वाला होगा। अब जाइए अपनी माता जी के लिए यह ताजा दूध भी लेती जांय। आपको अपने मकान का पता देने की जरूरत नहीं पडी। चाहें तो दूध वाले को बतला दें। मुझ न बतलाए। (नेपथ्य से स्वर)—

राजन अरे माँ ! तुम तो इन्हें इतना जानती हो कि उतना शायद मुझ भी न जानती हो !

माँ नहीं बेटा ! गंगा जी ने शायद तुम दोनों को अच्छी तरह से जानने के लिए ही सौंप दिया है। पंखा भूलने का तो एक बहाना बना दिया उन्होंने।

राजन यह सब इन निधन देवी के जीवन का पुण्य है !

माँ होगा। जीवन का बड़ा पुण्य होता है बेटा ! और कोई धनी है कोई निधन ! यह तो सब दान चक्र का फेरा है।

राजन माँ ! आज प्रात: मुझसे मैं ये अपनी निधनता दूर करने यहाँ आई।

(करुणा अपने ओठों पर उंगली रखकर चुप रहने का संकेत करती है।)

शायद ये भी गंगा-स्नान करने के लिए जा रही थीं। उन्होंने मुझसे कहा कि ये आपको धर्म ग्रंथ सुनाने की नौकरी चाहती है। मैंने कहा कि मैं गरीब क्लर्क हूँ। तुम्हें कोई पारिश्रमिक तो दे नहीं सकता फिर तकिये के रुपयों की याद आई। मैंने देखने के लिये तकिये के रुपये निकाले—

माँ (प्रसन्न होकर) तकिये के रुपये ? तूने अच्छी याद दिलाई। (हँस कर) बेटा ! अब तो मैं जिन्दगी भर इसी लड़की से धर्म ग्रंथ सुनूँगी। इसे मेहनत के पैसे न देकर ये सारे रुपये दे दूँगी। मैं इसकी माँ से सब बातें कर चुकी हूँ। लेकिन रुपये देने के पहले एक शर्त होगी।

राजन वह क्या माँ ?

माँ कैहूँ ?

राजन हाँ माँ ? कहो न ? क्या शर्त होगी ?

माँ दरवाज़े पर शहनाई बजगी । शहनाई की रात होगी !

राजन अरे वाह माँ ! तुम हो अंतर्यामी हो ! सबके मन की बात जान गई ! मरी अच्छी माँ !!

(राजन माँ से लिपट जाता है । करुणा मुस्कराकर, सिर का कपडा सभाल कर प्रणाम की मुद्रा मे सिर झुका लेती है ।)



शक्ति-संजीवनी

[पारिवारिक हास्य एकाकी]

पात्र

[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]
[illegible]	मित्र
[illegible]	नौकर
[illegible]	[illegible] का [illegible]
किशोरी	[illegible] का [illegible]

(प्रयाग के टगोर टाउन का एक कोना—शाम के पाँच बजे)

(परदा उठने पर—मकान के मदान का एक कमरा जो सामान्य ढंग से सजा हुआ है। दाएं बाएं दो दरवाजे—एक भीतर की ओर और दूसरा बाहर की ओर। दीवार के मध्य में एक खिड़की जिससे बाहर की सड़क दिखलाई देती है। कमरे के मध्य में दीवाल से लगा हुआ एक तख्त जिस पर क़ालीन बिछा हुआ है। सामने कुछ हट कर एक चौकोर टेबल जिसके चारों ओर कुर्सियाँ रखी हुई हैं। भीतर वाले दरवाज़े के समीप एक आल्मारी जिसमें पुस्तकें सजी हैं। एक कोने में स्टैंड जिस पर फूलों का एक गुलदस्ता सजा हुआ है। कमरे में कुछ प्राकृतिक दृश्यों की तस्वीरें हैं।

भीतर जाने वाले द्वार के समीप एक 'ड्रेसिंग मिरर' जिसके समीप आशा (२१ वर्ष) अपना मुख देखकर लिपस्टिक लगा रही है। रेशमी साड़ी के साथ चार तारे का ब्लाउज, पैर में मखमली चप्पल, कभी-कभी टेढ़ा तिरछा सिर पर अपने बाल हाथों से ठीक कर रही है। रतन (१६ वर्ष) कपड़े की झाड़न लेकर कुरसी और आल्मारी साफ़ कर रहा है। साधारण कुरता और धारीदार पजामा पहने है। कुछ क्षण बाद आशा रतन की ओर कड़ी नज़र से देखकर आदेश के स्वरों में बोलती है।)

आशा रतन !

(रतन कुछ देर के लिए पोंछना बन्द कर आशा

में सांप और बिच्छू की तरह विषय रहते है। मौका मिला कि चुप से काट लिया।

रतन नहीं जी मेम साब! हम लाग तो अखबार के रद्दी कागज हैं जी! जब चाहे फाड क फेंक दीजिए जी!

आशा तू भी इस घर में एक वकील बन गया है! बातें ढेर सी और काम रत्ती भर नहीं! लोग चाय पीने के लिए आ रहे हैं और अभी न कमरा साफ हुआ और न स्टोव जला! कुछ कहूंगी तो कहेंगे कि थक गया हूँ—काम के कामो से थक गया हूं। शायद इनकी तरह स्टोव भी थक गया होगा। काम सामने आया कि हाथ-पैर ढीले। इस तरह काम होता है?

रतन नहीं जी काम ठीक तरह होना चाहिए जी!

(जल्दी से कुर्सी मेज साफ करता है।)

आशा मैं जब बी० ए० में पढ़ती थी तो काम इस तरह करती थी कि मैं आगे बढ़ जाती थी और काम पीछे रह जाता था।

रतन मेम साब! काम की क्या मजाल कि वो आपके साथ रहे जी!

आशा लेकिन इस घर के सारे काम धीरे धीरे होते हैं। स्टोव जलाया जायगा तो इस तरह जैसे किसी बच्चे का पालना झुलाया जा रहा है। पेश ऐसे किया जायगा जैसे होली में रंग की पिचकारी भरी जाती है। (उठ कर कपड़ो पर सेंट का स्प्रे करती हुई) कुछ नहीं सब बातें बड़ बलास!

रतन गिलास तो ठंडा ही होता है जी! मेम साब! यह घर बिल्कुल ठंडा गिलास है जी।

आशा लेकिन मैं इसे ठंडा नहीं रहने दूंगी। इसे स्टोव की तरह गरम करूंगी। वकील साहब क्या करेंगे? स्टोव को अपना मुवक्किल समझ कर बहस कर रह जाएंगे! (अपने आप) मुझसे भी पहले बहुत वकालत छाँटते थे! चुटकियों में कर दिया

आशा तो खतम हो गई। तू जा सकता ह।

रतन म जाऊ जी ? अच्छी बात ह। शाम के समय चाय के बाद जाऊ कि अभी जाऊ ?

आशा अभी जाओ। चा का काम चल जायगा।

रतन अच्छी बात ह जी। लकिन मरी तनख्वाह मेम साब !

आशा तरी तनख्वाह भागी जाती ह ? पहली तारीख का मिलगी।

रतन मेम साव ! रुपे की जरूरत थी जी !

आशा रुपय की जरूरत किसे जरूरत नहीं होती ? मुझे भी रुपया की बहुत जरूरत ह। एक बार का कहना बस नहीं ह ?

रतन मम साहब जो ! आपका एक बार का कहना सौ बार के बराबर ह जी और इस घर में आपका ही तो राज ह जी ! आपका किसी से थोड पूछना ह जी ! मरी थोडी सी तनखाह

आशा अच्छा आज शाम को आओ। छ और साढे छ के बीच में।

रतन बहुत अच्छा जी मम साब !

आशा (शीशे मे मुह देखते हुए) सलाम करके जाना !

रतन (सलाम करते हुए) सलाम ! मम साब जी !

आशा (अपने आप बडबडाते हुए कोट पर ब्रश करते करत) क्या नौकर हो गए ह आजकल क ! कहा कि तेरी नौकरी खतम हो गई—तो हो गई। एक बार भी नहीं कहेगा कि नहीं मेम साहब ! मुझे नौकरी से मत हटाइए कहा और गए जसे हिट मारा और बाहर ! कम्बख्त कहीं के ! पहले जमाने के नौकर पुश्तन्दर पुश्त काम करत थ। (फिर ब्रश करते हुए) और अभी उधर स्टोव जल रहा ह। देखती हू म अभी। (पुकार कर) सुनत हो मिस्टर ? स्टोव जला या नहीं ? इतनी देर में तो म सारी दुनिया जला देती इनका स्टोव

सोधा उन्हें। अब मुझ से बात नहीं निकलती। सोने की तरह सच्च रहा है मेरे हाथ में।

रतन (भय से आशा की ओर देखता है।) जी मम साब!

आशा चुप रहो। तू क्या नहीं जानता कि इस घर में मेरा ही राज है? (शीशे में अपना मुंह देखती है।)

रतन जानता हूँ जी!

(आशा पाउडर का पफ गालों पर लगाती है।)

रतन हुकुम हो तो एक बात कहूँ जी मम साब! कहने से डर लगता है पर मन की बात आपसे क्या छिपाऊं! बात यह है जी कि सरकारी अस्पताल में पाउडर ठीक तरह से नहीं छिड़का जाता। इसलिए जी! आप कितना अच्छा लगाती हैं। आप अस्पताल में नौकरी करें जी तो रोगियों को बड़ा आराम हो जाय जी! गलती कहूँ तो माफ कीजिए जी। (हाथ जोड़ता है।)

आशा बहुत बढ़ कर बक बक मत कर। और तू यहाँ काम करने आया है कि नुमायश देखने। इतने साफ कपड़े पहन कर आया है! सफाई हम लोगों के लिए है कि तेरे लिए? इतने साफ कपड़े पहिन कर घर का काम होगा?

रतन मम साब! साफ कपड़े पहनना कोई कुसूर नहीं है जी!

आशा कुसूर हो या न हो। नौकरों से घर का काम ठीक नहीं चल सकता—मैं बहुत दिनों से सोच रही हूँ।

रतन आप ठीक सोचती हैं जी!

आशा घर के आदमियों से ही घर का काम होता है। आज सुबह मैंने तुझसे क्या कहा था?

रतन जी! आपने कहा था कि आज से मेरी नौकरी खतम हो जायगी।

आशा तो खत्म हो गई। तू जा सकता ह।

रतन म जाऊ जी ? अच्छी बात ह। शाम के समय चाय के बा" जाऊ कि अभी जाऊ ?

आशा अभी जाओ ! चा का काम चल जायगा।

रतन अच्छी बात ह जी ! लकिन मरी तनख्वाह मेम साब !

आशा तरी तनख्वाह भागी जाती ह ? पहली तारीख को मिलगी।

रतन मम साब ! रुपे की जरूरत थी जी !

आशा रुपय की जरूरत किस जरूरत नही होती ? मुझे भी रुपया की बहुत जरूरत ह। एक बार का कहना बस नही ह ?

रतन मम साहब जी ! आपका एक बार का कहना सौ बार क बराबर ह जी और इस घर में आपका ही तो राज ह जी ! आपका किसी स बा" पूछना ह जी ! मरी थोडी सी तनखाह

आशा अच्छा आज शाम को आओ। छ और सा" छ के बीच म।

रतन बहुत अच्छा जी मम साब !

आशा (शीशे में मुह देखते हुए) सलाम करके जाना !

रतन (सलाम करते हुए) सलाम ! मम साब जी !

आशा (अपने आप बडबडाते हुए कोट पर ब्रश करते करते) क्या नौकर हो गए ह, आजकल के ! कहा कि तरी नौकरी खत्म हो गई—तो हो गई। एक बार भी नही कहूगा कि नहीं मेम साहब ! मुझे नौकरी से मत हटाइए कहा और गए जसे ईंट मारा और बाउडी ! कम्बख्त कहा क ! पहले जमाने के नौकर पुश्त-दर पुश्त काम करत थ। (फिर ब्रश करते हुए) और अभी उधर स्टोव जल हो रहा ह। देखती हूँ म अभी। (पुकार कर) सुनत हो, मिस्टर ? स्टोव जला या नही ? इतनी देर में तो म सारी दुनिया जला देती इनका स्टोव

तर ? ! जला ! (द्वार के पास जाकर और से पुकार कर)
मर मिस्टर ! सुना जरा इधर आकर
(नपथ्य से) आया आशा जी !

आशा (चिढ़ाकर) आया आशा जी ! आवाज ऐसी जैसे गाला लकड़ी में से धुआं निकल रहा है। ये मेरे पति हैं जिन्हें बात सुनने का भी सलीका नहीं है। जब मैं बी० ए० में पढ़ती थी तो एक आत्मीया का इतना कहना था इसका। मेरे फ्रान्स का भी क्या सेलेक्शन है ! (एक हाथ में प्याला और दूसरे में सन्तरे लिए हुए महेशचन्द्र का प्रवेश। सादा कुरता और पाजामा पहिने हुए हैं। बाल बिखरे हुए। गिरे हुए स्वर में बातें करते हैं।)

महेश कहिए आशा जी !

आशा सुना नहीं ? कितनी देर से पुकार रही हूँ।

महेश स्टोव की आवाज में आपकी आवाज नहीं सुन सका आशा जी !

आशा तो आपके कानों के लिए कहाँ से तेज कोयल की आवाज लाऊँ ! इतनी देर से तो चीख रही हूँ।

महेश आपका चीखना भी मेरे लिए कोयल की आवाज है।

आशा खुशामद रहने दीजिए ! चाय में कितनी देर है ?

महेश बस तैयार हो रही है। मैं तश्तरी-प्याले धो रहा था। आज रतन ने इन्हें साफ भी नहीं किया। जाने कहाँ चला गया !

आशा अपने घर गया। आज से उसकी नौकरी खत्म। शाम को उसकी तनख्वाह का हिसाब करना है।

महेश तो तो हो जायगा। फिर उसकी नौकरी खत्म

आशा बिल्कुल खत्म। मेहमान आने वाले हैं और कमरा इस तरह साफ करता था जैसे बैल अपनी पूँछ से मक्खियाँ उड़ाता है !

आपके साथ रहते रहते बहस करना सीख गया।

महेश ता तो म तो बाहर बहस करता हू। यहाँ तो बस आपका वन्स मुनन में आनन्द आता ह आशा जी।

आशा म क्या बहस करती हू! काम म सुस्ती दखता हू तो बालना पड़ता ह। कितनी दर में मन अपना मक अप कर लिया लकिन उसस कमरा साफ़ नहीं हुआ। बस गाह की हरी झडी का तरह भाग्न हिला दी हो गया कमरा साफ़। स्पिड कही का! निकाल दिया मने उसे आज।

महेश आपने अच्छा किया वह इसी लायक था लकिन घर का काम

आशा घर का काम? अरे हम लागा न अब काम करन की आदत डाल दी ली ह। आखिर भगवान न हमें हाथ किसलिए दिए ह! काम न करना हमार हाथा का अपमान ह। बाद मा काम करन क बाद घर का काम करन में क्या हज ह?

महेश कोई हज नहीं मम साहब!

आशा मम साहब? आपम मेम साहब कहन का तो मन नहीं कहा?

महेश अब नौकर नहीं ह जो मम साब कहता। म ही कहन लगू तो क्या हज ह?

आशा व्यग्य न कीजिए वकील साहब! म खूब जानती हू—कभी कभी आप अपना वकालत की सुई मुझे भी चुभा दत हैं। लकिन मर पास भी दिमाग ह। म कहती हू कोट के काम के बाद घर का काम करन में क्या हज ह? यह घर आपका है। कोट ता और लागा का भी ह। लकिन यह घर? यह घर और लोगा का नहीं, आपका है—सिर्फ़ आपका। तो कोट के बनिस्बत यह घर आपके कामों का अधिक अधिकारी ह। बोलिए, यह घर आपके कामा का अधिकारी नहीं ह?

महेश यह घर मर ही बाबा का प्रचित अधिकारी है।

आशा तो आज से हम साथा का ही अपना काम करना है। म अपने /पाट में बश करता हूँ—आप चाय बनायें। क्या हानि है? दोनों घर प काम ह।

महेश हाँ दोनों हा घर के काम हैं। मैं ब्रश कर सकता हूँ और आप चाय बना सकती हैं।

आशा लेकिन आप इतना भी नहीं सोचत कि चाय बनाने में मेरा मेक अप खराब हो जायगा? और फिर चाय आप—अच्छी बना सकते हैं। मोटा काम पुरुष करें महीन काम स्त्री को शोभा देता ह।

महेश ठीक ह! मेम साहब! पर हरेक मोटा काम महीन हो सकता ह।

आशा यह आप कोर्ट में साबित कर सकते हैं यहाँ नहीं। घर की स्त्री के फसल से घर के काम होते हैं। फिर चाय कोई एसा मोटा काम नहीं ह। और फिर आपकी बनाई हुई चाय स्वादिष्ट होती ह। मने कभी चाय बनाई नहीं। जब मैं बी० ए० में पढ़ती थी तब शायद एक बार बनाई होगी वह भी किसी खास फंक्शन पर। और आप इधर चाय बहुत अच्छी बनाने लगे हैं। मुझे पसन्द ह।

महेश मैं इसे अपना खुशकिस्मती समझता हूँ मेम साब! मेरी बहस जज को पसन्द ह और चाय आपको। जब चाय बना सकता हूँ तो प्याले भी धो सकता हूँ। म मशीन हूँ मुझे थकावट तो हो नहीं सकती। मेरा सिर एक राकेट ह उसमें तो दर्द हो नहीं सकता।

आशा फिर वही हमेशा का रोना! थकावट सिरदर्द! आप अपने को पुरुष कहते ह! पुरुष तो फौलाद के जिस्म का होता ह

अगर जरा जरा से कामों में वह थकने लगे तो वह बदल चुका इस दुनिया का। संसार में वे मनुष्य बड़े हुए हैं जिन्होंने रात दिन परिश्रम से काम लिया है। एक आप हैं कि कोर्ट के काम से ही थक जाते हैं। चाय बनाने में थकते हैं प्याले-तश्तरियाँ धोने में थकते हैं। शायद किसी दिन आप यह भी कह दें कि साँस लेने में थक गया हूँ। आप अपने को पुरुष कहते हैं? छि! पुरुष काम करने में थके? और यदि वह कमजोर है तो अपनी दवा करे।

महेश न मैं कमजोर हूँ और न अपनी दवा कराना है मुझे।

आशा तो फिर मुझे तुम्हारी दवा करानी होगी। थकावट की बातें सुनते सुनते ऊब उठी हूँ! 'थक गया हूँ सिर में दर्द हो गया' यह सब क्या है? काम न करने के बहाने!

महेश मैंने कभी कोई बहाना नहीं किया आशाजी! आखिर इन्सान हूँ थक जाना या सिर में दर्द हो जाना स्वाभाविक है।

आशा जी नहीं स्वाभाविक नहीं है। ऐसी किसी को थकावट नहीं आती कि जरा-सा घर का काम भी न कर सके। इधर कई दिनों से मैं इसके बारे में सोच रही हूँ।

महेश क्या सोच रही हो?

आशा यही कि आपकी थकावट का इलाज कराया जाय जिससे आप घर का काम कर सकें। आपको तो अपने कोर्ट के कामों से फुरसत मिलेगी नहीं मैंने ही सोचा कि इसका कुछ प्रबन्ध करूँ।

महेश क्या प्रबन्ध!

आशा मैंने आपसे नहीं कहा लेकिन आपका इलाज अब शीघ्र ही होना चाहिए। और मैंने उसका प्रबन्ध कर लिया है।

महेश आप ही मेरे इलाज के लिए क्या कम हैं आशाजी!

आशा इसके पीछे मैं एक बार आपकी अवज्ञा भी सुन सकती हूँ लेकिन मन जो निश्चय किया है वह होगा और अवश्य होगा। आग चल कर रोग बढ़ सकता है। उसका इलाज होना चाहिए और शीघ्र ही होना चाहिए। और प्रत्येक स्त्री का यह फर्ज है कि वह पति का इलाज कराए।

महेश मैं जान सकता हूँ आशाजी! मेरा इलाज कौन करेंगे?

आशा आप दारागंज में रहने वाले योगिराज को जानते होंगे!

महेश मैं किसी योगिराज को नहीं जानता।

आशा आप सिद्ध पुरुषों को क्या जानेंगे! आप तो चोर और डाकुओं को जानते हैं जिनके मुकदमे करते हैं! योगिराज की तो आप मजाक उड़ायेंगे लेकिन मजाक उड़ाने में उनकी हानि नहीं आपकी हानि है। योगिराज आयुर्वेद के आचार्य हैं। उनकी जड़ी-बूटियों में अमृत है हाथ में यश है।

महेश लेकिन यह सब किसलिए? मैं बीमार तो नहीं हूँ।

आशा थकावट और सिरदर्द ही आगे चल कर बीमारी का रूप रखता है। और अगर समय पर इलाज नहीं हुआ तो फिर बीमारी सम्हाले नहीं सम्हलती। मैं आज ही योगिराज को बुला आई हूँ वही इलाज करेंगे।

महेश योगिराज क्या इलाज करेंगे! लेकिन अगर ऐसी बात है तो मैं किसी डाक्टर से पूछ कर कोई टानिक ले लूँगा। टानिक से

आशा (बात काटकर) टानिक ले लूँगा! जानते हैं आजकल टानिकों के क्या दाम हैं? दस रुपया में इतनी-सी शीशी। वह भी असली नहीं। दवा की जगह पानी! कहने भर के लिए 'टानिक' कह लीजिए। बड़े-बड़े लेबिल चिपका दिए और विटामिनों के नाम लिख दिए। हो गया टानिक! सब बेकार!

आज के ज़माने में अगर असली फायदा उठाना है तो जड़ी बूटियों का सेवन किया जाय। दाम भी कम लगें और दवा भी अच्छी हो। फिर जिन महात्मा जी को मैं बुला लाई हूँ वे एसे वसे नहीं हैं, हिमालय से आए हुए हैं। लाखों तरह की जड़ी बूटियों के प्रयोग करके देख चुके हैं। मुर्दे को जिन्दा कर चुके हैं।

महेश मुर्दों को जिन्दा कर चुके होंगे जिन्दा को क्या जिन्दा करेंगे।

आशा (झुंझलाकर) आप बहस ही करेंगे या जरूरत की बात समझेंगे? डाक्टरी इलाज में हजारों का सवाल है और फायदा हो या न हो। लेकिन आयुर्वेद में? आयुर्वेद में फायदा ही फायदा है, खर्च हो तो थोड़ा-सा हो ले। इतने बड़े अन्तर को आप नहीं समझते!

महेश मैं अवश्य समझता हूँ आशाजी! ठीक है आप मेरा जो इलाज कराएं मुझे मंजूर है। मैं यह भी समझता हूँ कि यह मेरी थकावट का उतना इलाज नहीं है जितना घर के कामों की मेहनत से बचने का इलाज है। करूंगा!

आशा ईश्वर न करे किसी स्त्री का पति वकील हो। असली बात समझेंगे नहीं बाल की खाल निकालेंगे।

महेश अच्छी बात है तो आप क्या चाहती हैं? मैं अपनी थकावट और सिर-दर्द का इलाज कराऊं? करा लूंगा लेकिन मुझे न आजकल के सन्तों और महन्तों पर विश्वास है न उनकी जड़ी बूटियों पर!

आशा आपको न हो मुझे तो है। देखिए मैं आज ही बाजार से आयुर्वेद की एक किताब लाई हूँ। (आलमारी से एक पुस्तक निकालकर लाते हुए) यह देखिए शारंगधर संहिता। इसके प्रथम खण्ड में ही लिखा हुआ है कि (पढ़ते हुए) जैसे देव

तामों के मनक भेद और श्रष्ठ गुण प्रकाशित हैं वसे उत्तम औषधियों में भी अनक भेद और अतुल शक्ति (जोर देकर) अतुल शक्ति प्रकाशित है। ऐसा जान कर और संदेह को दूर कर धीर गभीर बुद्धिमान जन औषधियों के अनक प्रभावों को जानें। (मद्देश से जोरदार शब्दों में) कुछ समझ में आया ?

महेश आप इतने जोर से पढ़ गी फिर भी समझ में न आयगा ?

आशा तो आप विश्वास कीजिए कि औषधियों में बड़ा बल है। और आज के जमाने में असली फायदा जड़ी-बूटियों में है। अब हम लोग स्वतंत्र हो गए हैं। हमें आयुर्वेद को फिर से समाज में लाना है। यहाँ की वनस्पति यहाँ के शरीर पर काम करेगी।

महेश हर बात में तो आप पश्चिम की दुहाई देती हैं। मेरी दवा के लिए आयुर्वेद को ही आजमाना चाहती हैं ?

आशा आजमाने की बात नहीं है। आयुर्वेद सही है और उसमें खर्च कम है। अगर आपकी डाक्टरी दवाइयों में ही सारा रुपया खर्च कर दिया जाय तो घर के जरूरी कामों के लिए रुपया कहाँ से आयगा ? तीन सौ रुपयों में एक मामूली साड़ी मिलती है। अभी अभी पाँच साड़ियाँ लायी हूँ। पिछले महीने तो तुमने आठ सौ रुपये ही न कमाये थे ! साड़ियों की कीमत से आधे भी नहीं ! फिर डाक्टरी दवा कैसे हो ? सुनिए और हमेशा के लिए सुनिए कि आपकी दवा होगी और वह आयुर्वेद की होगी और आज से होगी।

महेश जैसी आपकी इच्छा।

आशा मेरी इच्छा की बात नहीं। आपकी कमजोरी और थकावट की बात है। सुनते सुनते ऊब उठी हूँ। (चिढ़ाते हुए) अब थक गया तब थक गया। जब थक गया ! सुनिए व

योगिराज आज ही किसी समय आयेंगे और उनकी जड़ी-बूटियों की दवा आपको लेना पड़ेगा। नहीं लेंगे तो मेरा अपमान होगा और मैं आशा करती हूँ कि दूसरों के सामने आप मुझे अपमानित नहीं करेंगे।

महेश कोशिश तो मैं ऐसी ही करता हूँ। इसीलिए मैं चाय भी बना रहा हूँ जिससे आपको महमान किशोरी जी के सामने आपको अपमानित न होना पड़े।

आशा इसके लिए मैं आपको धन्यवाद दे सकती हूँ।

महेश अब तक आ रहे हैं आपकी महमान ?

आशा (हाथ की घड़ी देखकर) बस, साढ़े पाँच बज रहे हैं। अब उन्हें आना ही चाहिए। उनके हज़बैंड भी आ रहे हैं प्रोफेसर अनूपचन्द्र! उनको तो आप जानते होंगे।

महेश हाँ जानता हूँ। सुबह टहलते वक्त रोज ही उनसे मुलाकात होती है।

आशा तो आप भी कपड़े बदल लीजिए। मैंने तो मेक अप कर लिया। बड़ी मुश्किल से लिपस्टिक का ठीक शेड मिल सका है। पाउडर पर रूज का टिंट भी मुश्किल से मिला। जब मैं बी० ए० में पढ़ती थी तब देखते मेरा मेक अप! लेकिन खैर अब भी किसी तरह पाउडर और रूज लगा ही लेती हूँ।

महेश नहीं अब भी आपका मेक अप किसी अप-टू-डेट लेडी से कम नहीं होता। आपको देखता हूँ तो अपने को सौभाग्यशाली समझता हूँ कि आप जैसी सुन्दर पत्नी का मैं पति हूँ।

आशा (मुस्कुराकर) ठीक है मिस्टर! आपके इस वाक्य पर मैं इस महीने में आपको एक नई टाई खरीदने की मंजूरी दूँगी।

महेश धन्यवाद!

आशा तो इस समय तो कुछ मन्द्य बनद परा लीजिए।

महेश नहीं मेरी मपड ठीक है। कोई बाहरी मेहमान ता है नहीं!

आशा हाँ बाहरी महमान ता नहीं है। मेरी सहपाठिनी किशोरी है और उनके हज़बंड। अभी पिछले वर्ष उनकी शादी हुई। आज सुबह नाव में योगिराज से मिलने पर लौट रही थी तभी वह अपने हज़बैंड के साथ मिलीं। बातों ही बातों में उन दोनों को आज चाय का निमंत्रण दे दिया।

महेश ठीक ही तो किया आपने। आते ही आपने मुझसे कह दिया था इसीलिए मैं भी सीधे कोर्ट से अन्नपूर्णा भण्डार चला गया और वहाँ से अच्छी अच्छी मिठाइयाँ ले आया।

आशा वाह वाह! धन्य हैं! कोई आपसे हज़बंड की ड्यूटी सीखे। अब तो आप घर के कामों में बिल्कुल एक्सपर्ट हो गए। यह सब प्रबंध करने के लिए इस महीने में टाई के साथ एक रेशमी रूमाल भी

(नेपथ्य से किसी रमणी-कंठ की दबी हँसी तथा आने की आवाज़)

महेश देखिए आपकी किशोरी जी आ गई। आप उन्हें रिसीव कीजिए मैं अभी चाय लाया। (खिड़की से बाहर देखता है।)

आशा अरे प्याला और तश्तरी तो लेते जाइए!

महेश (जीभ काटकर कान पकड़ते हुए) ओह! इन्हें तो भूला जा रहा था। अभी ट्रे सजाकर लाया मेम साब!

आशा (तीक्ष्णता से) ए जरा सुनिए!

महेश (लौटकर) कहिए!

आशा आप मुझे किशोरी और उनके पति के सामने सिर्फ आशा कह सकते हैं। आशाजी कहने की जरूरत नहीं और मेम साब तो कभी कहिये भी नहीं! समझ गए न?

महेश बहुत अच्छा कोशिश करूँगा। (प्रस्थान)

आशा (महेश के जाने की दिशा में देखते हुए) काम तो अच्छा करते हैं। थक जाते हैं बेचारे। लेकिन योगिराज की दवा से ठीक हो जाएंगे। (किशोरी २० वर्ष) और उनके पति अनूपचन्द (२५ वर्ष) का प्रवेश। किशोरी सिल्क की सफेद रंग की साड़ी और पीले रंग के ब्लाउज में बड़ी आकर्षक लगती है। माथे पर तिलक की बिंदी और हीरे के ईयररिंग्स, पैरों में कपूर चप्पल। अनूपचन्द्र सर्ज के सूट में हैं। आशा द्वार के समीप बढ़कर उनका स्वागत करती है। सभी हाथ जोड़ कर परस्पर नमस्कार करते हैं।)

किशोरी आओ आशा! नमस्कार! कैसी हो?

आशा नमस्कार किशोरी! तुम?

किशोरी अच्छी हूँ। मेरे पतिदेव (परिचय के स्वर में हाथ का संकेत)

अनूप नमस्कार आशा बहिन! आपसे तो मिल चुका हूँ।

आशा नमस्कार, अनूपचन्द्र जी! आपको कौन नहीं जानता! प्रोफेसर और कवि। बैठिए न! (किशोरी से) किशोरी! अनूपचन्द्रजी इधर मेरे साथ बैठेंगे। (पास की कुर्सी पर बिठालती है।)

किशोरी जहाँ चाहे बिठलाइए अब तो आपके घर में हैं। अच्छा महेश जी कहाँ हैं? कोर्ट से लौट आए?

आशा हाँ कुछ देर पहले लौटे। आपके लिए चाय ला रहे हैं।

अनूप अरे उन्हें कष्ट करने की क्या आवश्यकता?
(किशोरी से) किशोरी! तुम जाओ सहायता करो।

आशा नहीं, किशोरी! तुम बैठो (रोकती है।) तुम जाओगी तो उन्हें बुरा लगेगा। वे आज अपने हाथों से चाय बना रहे हैं। सुनो, अनूपचन्द जी! जब उन्होंने सुना कि आप लोग आ रहे हैं तो मुझसे कहने लगे कि तुमने तो किशोरी को अनेक बार चाय पिलायी होगी आज मैं उन्हें और उनके पतिदेव को अपने हाथ

को बना चाय पिलाऊंगा ।

अनूप बड़े सज्जन हैं । ऐसी भी क्या बात है ? उनके साथ चाय पीने में ही आनन्द आता है ।

किशोरी और फिर वे बाहर से थके-मांदे आ गए होंगे । उन्होंने हम लोगों के लिए इतना तकलीफ उठाई । नौकर ही चाय ला देता ।

आशा नौकर द्वारा लाई चाय में वे विश्वास नहीं करते । या तो मैं बनाऊं या वे बनायें । वे तो कहते हैं कि नौकर के हाथ की चाय ऐसी ही है जैसे सिविल मैरिज हो (अट्टहास) सिविल मैरिज—कहाँ नशीली गरम चाय और कहाँ नौकर के मजबूत हाथ ! ब्राह्मण लड़का की शादी ईसाई के साथ !

अनूप (हंसते हुए) बड़े पते की बात कहते हैं लेकिन कभी-कभी सिविल मैरिज भी तो मजेदार होती है । उसका भी एक अलग रोमांस है ।

आशा (आँखें तिरछी कर) किशोरी बहिन ! सुन रही हो इनकी बातें ?

किशोरी ये बस बातें ही करते हैं । कवि हैं । अपनी कविता में ऐसे ऐसे चित्र खींचते हैं कि इनके सामने स्वर्ग की अप्सराएं नाचती हैं और ये हैं कि उनकी तरफ देखते भी नहीं ।

आशा तुम क्या जानो भोली भाली किशोरी !

(नेपथ्य की ओर देखकर) देखो वे आ गए टे लेकर

(महेश का मिठाई का ट्रे लेकर प्रवेश)

किशोरी (उठकर) अरे भाई साहब ! आप इतनी तकलीफ कर रहे हैं ? नमस्कार !

महेश नमस्कार ! इसमें तकलीफ कैसी ?

आशा (परिचय कराते हुए) ये मेरी बहिन किशोरी और ये उनके पतिदेव प्रोफ़सर अनूपचद्र जी ।

महेश (नमस्कार कर) जानता हू सुबह टहलत समय प्राफसर साहब तो रोज ही मिल जाते हू ।

आशा अच्छा तब तो गहरी पहिचान ह ।

महेश म चाय भी ल प्राऊ !

किशोरी प्राशा बहिन ले प्राएगी । प्राप बठें ।

आशा व मुझ लान भी नहीं देंग । म ता पहल ही लाना चाहती थी ।

महेश नही मुझ लान का सौभाग्य प्राप्त करने दीजिए । (प्रस्थान)

अनूप प्रापका नौकर कहाँ गया ?

आशा अर, कुछ न पूछिए । जब य काट से प्राए तो नौकर बडे मैले कुचल कपड पहिन था । इन्हें बहुत बुरा लगा । कहन लगे—प्राज हमारे घर चाय पीन के लिए महमान प्रा रहे हैं और तू भगी बन कर खडा हुआ ह ? निकल जा यहाँ से । बस उस उसी दम निकाल दिया और खुद चाय बनाने लगे । मैं प्राग बढी तो मुझ बतन तक नहीं छून दिए !

अनूप बडा ख्याल रक्खा हम लोगा का ! बड शिष्ट और सज्जन व्यक्ति ह । टहलते समय एसी बातें करते हूं कि मुझ भी नई नई बातें सूझ जाती ह । बहिन प्राशा ! एस पति पान पर मैं प्रापको हार्दिक बधाई देता हूँ ।

किशोरी हमारी बहिन प्राशा के भाग्य की तो सभी सराहना करत हूं ।

अनूप करना ही चाहिए । बडी भाग्यशालिनी हूं ।

आशा भाई साहब ! जब मैं बी० ए० में पढती थी तभी हमन और किशोरी न अपन अपन भाग्य का निणय कर लिया था ।

अनूप किशोरी का भाग्य अच्छा नही रहा ।

आशा वाह, लाखो में एक । नाम ही अनूप ह ।

किशोरी म ऐसी तरह मुझे लज्जित करते रहते हैं।

(चाय की ट्रे लेकर महेश का प्रवेश)

अनूप (उठकर) हमारे प्रेम की सराहना कहाँ तक की जाय भाई साहब ! आपने हम लोगों के लिए बहुत कष्ट उठाया। आशा बहिन का पता तक नहीं चल पाया। अब आप बैठिए !

(महेश बैठ जाता है।) (किशोरी से) किशोरी ! तुम चाय बनाओ !

आशा म बनाती हूँ। (हाथ बढ़ाती है।)

किशोरी म चीनी डालती हूँ। (महेश से) महेश भाई ! चीनी एक चम्मच या दो ?

महेश शादी के पहले दो चम्मच लेता था अब एक लेता हूँ।

अनूप (मुस्कुराकर) अच्छा ! बाकी एक चम्मच चीनी की मिठास आशा बहिन से मिल जाती होगी।

आशा (अनूप से) और आप तो बिना चीनी की चाय पीते होंगे। सारी मिठास किशोरी बहिन म होगी न

किशोरी मिठास की बात नहीं है लेकिन (सब को चाय देते हुए) आपके प्रोफेसर साहब ने मेरे जीवन में परिवर्तन कर दिया है। कहाँ मैं काम से इतना जी चुराती थी अब इनकी सेवा करते-करते मन में न जाने कितनी उमंग आ गयी है।

अनूप अन्य कारणों से भी तो उमंग आ सकती है !

आशा नहीं जी आपके गुण ही ऐसे हैं जो इस ट्रे में रखी हुई मिठाइयों की भाँति स्वादिष्ट हैं। लीजिए ये मिठाइयाँ।

(सब की ओर ट्रे घुमाती है। सब एक एक टुकड़ा उठाते हैं।)

किशोरी (चखकर) मिठाइयाँ बहुत स्वादिष्ट हैं। जितनी अच्छी चाय उतनी ही अच्छी मिठाइयाँ। बहुत अच्छा सामान है !

महेश यह सब मम सा (भूल सुधारते हुए) आशा का ही प्रबन्ध है।

(आशा महेश की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखती है।)

किशोरी (मुस्कुराकर) आशा ! तुम मेम साहब हो ?

आशा मम ? (हसकर बात बहलाते हुए) इन्हें पुरानी बात याद हो आयी। शादी से पहले इनके पास एक ममना था। बडा सुन्दर—बडा सलोना ! मेरे आने पर इन्होंने मुझे ही मेमना कहना शुरू कर दिया। मैंने बहुत मना किया मैं इतनी सुन्दर ही कहाँ हू ? लेकिन उसी पुरानी याद से कभी कभी मेम उनके मुख से निकल जाता है। लीजिए। मिठाइयाँ और लीजिए।

(बात बहलाने की दृष्टि से फिर से ट्रे घुमाती है।)

अनूप नहीं हम लोग बहुत ले चुके। अब बस कीजिए।

आशा किशोरी तुम कुछ लो।

किशोरी बहुत लिया। काफी खा लिया फिर आज पिकनिक में भी हम लोग काफी खा चुके।

आशा किस पिकनिक में गई थी ?

किशोरी यही घर की पिकनिक। आज इन्होंने छुट्टी ले रखी थी। कहा—चलो आज पिकनिक हो जाए। अपनी कार पहले से ही ठीक करा ली थी। आज सुबह जब तुम मिली थी तब हम लोग पिकनिक का ही सामान खरीद रहे थे।

महेश पिकनिक तो बडी दिलचस्प रही होगी।

किशोरी बहुत ! ये यूनिवर्सिटी की मजेदार बातें सुनाते रहे मैंने स्टोव जला दिया।

महेश स्टोव की आवाज में उनकी बातों की गुंजाइश थी ?

आशा (कुछ तीव्रता से) बीच में ऐसे प्रश्न पूछ कर मजा क्या खराब करते हो ? अच्छा फिर क्या हुआ ?

किशोरी स्टेज पर मने अच्छे अच्छे नाटक बनाए म नई कविता लिखती रही ।

आशा आपसे ऽ‍मपरिचय ज्ञा मिल रहा था । सुना है यह कविता अनूप जी ।

किशोरी उन्होंने इतने अच्छे स्वर से कविताए सुनायीं कि मैं अपने को रोक नहीं सकी । नृत्य करने के लिए उठ खड़ी हुई और एक घंटे तक बराबर नृत्य करती रही ।

आशा एक घंटे तक ? थकी नहीं ?

किशोरी बिल्कुल नहीं । पहले तो बहुत जल्दी थक जाती थी लेकिन इन्होंने एक योगिराज से मेरी परीक्षा करवाई । बहुत अच्छी दवा दी उन्होंने ।

आशा (कुतूहल से) अच्छा ! कौन हैं वे योगिराज ?

अनूप योगिराज योगानन्द । पिछले शनिवार को जब आप मिली थीं तब मैंने इनके सम्बन्ध में कहा था । बहुत गहरी दृष्टि रखते हैं आयुर्वेद में ।

आशा हाँ आपने उनकी बडी तारीफ की थी ।

अनूप वही हैं । बहुत अनुभवी । न जाने कैसी कैसी जड़ी-बूटियाँ हैं उनके पास । तत्काल प्रभाव करती हैं । किशोरी पहले बहुत कमजोर थी हर काम में थक जाती थी ।

आशा (महेश की ओर संकेत करते हुए) ये भी बहुत थक जाते हैं ।

महेश दिन भर कोर्ट का काम करने पर तो थकावट आ ही जाती है ।

अनूप अब या तो मैं भी थक जाता हूँ लेकिन अगर शरीर में कमजोरी हो तो उन्हें जरूर दिखलाओ । किशोरी भी पहले बडी कमजोर थी । हमेशा सिर में दर्द और शरीर में थकावट ! योगि

राज की एक खुराक में सब गायब।

आशा (आश्चर्य से) इतना प्रभाव है उनकी एक खुराक में ? मैं पहले ही जानती थी कि आयुर्वेद की जड़ी-बूटियों में बड़ा प्रभाव होता है। (महेश से) देखा, मैं कहा था न कि आजकल के टानिकों में कुछ नहीं रखा है। जड़ी-बूटियाँ ही आराम दे सकती हैं।

महेश हाँ कहा जरूर था लेकिन

आशा (बीच ही में अनूप से) मैं आज उन्हें बुलाने ही गई थी। जब आपसे मिली थी। आज वे किसी समय भी आ सकते हैं।

अनूप अच्छा किया आपने उन्हें बुला लिया। तो महेश जी को दिखला दीजिए।

महेश लेकिन मुझे कोई थकावट या कमजोरी नहीं है।

अनूप हाँ देखने में तो नहीं मालूम होती। रोज सवेरे टहलते हैं, मुझसे मिलते हैं। और फिर जिस फुर्ती से ये चाय और मिठाइयाँ लाए वैसी फुर्ती तो हम लोगों में से किसी में नहीं है। मुझे तो इनकी शकल में और उस गुलदस्ते में (गुलदस्ते की ओर संकेत करते हुए) कुछ अन्तर ही नहीं मालूम होता।

आशा तो इन्हें अपने कमरे में रखकर सजा लीजिए ! लेकिन अनूप भाई ! इनकी शकल चाहे जैसी हो, थकावट और कमजोरी इनमें बहुत है। अन्दर की कमजोरी दिखलायी नहीं देती।

किशोरी खैर जाँच कराने में क्या हानि है ? हैं भी तो बहुत पहुँचे हुए योगिराज। वे नाड़ी की परीक्षा बहुत अच्छी तरह से करते हैं। वे रोगी से कुछ पूछते ही नहीं, नाड़ी देख कर फौरन दवा दे देते हैं।

आशा बड़े अनुभवी मालूम पड़ते हैं।

किशोरी लेकिन बहिन ! एक बात है। यदि उनकी इच्छा के खिलाफ़

कुछ ना किया था ग । गा कम्प अनिष्ट हो जाता है । वे बड़े सिद्ध पुरुष हैं । जैसा म कहते हैं वसा ही करना पड़ता है ।

आशा मर ता उनके मन में तिरस्कार कर या करने की क्या जरूरत ? मैं कोई एसी बात कर गो ही नहीं जो उनकी मर्जी से विपरीत हो । म तो परिस्थिति देखकर काम करने वाली हूँ ।

महेश यह तो मैं भी कह सकता हूँ लेकिन

आशा (बीच ही म) आप चुप रहिए । इतने अच्छे योगी हमारे नगर में है और हम उनसे लाभ नहीं उठाते । (किशोरी से) हाँ तो किशोरी ! उन्होंने तुम्हारा इलाज कैसे किया ?

किशोरी इलाज क्या ? उन्होंने मुझे देखा—एक मिनट तक देखते ही रहे जसे उन्होंने मेरे शरीर और शरीर के भीतर मन तक को पढ़ लिया । फिर उन्होंने मेरी नाड़ी पर हाथ रखा और कुछ देर तक आँखें मूंदकर सोचते रहे । एकाएक जय श्रीमन्नारायण कहा और अपनी झोली में से एक जड़ी निकाली और कहा—खा जाओ । (अनूप की ओर संकेत करते हुए) य चुपचाप देखते रहे । म वह जड़ी खा गई । जड़ी मेरे मुँह में पहुँची ही थी कि मालूम हुआ जसे हजारों बिजलियाँ मेरे शरीर में समा गयी । मैं उठ खड़ी हुई । उन्हें प्रणाम किया और घर के भीतर चली गयी । जो काम मैं दस दिनों से टालती आ रही थी उसे क्षण भर में कर लिया ।

आशा (आँखें फाड़कर) आश्चर्य ! इतना प्रभाव है उनकी जड़ी की एक खुराक में ? अच्छा तुमने उन्हें कुछ दिया ?

किशोरी (अनूप की ओर संकेत) य जानें ।

अनूप मैंने उन्हें सौ रुपये का नोट देना चाहा । व उठ खड़े हुए और उन्होंने कहा कि यदि एक पैसा भी तूने दिया पुरुष ! तो जड़ी

इतना और चाहती हूँ कि आयन्दा मेहमानों से ढंग की बात की जाय।

महेश मैं तो ढंग की ही बातें करता हूँ।

आशा चार किताबें पढ़ने से ढंग नहीं आता। ढंग आता है शरीफ आदमियों के साथ उठने-बैठने से। बेचारी गिरीश क्या सोचती होंगी कि मेरा साथ ऐसे आदमी से

(दरवाजा खटखटाने की आवाज)

आशा देखिए कौन है जरा बाहर जाकर! मैं भी देखूँ।

(खिड़की के पास जाकर देखती है।)

महेश मैं देखता हूँ बाहर। (प्याला तश्तरियाँ छोड़कर बाहर जाता है।)

नेपथ्य से आशादेवी का यही मकान है?

आशा (खिड़की के पास से लौटकर) हाँ यही मकान है। (अपने आप) योगिराज जी आ गए।

महेश (द्वार से लौटकर) कोई साधू है।

आशा (चिढ़कर) साधू! ये योगिराज को साधू कहते हैं! धन्य है! (हाथ जोड़ने का अभिनय करती है।)

(एक संन्यासी का प्रवेश)

संन्यासी (आशा को हाथ जोड़े देखकर हाथ उठाकर) स्वस्ति देवि! स्वस्ति!! आप आशा देवी हैं?

आशा मैं ही सेविका आशा हूँ।

संन्यासी जय श्री मन्नारायण! बड़ी कठिनाई से आपका निवास-स्थान मिला इसीलिए कुछ विलम्ब हो गया।

आशा कोई बात नहीं स्वामी जी! आप स्वामी योगानन्द जी हैं?

संन्यासी त्रिकालज्ञ स्वामी योगानन्द जी द्वार पर हैं। मैं उनका शिष्य हूँ सेवानन्द।

आशा स्वामी योगानन्द जी द्वार पर ह ? (महेश से तीव्र स्वर मे) आप द्वार पर क्या देखन गए थे ? जाइए, स्वामी जी को भीतर लिवा लाइए। अच्छा ठहरिए आपसे कुछ न बनगा। मैं ही जाती हू। (शीघ्रता से प्रस्थान)।

सेवानन्द (अवाक होकर मुह फाडते हुए) देवी जी साक्षात दुर्गा स्वरूपा ह। (महेश से) आप उनक पति ह ?

महेश पति का अर्थ यदि जानवर ह तो मैं पति हूँ।

सेवानन्द श्रीमन्नारायण ! सुना था ये देवी जी आश्रम में पहुची थीं म उस समय आश्रम में नहीं था। य स्वामी जी स औषधि चाहती थीं। स्वामी जी ने कहा—म देखकर औषधि देता हूँ। किसे औषधि चाहिए ?

महेश मुझे !

सेवानन्द आप तो बिलकुल अच्छे ह श्रीमन्नारायण !

महेश मैं खुद समझता हूँ कि म बिलकुल अच्छा हूँ लकिन श्रीमती जी का कहना ह कि म कमजोर हूँ। ठीक ढग से काम नहीं कर सकता। थक जाता हूँ। व मुझसे घर का काम अधिक स अधिक लेना चाहती ह।

सेवानन्द स्वय कितना काम करती ह ?

महेश अपन विचार स व भी बहुत काम करती ह। अपन कोट पर बुरुश करती ह, अपनी भौंहें रगती ह। भौंहों के बाल चुनती ह। मुह पर पाउडर लगाती ह ओठों पर रग करती ह। इसी तरह बहुत बड-बड काम करती ह। साडी खरीदन का काम बडा मन लगा कर करती हैं। तीन-तीन सौ रुपया का अभी पाँच साडियाँ खरीद कर लाई ह।

सेवानन्द और श्रीमन्नारायण ! आपके लिए क्या लाइ ?

महेश लाइ तो कुछ नहीं, अपन महीन एक टाई और एक रेशमी

स्माल तरीन्न की मजूरी दे गी हू ।

सेवानन्द आप पर बहुत कृपालु मात होतीं हैं श्रीमन्नारायण ! कोई चिता का बात नहा। स्वामी जा आपको दर्शन हा समझ जायेंगे कि आपको किस औषधि की आवश्यकता है ।

महेश या तो मुझ कोई औषधि नहीं चाहिए ।

सेवानन्द आपका अपन जावन की औषधि चाहिए ।

(महात्मा योगानन्द के साथ आशा का प्रवेश। महात्मा योगानन्द का वेश भव्य है । प्रशस्त ललाट, उस पर भस्म की लोर। विशाल नेत्र। उनके आते ही जसे एक आध्यात्मिक वातावरण छा जाता है। उनक हाथ में एक लम्बी लकडी । आशा उन्हें आदर से लाकर तख्त पर बिठलाती है ।)

आशा स्वामी जी धन्य हैं सेवानन्द जो ! आंख बन्द कर लेटे हुए ही किसी ध्यान में मग्न थे। मझे साहस नही हुआ कि उनका ध्यान भग करू । जब व अपनी समाधि स जाग तो उन्हें यहाँ ला सकी। म धन्य हुई उनके दर्शन पाकर !

सेवानन्द मर गुरुदेव एस ही ह दवी जो !

आशा इतन बड महात्मा होकर मर घर में स्वय आ गए! (महेश स) इन्हें प्रणाम कीजिए मिस्टर !

महेश स्वामी जी को प्रणाम करता हू । (प्रणाम करता है ।)

योगानन्द (हाथ उठाकर) स्वस्ति !

आशा मन आपको बडा कष्ट दिया स्वामी जो ! आप कितन कृपालु ह कि यहाँ पदल ही चल आए ! कहिए आपकी सेवा म कुछ जल पान भेंट करू ? (महेश स) सुनते क्या ह स्वामी जी के लिए जल्द ही जल-पान लाइए ।

महेश म लाता हू । (चलने के लिए उद्यत होता है ।)

योगानन्द (हाथ से निषेध कर) नहीं पुरुष! तुम दुर्बल हो! तुम जल पान नहीं ला सकोगे।

आशा (आश्चर्य से) स्वामी जी! आपने कैसे जान लिया कि ये दुर्बल हैं? ओफ! आप कितने पहुँचे हुए सन्त हैं! सेवानन्द जी! आपने सत्य कहा था कि स्वामी जी त्रिकालज्ञ हैं। आप बैठ तो जाइए।

सेवानन्द धन्यवाद! मैं भूमि पर ही बैठूँगा। (नीचे बैठ जाता है।)

आशा अरे! आप जमीन पर ही बैठ गए! आप भी तख्त पर बैठिए।

सेवानन्द देवी जी! शिष्य गुरु के बराबर आसन पर नहीं बैठ सकता।

आशा आपने ठीक कहा सेवानन्द जी! पर आप भूमि पर न बैठें। (महेश से) आप देखते क्या हैं जी? भीतर से आसन जल्दी ले आइए।

योगानन्द (निषेध करते हुए) नहीं! जाना मत पुरुष! तुम्हारे जाने की आवश्यकता नहीं है। (आशा से) शिष्या के लिए भूमि से बढ़ कर आसन नहीं है नारी! माता वसुन्धरा का आसन लेकर ही बीज अंकुरित होते हैं। शिष्य भी उसी भाँति अंकुरित होंगे।

आशा क्षमा कीजिए स्वामी जी।

योगानन्द मुझे किस रोगी को औषधि देना है नारी!

आशा ये हैं मेरे पति। देखने को तो तन्दुरुस्त हैं लेकिन भीतर से बहुत कमजोर हैं। घर का जरा सा काम करते हैं तो थक जाते हैं। सिर में दर्द हो जाता है। मन में कोई उत्साह नहीं।

योगानन्द क्या पति स्वयं अपना कष्ट नहीं बतला सकता?

आशा एक ही बात है। मैं बतला रही हूँ।

योगानन्द क्या उसमें बोलने की भी शक्ति नहीं रही?

आशा नहीं बोलते तो हैं

महेश (बोध हो म) लकिन मुझ बोला नहीं ि या जाता ।

योगानन्द (तीव्रता स) तुम्हें बोलन से कौन राक सकता है पुरुष ! बोलो—जार से बालो ! मरी मार दखो—मरी आँखा में देखो।

(महेश योगानन्द की आँखा म देखता है ।)

महेश (मोहित सा होकर धीरे धीरे) मं आपकी आँखा से शक्ति पा रहा हूँ ।

आशा यह शक्ति नही स्वामी जी ! इन्हें एसी जडी दीजिए कि य खूब परिश्रम कर सकें । बचारे थक जात हं ! जिस तरह आपन मरी सखी किशोरी का जडी दी थी बसी ही कुछ इन्हें भी दीजिए । आपकी जडी अमोघ ह ।

योगानन्द शक्ति की जडो ?

आशा हाँ स्वामीजो ! शक्ति की जडी ! उसका मूल्य तो हजार रुपय हो सकता ह किन्तु आप विश्व-कल्याण की दृष्टि से कुछ भी नही लते । आप धन्य हं !

योगानन्द विश्व-कल्याण एक महान् काय ह नारी ! आत्मा की आहुति शून्य का साधना शक्ति का ब्रह्म रध्र म केन्द्री करण कुडलिनी का जागरण और षटचक्र वध ! सहस्रदल कमल में अनहद नाद !

ज्यों तिल माहीं तल ह ज्यों चकमक में आग ।
तरा साईं तुझ म जाग सक तो जाग !
यह विश्व-कल्याण का रहस्य ह नारी !

आशा यह म कुछ नही समझ सकी योगिराज ! इनकी नाडी भर देख लीजिए !

योगानन्द इनकी नाडी देखने की आवश्यकता नही ।

आशा तो तो इन्हें कोई औषधि ही दे दीजिए !
योगानन्द पुरुष ! तुम औषधि खाओगे ?
महेश म किसी तरह बीमार नही हू योगिराज ! म किसी प्रकार की औषधि नही खाना चाहता । ये काम करान के लिए मुझे जबदस्ती औषधि खिलवाना चाहती ह । म योगिराज के सामन झूठ नही बोलू गा ।
योगानन्द (दृढता स) तुम्हें औषधि की आवश्यकता ह ।
आशा देखिए म ठीक कहती थी न योगिराज ? य कमजोर ह बहुत जल्दी थक जात ह ।
योगानन्द (महेश स) तुम औषधि खाओग ।
महेश म नही खाना चाहता योगिराज ! मुझ डर लगता ह ।
योगानन्द खाओ पुरुष ! यह डर लगना ही तुम्हारा रोग ह । तुम औषधि खाओ । पुरुष की शक्ति प्राप्त करो । लो यह औषधि (झोली मे स एक जडी निकालते हुए) यह लो, शक्ति-सजीवनी ! इसक खाते ही तुम्हार शरीर में पौरुष की तरगें फन जाएँगी ।
आशा म कहती हूँ कि आप यह औषधि खाएग । म आदेश देती हूँ कि आप यह औषधि खाए ।
महेश अच्छी बात ह खाऊगा । आपके आदेश स खाऊँगा । (योगिराज स) योगिराज ! जसी चाहें वसी खिला दीजिए ! म इनके आदेश से मर भी जाऊ तो कोई बात नही । दे दीजिए मुझ ।
योगानन्द मरोगे नही पुरुष ! जीवित हो जाओग ! श्रीमन्नारायण का स्मरणकर तुम यह औषधि खाओ ।
(हाथ फलाकर जडी देते हैं ।)
महेश (जडी हाथ मे लकर) खा जाऊ ?

आशा ही फौरन ला जाइए।

महेश मुझे डर लगता है आशा जी ! तुम मुझे यह जड़ी क्या खिलवा रही हो ! या हो तुम जैसा कहोगी वैसा काम करूँगा। मुझ पर रहम करो ! आप यह जड़ी खा लें।

आशा योगिराज जी के गामने अपना और मेरा अपमान मत कीजिए ! यह जड़ी योगिराज ने आपके लिए दी है मुझे नहीं ! आपको इसकी आवश्यकता है। इसे इसी समय खा जाइए।

महेश (डरे हुए स्वर में) खाना ही पड़ेगा ! (जड़ी को लेकर देखता है) यही जड़ी है। खाने से खाते मर ही जाऊँगा और क्या ! अच्छा स्वामीजी ! खाऊँगा । (सेवानन्द से) सेवानन्द जी ! क्या कहकर इस जड़ी को खाना पड़ेगा ?

सेवानन्द श्रीमन्नारायण !

महेश (काँपते शब्दों में) श्री मन्ना रायण। अच्छा स्वामी जी ! यह खाइए क्या कहूँ ?

आशा श्रीमन्नारायण।

महेश श्री श्री मन्ना रायण !

(श्रीमन्नारायण कहकर महेश जड़ी खा जाता है। विस्फारित नेत्रों से चारों ओर डरता हुआ देखता है।)

योगानन्द पुरुष ! अब प्रकृति की शक्तियाँ तुम्हारे भीतर कार्य कर रही हैं ! (कुछ ही क्षणों बाद ऐसा ज्ञात होता है जैसे महेश के शरीर में नवजीवन का संचार हो गया है। वह धीरे धीरे तनकर खड़ा हो जाता है। वीर मुद्रा में चारों ओर देखता है। उसका वक्षस्थल फूल जाता है और वह जैसे सिंह की मस्त चाल से विश्वासपूर्वक सामने बढ़ता है।)

आशा (उल्लास से) वाह ! जड़ी ने फौरन ही काम किया ! (योगानन्द से) स्वामी जी ! आप धन्य हैं ! मैं जीवन भर

आपकी करुणा की भीख कभी न भूलूंगा।

महेश (घूम कर आशा की ओर घूरते हुए एक एक शब्द तौल कर) आशा! योगिराज के सामने वाणी का सयम रक्खो! भगी पत्नी नारी बने, भिखारिन न बन जाय!

आशा (निराशा से हतप्रभ होकर) यह आप किससे किससे कह रहे हैं? आप!

महेश यहाँ आशा नाम की कोई दूसरी स्त्री नहीं है!

आशा (योगिराज से) देखिए योगिराज! ये तो इस तरह कभी नहीं बोलते थे। इन्हें क्या हो गया?

योगानन्द जो होना चाहिए वही हुआ है नारी! परन्तु मैं पुरुष की वाणी स्थान पा रही है। शक्ति-सजीवनी शक्ति की किरणें फैलाती है।

आशा यह तो मैं नहीं चाहती थी योगिराज!

महेश और मैं भी यह नहीं चाहता था कि योगिराज के सामने ये जूठे प्याले और तश्तरियाँ पड़ी रहें। इन्हें अन्दर ले जाओ!

आशा (हिचकिचा कर) मैं? मैं ले जाऊ?

महेश (दृढ़ता से) हाँ तुम तुम ले जाओ!

आशा (कम्पते हुए) मैं मैंने यह काम कभी नहीं किया।

महेश अब करो यह सब अन्दर ले जाओ!

आशा (सहम कर) अच्छा सब सामान अन्दर चला जायगा! अभी महरी आती होगी।

महेश तुम उठा कर रक्खो! आखिर भगवान ने हाथ किस लिए दिए हैं? तुम्हीं कहती थी—काम न करना हमारे हाथों का अपमान है।

आशा योगिराज बैठे हैं मैं क्या कहूँ! (रुककर) खैर, इस बार उठाए देती हूँ पर मैं इन्हें साफ नहीं करूँगी।

महेश मैं फिर उनसे मिल चुका हूँ।

आशा बहुत अच्छा ! मैं उनसे मिल आता हूँ।

(ग्वाला तश्तरियों को उठाकर ले जाता है।)

महेश (योगिराज से) योगिराज के श्रीचरणों में प्रणाम करता हूँ।

(दोनों हाथ जोड़कर सिर भुकाता है।)

योगानन्द (हाथ उठाकर) स्वस्ति ! संतुलित रहना पुरुष !

सेवानन्द पुरुष को संतुलित रहना ही चाहिए स्वामी जी !

महेश योगिराज ! आपकी जड़ी ने मुझे नींद से जगा दिया !

योगानन्द तुमने किसी दिन प्रोफेसर अनूप से अपनी स्थिति बतलाई थी ?

महेश हाँ योगिराज ! प्रातःकाल टहलने समय उनसे प्रतिदिन भेंट होती है।

योगानन्द उन्होंने श्रीमती आशा को संकेत किया था कि वे मुझे अपने घर आमंत्रित करें।

महेश तो आपके आगमन का यह रहस्य है ? किन्तु आपके प्रभाव ने मेरी रक्षा कर ली। जब मैं आपकी आँखों से आँखें मिलाकर देख रहा था तभी मुझे आपका संकेत मिल गया था।

योगानन्द (हाथ उठाकर) यह बात समाप्त हो पुरुष ! सुखी रहो। स्वयं अपनी मर्यादा में रहो और दूसरों को मर्यादा में रखो।

महेश आपकी औषधि में बहुत बड़ी शक्ति है, योगिराज !

योगानन्द विश्व का कल्याण हो !

(महेश शान से टहलता है। आशा शिथिल चाल से आती है।)

आशा (गिरे स्वर से) योगिराज ! यह मेरा अपमान है।

महेश योगिराज ! आप इनके मन को शान्त करने की कृपा करें तब तक मैं स्वामी सेवानन्द जी के साथ कुछ देर के लिए बाहर जाने की आज्ञा चाहता हूँ।

ब्याह-बर हो गयो अब यार मड़रन की मनारी है। जब कभूँ घराने गाँव आत हैं तो सुनत हैं कि मड़रा-वारे बाएँ सबै मो चिड़ाउत हैं—(चिढ़ाने के स्वर में) काए रसी मौगी! तुम्हाँ मोंकवे मा जा रइ! अब भैरा भैया से माहें। वे राय बहादुर साहब की बग्गी में नौकर हो गए हैं—अब बड़िया के भूत भगाव का उपाव नैयाँ!

कामता तुम तो बड़े गुनी आदमी मालूम होते हो भैरव! अच्छा (रहस्यात्मक ढंग से) देखा! तुम श्याम मोहन बाबू का भूत भगा सकते हो?

भैरव कौन स्याम मोहन बाबू? दमाद जू? तो जा कौन मुसकल की बात है। चुटकी बजाउत में उनके भूत और भूत के बाप सा भगा देऊँ! कितन भूता सा तो हम मरघट में जाके कील आए!

कामता कील आए? यह कौन आना कैसा भैरव?

भैरव अरे यामें कौन मुसकल की बात आय! भूत का पकड़ौ और बाह ले गए मरघट में। फिर हनूमान चालीसा पढ़ के सामने ठाड़ो करो और पाँव में कील ठोक के मन्त्र पढ़ के कहो—

सव भूत प्रेत पिसाच साकनी डाकनीनां जन्त्र मन्त्राणि बध-बध कीलय-कीलय मर्दय-मर्दय चूरण-चूरण य ये मन्त्र विघोयती सवताहरण दह दह मथय मथय गदा वज्रेन भस्मी कुरु-कुरु चूरणय-चूरणय, स्वाहा! ॐ ह्रीं-ॐ ह्रीं ॐ ह्रीं। श्री नरसिंहाय नमः।

कामता अरे भरो! तुम तो पूरे पण्डित मालूम होते हो!

भैरव (नम्रता से) अरे नइ सरकार! इनइ चरना के परताप से कछू ओनामासी धम् जान लयो है मनो भूत प्रेत कीलबे के लान बड़ी तिपस्या करने परत है।

कामता अब तपस्या की ता बात ही ह ! तो इससे तुमने भूत कील दिया ?

भैरव हम्रो ! अबै लौ ठान वे नत ठुके भये ! ऐन मरघटा के बीच में। जेठ बमास की घाम तप आँधी चल पानी बरस बिजली कडक, मना एक पाव में ठाड़े ह वे भूत भया। केरा के पत्ता धाई भूनत रत ह एकई जाधा में ! एक मिनट खा वहू जा नई सकें !

कामता ता भाई, मगर श्याम मोहन का भूत मरघट में चला जाय तो सारी मुसीबतें दूर हो जाय ! रायबहादुर साहब खुश हाग, किशोरी की शादी श्याममोहन बाबू के साथ हो जायगी और दोना परिवार सुखा हो जायग ! तुम जितना चाहोग, उतना इनाम भी तुम्हें मिला देंग।

भैरव (हाथ भुलाकर) अर राम कहो सरवार ! जतर-मतर को कछू इनाम होत ह ? आज तक एक पसा नइ लग्रो ! जौन दिना पसा लन लग हौं वा दिना से जतर मतर सब झूठे हो जट ! फिर जा बात तो अपन घर की आय ! जब हमने रत्ती म बाप सें डब्बल नइ लमा तो अब अपन घर से—रायबहादुर साहब से पैसा लहा ? अर राम भजी भया ! जे तो सेवा भाव ह। गुसाई तुलसीदास कह गये ह— पर हित सरिस धरम नहि भाई। धरम की बात ह सरकार ! पसा मारौ कौन दिना काम आह।

कामता ता फिर श्याम मोहन बाबू का भूत भगा दा तो बडी बात हा जाय !

भैरव म ता तयार हौं सरकार ! प रायबहादुर साहब खा भूत प्रेत में बिस्वास नई हां। व कहत ह—ज सव बन्या पुरान ह। अब बडे म कहौ कौन लग ? ठीक ह साहब ! जसी समझौ कहौ।

कामता अब तपस्या का तो बात ही है ! तो इसमें तुमने भूत कौन किया ?

भैरव हओ ! अबै सो ठाड़ व भूत हुके भये ! एन मरघटा के बीच में । जेठ बसाख की घाम तप आँधी चल पानी बरस बिजली कड़क, मनो एक पाँव में ठाड़े हैं व भूत भवा । केरा के पत्ता घाई भूलत रत हैं एकई जाघा में ! एक मिनट ना कहूँ जा नई सकें !

कामता तो भाई अगर श्याम मोहन का भूत मरघट म चला जाय तो सारी मुसीबतें दूर हो जाय ! रायबहादुर साहब खुश होंगे, किशोरी की शादी श्याममोहन बाबू के साथ हो जायगी और दोनों परिवार सुखी हो जायगे ! तुम जितना चाहोगे उतना इनाम भी तुम्हें दिला देंगे ।

भैरव (हाथ फुलाकर) अरे राम कहो सरकार ! जनर-मतर को कछू इनाम होत है ? आज तक एक पैसा नई लओ ! जौन दिना पैसा लन लग हों बा दिना से जतर मतर सब भूठे हो जैहें ! फिर जा बात तो अपने घर की आय ! जब हमन रती के बाप सें इकन्नी नई लओ तो अब अपने घर से—रायबहादुर साहब से पैसा लहौं ? अरे राम भजो भया ! न तो सबा भाव है । गुसाईं तुलसीदास कह गय हैं— पर हित सरिस धरम नहिं भाई ।' धरम बड़ी बात है सरकार ! पैसा सारो कौन दिना काम आहै ।

कामता तो फिर श्याम मोहन बाबू का भूत भगा दो तो बनी बात हो जाय !

भैरव मैं तो तयार हों सरकार ! पै रायबहादुर साहब तो भूत प्रेत में विश्वास नई हो । वे कहत हैं—जे सब बुढ़िया पुरान है । अब बड़े घर के लोग कौन लग ? ठीक है साहब ! जसी समभो कहो ।

हम गाँव के आदमी ! आप जितनो विद्या थोडी पढे हं—मनो धरम खो तो मानत ह । बजरगबली को कीरतन करत ह— मगल सनीचर खो गुड-चना को परसाद चढ़ा देत ह । हम अपन बाप दादा को सास्तर और पुरान तो मानत हं । वे चाहे बुढिया-पुरान कहत हैं ! अरे भलई बुढिया खो न मानें बुढिया तौ काल मर जह पुरान खा तो मान ! पुरान भगवान के कहे भये ह । मनो अब बडो के मुह कौन लग !

कामता तुम चिन्ता मत करो भरव ! म सब प्रबध करा दूँगा । राय बहादुर साहब को समझा दूँगा । अगर तुम्हारे प्रयत्न से श्याम मोहन बाबू की बीमारी अच्छी हो जाती ह तो इसमें क्या हज ह ? दजनो डाक्टर दवा करते हैं एक दवा तुम्हारी भी सही !

भैरव जसो हुकम होय ! मना डाकघरी दवाई के साहँ हमाई दवाई का ! प सरकार ! सांची मानो तो डाकघरो दवाई में भरो तौ तनकई भरोसो नई हो ! आपई सोचो क अपन बाप-दादो के जमान से होरी के दिना में रग की पिचकारा चलत ती । कसी अच्छी ! लाल पीर बँजनी रग की ! गीतो की लहर में ढफ मजीरा के साथ जब पिचकारो की धार चलत ती तौ का कहिए भया ! कपडो के साथ तन मन लौं सुरंग हो जात ते । अब वई की नकल डाकघरा न करी ह । पिचकारी में लाल पीरे रग की जोधों दवाई भर कें वे सूजी छेदत हैं । जो असर टसू के रग को होत हतो वो छोटी-छोटी सीसी में भरे निचाट पानी में ह है ? मनो का कहँ वखत की बलिहारी है भया ! होरी की पिचकारी हो न रही डाकघर की पिचकारी रह गई !

कामता सच कहत हो, भरोलाल ! अब जमाना एसा ही आ गया ह !

लेकिन अब यह बतलाओ कि तुम श्याम मोहन बाबू का भूत कैसे भगाओगे ?

भैरव भगाने की तरकीबें तो बहुत हैं सरकार ! जब चाहें तब भगा दें । मगर श्याम मोहन बाबू से हम मिल सकते हैं ?

कामता अरे वे अभी आ रहे हैं रायबहादुर साहब से मिलने के लिए । रायबहादुर साहब ने उनसे शाम को मिलने के लिए कहा था । वे लोग आने वाले ही होंगे । रायबहादुर साहब तो लड़के को देखने के लिए ही आए हैं ।

भैरव तो जौन बखत स्याम मोहन बाबू रायबहादुर साहब से मिलवे के लाने आयें वई बखत उन पै भूत चढ़ जाय तब तो बात है ।

कामता अब या हमेशा तो उन पर भूत नहीं आता लेकिन कभी-कभी ऐसा हो जाता है । देखो मामा जी की कोई चरचा चलाएंगे शायद उससे कुछ हो जाय ।

भैरव अच्छी बात है सरकार । कोई उपाव करो चाहिए । मैं सोई भीतर जाके महावीर स्वामी का गंडा अपनी बाँह में बाँध लऊँ ।

कामता लेकिन सावधानी से काम करने की जरूरत है । मिर्च की धूनी-वूनी की जरूरत नहीं है । कहीं श्याम मोहन जी का अपमान न हो जाय ।

(ब्रजकिशोर का प्रवेश)

ब्रज (आते ही) कैसा अपमान ? मेरा अपमान ? अरे मेरा अपमान तो हो ही गया कि मैं आपके शहर में सुबह से आया हूँ और कोई पुरसां-हाल ही नहीं । शाम को बाबू मूलचन्द जी और श्याम मोहन के आने की बात थी वे भी नहीं आए ।

कामता अब आते ही होंगे वे दोनों ।

ब्रज आजकल लोगों को टाइम का सेंस बिलकुल ही नहीं रह गया! लोगों के पास अब कुछ बरबाद करने लिए नहीं रहा तो टाइम ही बरबाद किया जाय। गाँव में घड़ी नहीं थी। लेकिन शहरों की घड़ी भी बंद हो गई। अब मूलचन्द जी और भैरो एक तरह से टाइम की वैल्यू भूल गए!

कामता लेकिन रायबहादुर साहब! भैरो इस तरह बात करता है कि इतना टाइम कहाँ निकल गया पता ही नहीं चला! बातें बड़ी मज़े की करता है और आपकी तारीफ तो उसके प्राणों में बसी है।

(भैरव नम्रता प्रदर्शित करता है।)

ब्रज क्या भैरव? पुराना आदमी है मुझे समझता है। इसीलिए उसे साथ ले आया।

भैरव सरकार तो देवता-सरूप हैं। इनकी सेवा करो तो जानो साधू महात्मन की सेवा करी। सरकार! भीतर एक जरूरी चीज देखनी है अगर हुक्म होय तो

ब्रज हाँ हाँ जाओ। देखो थोड़ी देर में बाबू मूलचन्द और श्याम मोहन बाबू आवेंगे! जलपान और पान इलायची का इंतज़ाम रहे।

भैरव सरकार! काम पहले हुकम बाद में।

(शीघ्रता से प्रस्थान)

ब्रज बात करने में तो बस एक ही है। ऐसी बातें करता है कि देवता तक निहाल हो जाते हैं।

कामता और साथ-साथ बड़ा गुनी भी है रायबहादुर साहब!

ब्रज हाँ लोग कहते तो हैं मैंने कभी ध्यान नहीं दिया। न जाने कितने जन्तर मन्तर जानता है। साँप के—बिच्छू के—बुखार के—भूत प्रेतों के! मुझे तो हँसी आती है। मैं भूत प्रेतों में विश्वास

नहीं करता बाबू कामता प्रसाद !

कामता आप विश्वास न करें लेकिन अगर लोग कहते हैं कि भूत प्रेत हैं तो आप उनसे प्रमाण लीजिए। और अगर लोग कहते हैं कि श्याम मोहन बाबू पर भी किसी आत्मा का असर है तो उसकी पूरी जाँच होनी चाहिए।

ब्रज जब मुझे विश्वास ही नहीं है तो जाँच किस बात की करूँ ?

कामता अच्छा आप जाँच न करें हम लोगों को तो प्रमाण लेने का अवसर दे सकते हैं ?

ब्रज मुझे उसमें क्या एतराज हो सकता है ? हाँ किसी की इज्जत पर कोई आँच नहीं आना चाहिए।

कामता नहीं आयगा रायबहादुर साहब ! इतमीनान रखिए। यह जिम्मा मेरा (छाती पर हाथ रखकर) रहा।

ब्रज तो फिर आप भूत का प्रमाण कैसे लेंगे ?

कामता भैरोलाल से मैं बात कर ली है। उसे भूत प्रेतों का बड़ा पुराना अनुभव है, भले ही वह गलत हो। लेकिन हमको उसके प्रयोगों की असलियत तो मालूम हो जायगी।

ब्रज और अगर किसी आदमी की बात न निकली, तो मूलचंद जी बुरा मान सकते हैं।

कामता वे बुरा क्या मानेंगे ? उन्हें तो भूत प्रेतों के होने का पूरा विश्वास है।

(बाहर आने की आहट होता है।)

ब्रज क्या फिर कोई दरवाजा खटखटा रहा है ?

कामता शायद बाबू मूलचंद जी श्याम मोहन बाबू के साथ आ गए हों।

ब्रज दरवाजा तो खुला है। (आवाज देकर) अरे मोहन लाल ! सुनो इधर ! ये महाशय तब से बनारस के कपड़े ही सँभाल

रह ह ।

(मोहन लाल का शीघ्रता से प्रवेश)

मोहन कहिए सरकार !

ब्रज तुम तब से कपडे ही सम्हाल रह हो ?

मोहन (घिघयाते स्वर मे) जी ! सामान जहाँ रख दिया था वहाँ मिला ही नही । बडी मुश्किल से एक कोने में मिला, वहाँ मैंने रखा ही नहीं था ।

ब्रज रखा ही नहीं था ? (कहकहा लगाते हुए) अरे बाबा यहाँ सामान छूने वाला कौन ह ? (हसता है ।) य महाशय सामान रखते कही ह और ढूंढते कही ह । देखो यादाश्त की कुछ दवा करो ।

मोहन गाँव पहुचने पर कर लूगा सरकार ! लेकिन सारे कपडो में धूल पड गई ह । उन्ही पर ब्रश कर रहा था ।

ब्रज तुम्हें धूल ही धूल दिखाई देती ह ! अरे बाहर जाके देखो शायद मूलचन्द जी और श्याम मोहन बाबू आए हो !

मोहन बहुत अच्छा सरकार ! (शीघ्रता से बाहर जाता है ।)

ब्रज इन महाशय को धूल की बडी चिन्ता ह । अभी एक घंटे से ये जनाब हारमोनियम साफ कर रहे थ । अब कपड साफ़ कर रह ह ।

कामता गाँव के आदमी काम की जिम्मेदारी समझते हैं ।

ब्रज क्या खाक समझते ह ! मने इनसे कहा कि तुम्हें धूल की बडी चिन्ता ह । कहीं तुम्हारे दिमाग में भी धूल न भर गई हो ! इस पर य महाशय अपना सर टटोलने लगे अपना सिर (हसते हैं ।)

कामता (हँसते हुए) अपना सर टटोलने लगे ?

(दोनों जोर से कहकहे लगा कर हसते हैं । एक क्षण

बाद बाहर से बाबू मूलचन्द की आवाज़ आती है।)

मूलचन्द अरे रायबहादुर साहब! बड़े कहकहे लग रहे हैं?

(दोनों उठकर स्वागत करते हैं। बाबू मूलचन्द और श्याम मोहन का प्रवेश। मूलचन्द अधेड़ अवस्था के आदमी हैं। शेरवानी और धोती पहने हुए हैं। सिर पर चौकोर टोपी। पैर में स्लीपर। श्याम मोहन २२ वर्ष के युवक हैं। देखने में अत्यंत सुन्दर और आकर्षक। वे नीले रंग का सूट और काले बूट पहने हुए हैं। नीले रंग की रेशमी टाई। बाल सुन्दरता से सवारे हुए हैं। सेंट की खुशबू से सारा कमरा गमक उठता है। ब्रजकिशोर और कामता प्रसाद आगे बढ़ कर दोनों से हाथ मिलाते हैं और कुर्सियों पर बिठलाते हैं। बाबू मूलचन्द कुछ नाक से बोलते हैं।)

मूलचन्द (बठते हुए) बड़े कहकहे लग रहे थे रायबहादुर साहब!

ब्रज कुछ नहीं लाला साहब! आपके इन्तज़ार का वक्त यार कामता प्रसाद जी के साथ किसी तरह काट रहा था।

मूलचन्द माफ़ कीजिए मैंने कहा, रायबहादुर साहब! मुझे आपकी सेवा में आने में कुछ देर हो गई। इस तरह की झंझटें और जान अकेली मैंने कहा! इस कम्बख्त के चलते कि बीस धान्धिया न मैंने कहा, कि घर लिया। लाला जी यह बात है, 'लाला जी वह बात है, मैंने कहा—अरे भूल गया माफ़ कीजिए, मैंने कहा—ये रहा मेरा नहीं-नहीं आपका श्याम मोहन।

(श्याम मोहन दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार करते हैं।)

ब्रज आपसे मिल कर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई।

श्याम मैं कृतार्थ हुआ, रायबहादुर साहब।

मूलचन्द अब ये बहुत शुद्ध हिन्दी बोलता है, रायबहादुर साहब।

कहता ह हिंदी राट्र राट्र क्या कहते हैं उसे, मैंन कहा—

श्याम राष्ट भाषा बाबू जी !

मूलचन्द हा राष्ट्र भाषा ! मुझसे ता कहते ही नहीं बनतो मन कहा ! (कुछ यादकर) हाँ रायबहादुर साहब ! ग्रापको कोई तकलीफ मन कहा कोई तकलीफ तो नहीं हुई ? सुबह ग्रापसे मिल कर गया तो बक क मनेजर मैंन कहा—ग्रा गए ! पाँच लाख के पावन को बात मन कहा थी ।

ब्रज ग्रापका कारबार ही इतना ऊचा ह लाला जी ! कि ग्रापकी एक बात पाँच लाख की ह ।

कामता बहुत धूम ह लाला जी की हिन्दुस्तान भर में ।

मूलचन्द लेकिन इसको कम लोग समझत ह मैंन कहा । रायबहादुर साहब ! हिम्मत तो मेरी मैंन कहा वो ह कि ग्राधी बात पर हिंदुस्तान में तहलका मने कहा मचा दूँ लकिन रायबहादुर साहब ! मरा बटा श्याम मोहन इतना होशियार ह कि कार बार में थोडी भी दिलचस्पी ल ल मन कहा तो बक इधर-से उधर हो जाय—डबिट क्रेडिट ग्रौर क्रडिट डबिट जी (गव से देखकर) लकिन कामता प्रसाद ! श्याम मोहन ग्रफसर होना चाहता ह । इतना बडा होकर मन कहा इम्तहान में बठता ह । मन कहा—बचपन की ग्रादत जल्दी नहीं छूटती रायबहादुर साहब ! बचपन में भी इम्तहान ग्रौर मैंन कहा जवानी में भी इम्तहान ! ग्रौर शायद बुढ़ापे में ग्रौर भी कोई इम्तहान होगा मन कहा । ग्रच्छा बाबा ! बठो इम्तहान में मन कहा बठो ! म बगैर इम्तहान के ही भला हूँ ।

कामता ग्रजी इम्तहान पानी भरत हं ग्रापके कारोबार के ग्राग !

ब्रज सही ह लकिन कुछ जल-पान ! (पुकारकर) ग्ररे भरा !

भैरव (नेपथ्य से) ग्राय सरकार ! (भरव ग्राता है ।)

मूलचन्द नहीं-नहीं रायबहादुर साहब! जलपान की बिलकुल जरूरत नहीं है मन कहा! अभी अभी जलपान करके आए हैं हम लोग गद्दी से उठते हैं मन कहा—सीधे घर पर जलपान करते हैं। उसी में तो हमें देर लग गई मन कहा! माफ कीजिए! और फिर बिना लक्ष्मी जी को भोग लगाये मन कहा—मैं कुछ खाता भी नहीं हूँ! मन कहा! लक्ष्मी जी का ही सब कुछ है।

अज हाँ यह तो ठीक है। अच्छा श्याम मोहन जी! आप कुछ जलपान करेंगे?

श्याम धन्यवाद! रायबहादुर साहब! अभी बाबू जी के साथ जलपान किया है।

अज अच्छी बात है। कोई तकल्लुफ न हो! (भैरव से) अच्छा भैरव! पान इलायची ही ले आओ।

भैरव जैसी आज्ञा। (प्रस्थान)

मूलचन्द खाने का रिवाज हिन्दुस्तान में बहुत है मन कहा! सुबह खाना दोपहर को खाना मन कहा और शाम को खाना और कामता प्रसाद जब मिल जाय तब खाना! रायबहादुर साहब! रिश्वत भी खाना और अगर पकड़ गए मन कहा तो जलखाना। खानई खाना है। लोग मैंन कहा कामता प्रसाद! कसम खाते है और जब कसम खाने में धोखा खाते हैं तो फिर मार खाते हैं देख लो इसके खाते के खाते खुल हैं मन कहा।

कामता आप तो बड़े पते की बातें करते हैं लाला जी।

मूलचन्द पते की भलाई हों इम्तहान की नहीं है। मन कहा—श्याम मोहन को तो इम्तहान ही अच्छा लगता है। रायबहादुर साहब! माफ़ कीजिए मैंन कहा—सब बातें मैं ही कर रहा हूँ! आप भी कहते होंगे मैंन कहा कि लाला की बात तो नहीं करता सारी बातें करता हूँ! लीजिए मैं चुप हो जाता हूँ

बाबू कामता प्रसा^ ! (मुह पर हाथ रख लते हैं ।)

कामता नहीं नही आपकी बातें बडी मज़ेदार होती ह ।

श्याम बाबू जी बातों-बातों में बडी बातें कर जात ह । मेरी परीक्षाओं का तो बडा परिहास करते ह ।

ब्रज आप किस परीक्षा में बठ ह श्याम मोहन जी ! गत वर्ष आप एम० ए० तो पास कर चुके थे ?

श्याम जी इस वर्ष आई० ए० एस० में बठा हूँ ! अब परीक्षा फल निकलने ही वाला ह ।

ब्रज मुझे तो उम्मीद ह कि आप शर्तिया कामयाब होंगे । आपका करियर तो शुरू से आखीर तक फस्ट क्लास का ही ह । म अभी से आपका काँग्रेचुलेट करता हू ।

श्याम बहुत बहुत धन्यवा^ रायबहादुर सा^ब ! यह सब आप जसे पूज्यों का ही आशीर्वा^ ह !

ब्रज नहीं-नही यह तो तुम्हारी लियाकत ह । मने अखबारों म पढ़ा था कि तुम यूनीवर्सिटी भर में पहले नम्बर आए थ और तुम्हें क्वीन विक्टोरिया जुबिली गोल्ड मडल भी मिला था । तुम तो यूनीवर्सिटी के बस्ट स्टूडेण्ट मान गए ।

मलचद मूलचन्द भरे ता लड़का किसका ह रायबहादुर साहब ! मन कहा मरा ही ना ? मैं बिजनस म हूँ य पढ़ाई में । दोना मारचे, मन कहा अपनई घर में देख लो ! (हिलकर) घर म फिर बोल गया ! मन कहा मुझे चुप रहना चाहिए ना ?

कामता कोई बात नही लाला जी ! बाप-ब^ दोना ही लियाक़तम^ ह ।

श्याम लकिन मैं समझता हूँ कि जो कुछ भी मैं कर सका हूँ वह पिता जी और आप जस पूज्यों का ही आशीर्वा^ ह । ^स एटॉमिक एज म आशीर्वा^ का भी प्रभाव पड़ता ह । मानसिक

विज्ञान के अनुसार विचारों की भी तरंगें होती हैं और उनकी गति का प्रभाव होता है। आशीर्वाद भी विचारों की एक तरंग है और यदि विचारों की तरंग का प्रभाव है, तो आशीर्वाद की तरंग का भी प्रभाव है। वैज्ञानिक दृष्टि से भी सिद्ध किया जा सकता है कि आशीर्वाद में बड़ी शक्ति है।

कामता बाबू श्याम मोहन जी के विचार कितने सुलझे हुए हैं और इनकी हिन्दी भाषा कितनी मधुर है!

मूलचन्द अरे, तो लड़का भी तो मन कहा आप ही का है। (झट से मुँह पर हाथ रख लेते हैं। हँसी होती है। अर्दली पान इलायची लाता है। राय बहादुर साहब तश्तरी हाथ में लेकर खड़े होकर पान देने के लिए बढ़ते हैं। कामता प्रसाद शिष्टाचारवश कहते हैं—लाइए मुझे दीजिए! (लेकिन राय बहादुर ही देने के लिए उठते हैं।)

श्याम (तश्तरी हाथ में लेकर) अरे आप खुद क्यों कष्ट करते हैं? यह काम तो मुझे करना चाहिए। लीजिए रायबहादुर साहब! (तश्तरी आगे बढ़ाते हैं।)

ब्रज आप लोग तो मेरे कमरे में आए हैं। इस वक्त तो आप मेरे मेहमान हैं मैं नहीं। यह उलटी खातिर!

मूलचन्द कोई बात नहीं, राय बहादुर साहब! मन कहा अब तो मेरे घर और आपके घर में फरक ही क्या रहा! गंगा-जमुना में जमुना-गंगा में। मन कहा, यह तो संगम है!

ब्रज आपका कहना भी ठीक है। कामता प्रसाद! तुम सब को पान दो।

कामता मैं तो पहले उठा ही था। (फिर उठते हैं।)

श्याम नहीं नहीं! आप बैठिए, कामता प्रसाद जी! छोटों के रहते बड़ों को कष्ट करने की आवश्यकता नहीं।

(सबको पान इलायची बाँटते हैं।)

मूलचन्द (पान लेते हुए) म भी लू ? अच्छा। रायबहादुर साहब ! भगवान के जमाने से पान चल रहा ह। बाबा तुलसीदास न भी रामायन में लिखा ह —

दरस परस मज्जन अरु पाना। हर पाप कह वेद पुराना।
गुसाईं तुलसीदास जी कहते ह मन कहा कि दरस-परस करके पान आपस म मिल-जुल के दातो का मजन करना चाहिए और पान खाना चाहिए। मन कहा इससे सब पाप मिट जाते ह।

कामता आपका कहना बिलकुल सही ह लाला जी !

(श्याम मोहन मुस्कुराते हैं और इलायची लेकर तश्तरी टबल पर रखते हैं।)

ब्रज यह सुनकर भी तुमन पान नहा लिया श्याम मोहन बाबू ?

श्याम मैं पान नहीं खाता। मरे गुरुदेव डा० रामकुमार वर्मा पान बहुत खाते ह। एक दिन मन उनसे कहा—गुरुदेव ! म अपने पान भी आपको समर्पित करता हू।

ब्रज (हसकर) बहुत खूब बहुत खूब ! बड गुरु भक्त हो ! मैं तुमसे मिलकर बहुत प्रसन्न हुआ श्याम मोहन ! जितनी तारीफ मैंन तुम्हारी सुनी थी उसे अधिक अब म खुद कर सकता हूँ। आज के जमाने में तुम्हारे जसे लडके समाज और देश के भूषण ह।

मूलचन्द अब रायबहादुर साहब ! तारीफ तो आप करेंगे ही मन कहा। एक लाख रुपया लगाया ह मन इसके पढ़ान में। हाँ पूरा एक लाख मन कहा। लकिन इसके मान ये नहीं ह मन कहा कि मैं रुपया की बातें कर रहा हूँ।

कामता अजी आप रुपयों की बातें कहाँ कर रहे हैं !

श्याम पिता जी स्नेह से ही ऐसी बातें कहते हैं। सबसे व यही कहते

हूं। या वे अच्छी तरह जानते हैं कि प्रेम के सम्बन्ध रुपयों से नहीं आँके जाते। मैंने तो पिता जी से निवेदन किया ही था कि हमारे देश के समाजवादी दृष्टिकोण में रुपये का संचय देश के हित में कभी नहीं होगा। फिर प्रेम के सम्बन्ध में रुपये को आगे रखने का अर्थ होगा कि हम मानवता से अधिक धन का महत्व देते हैं।

मूलचन्द (श्याम मोहन से) बेटे! तेरी बात तो, मैंने कहा कभी-कभी मेरी समझ में भी नहीं आती। (हँसी)

अज नया जमाना नई बातें! अब हमें नये खयालातों को समझने के लिए नये नये पैमाने चाहिए।

(अरब कामता प्रसाद को आँखों से इशारा करता है कि किसी घटना की चर्चा चलाई जाय।)

कामता रायबहादुर साहब! नये खयालातों का प्रचार आप जैसे बड़े आदमियों के व्याख्यानों से तो हो ही सकता है लेकिन सब से अच्छा साधन होगा—सिनमा। मनोरंजन के साथ ही शिक्षा दी जानी चाहिए। अगर सिनमा इस नये सिद्धान्त को अपने हाथ में ले ले तो देश बहुत जल्द तैयार हो सकता है। या फिर बाबू श्याम मोहन जैसे बुद्धिमान नौजवान ऐसे लेख लिखें कि जनता उसे ठीक तरह से समझ ले।

श्याम जनता में पहले शिक्षा का प्रचार होना चाहिए।

कामता हाँ, शिक्षा का प्रचार बहुत जरूरी है। लेकिन आजकल तो जनता सिवाय गजल और फ़िल्मी गाना के कुछ समझती ही नहीं।

श्याम ग़ज़ल और फ़िल्मी गाना को?

कामता (जोर देकर) हाँ तरह तरह की ग़ज़लें ग़ज़लें और ग़ज़लें (दरवाज़े पर खटखट की आवाज़ होती है।)

ब्रज (भरव से) यह दरवाज़ा कौन खटखटा रहा ह भरव ?

भैरव म ग्रबई देख के ग्राउत हा। (शीघ्रता से जाता है।)

ब्रज दरवाज़ा तो खुला होगा।

(दरवाज पर फिर खट-खटाहट। दो-तीन बार बिजली का करेंट धीमा ग्रौर तेज होता है।)

मूलचन्द (व्यग्रता से) यह तुमन क्सी बात कही कामता प्रसाद ! मन कहा।

कामता कुछ नहीं लाला जी ! ग्राजकल जनता में गजनें ग्रौर गजनें ग्रौर तरह-तरह की गज़लें ही गाई जाती ह। (दरवाज़े पर फिर खटखट की ग्रावाज होती है।)

मूलचन्द (तीक्ष्णता से) मरे तो एसी बातें मुह से क्या निकालते हो मने कहा !

(भरव लौटकर ग्राता है।)

ब्रज क्या क्या बात ह ? बाहर कौन ह ?

भैरव बाहर कोई नइ दिखानो सरकार !

ब्रज बाहर कोई नहीं ह ? फिर यह खटखट की ग्रावाज क्सी ?
(श्याम मोहन की भगिमा बदल जाती है। उनकी ग्राँखें मुल हो जाती है। वे सहसा कुर्सी पर भुक जाते हैं।)

श्याम (चौंककर) मोह ! मर पजा में पजा में बहुत बहुत दद ह ! बहुत दद बहुत दद ह ऽऽ

मूलचन्द (उठ कर) जूत खोनो जूत खोलो मन कहा ! कामता प्रसाद ! वाहियात ग्रादमी तुम वाहियात ग्रादमी हो। इसी से डरता था वही बात वही बात ! (श्याम के जूते खोलन के लिए भकत ह।)

श्याम (एंठकर) पजा में दद

ब्रज (ग्रप्रतिभ होकर) भरा ! श्याम बाबू के जूते खोनो।

भैरव जो हुकुम सरकार ! (भैरव झट से जूते खोलता है। श्याम मोहन जूते खुलने पर अट्टहास करता है। फिर कुर्सी से उठकर घूमता हुआ जैसे शराब के नशे मे बोलता है। भैरव बड ध्यान से श्याम मोहन को घूर कर प्रसन्न होता है।)

श्याम गजलें ग़ज़लें गजल ' जो लुत्फ ग़ज़लो में है वह जिन्दगी के किसी तसव्वर म नहीं ह हुजूर ! किसी शायर न क्या खूब कहा ह—

हम बन्द किए आँख तसव्वर में पड हों ।
इतन में कोई घम-से जो आ जाय तो क्या हो ?

तो क्या हो (अट्टहास) तो क्या हो ! हुजूर ! बतलाइए ता तो क्या हो ो ो ो।

(मूलचन्द हत प्रभ होकर कुर्सी पर ढील पड जात हैं। कामता कौतुक से भरव की ओर देखत हैं। भरव अपनी भाव-भगिमा में बहुत प्रसन्न होता है।)

अज (आश्चय से) यह क्या बात ह श्याम मोहन जी ?

श्याम (विकृत स्वर से) श्याम मोहन ? अरे भाई ! मैं फूलचन्द हूँ फूलचन्द ! आफ़ताबे ग़ज़लगो । वो ग़ज़लें आपको सुनाऊँ वो ग़ज़लें सुनाऊ कि विहिश्त की हूरें आपकी खिन्मत में हाजिर हो जायें (अट्टहास) ह ह ह ह ह ! विहिश्त की हूरें ! (रुककर) हाँ जरा मुझे पानी का एक गिलास इनायत फ़रमाए, रायबहादुर साहब । बहुत प्यास लग रही ह ।

अज (किंकर्तव्यविमूढ़ होकर) भरो । जल्दी से एक गिलास पानी लाओ !

भैरव (समझकर सिर हिलाता हुआ) बहुत अच्छी सरकार !

(शीघ्रता से जाता है।)

श्याम ग़जल का मिसरा याद कर लू !

(गुनगुनाते हुए सिर हिलाकर आँखें बन्द किये सोचते हैं।)

ब्रज (मूलचन्द से) क्या बात ह मूलचन्द जी ! श्याम मोहन जी किस तरह बातें कर रहे हं ? किसी डाक्टर को बलवाया जाय ? (कामता प्रसाद से) कामता प्रसाद ! किसी डाक्टर को जल्द बुलाओ !

कामता (उठकर) अभी जाता हू !

मूलचन्द (गिरे हुए स्वर से) नही नही डाक्टर कुछ नहीं कर सकेगा ! म सब डाक्टरो को दिखला चुका हूँ। य कामता प्रसाद न ही मन कहा ऐसी बातें करो ऐसी बातें करो।

ब्रज कसी बातें ?

मूलचन्द अब क्या कहूँ रायबहादुर साहब ! कामता प्रसाद को कुछ तो सोचना चाहिए या मन कहा।

कामता मुझे माफ कीजिए लालाजी ! अगर कोई ग़लती हुई हो। अपने जान तो मुझसे कोई बेअदबी नही हुई।

ब्रज हाँ बाबू कामता प्रसाद न तो कुछ नहीं कहा !

मूलचन्द रायबहादुर साहब ! मुझे माफ़ करें। मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ !

(भरत पानी लाता है। श्याम मोहन झपटकर पानी पीते हैं।)

श्याम (पानी पीकर मूलचन्द को देखते हुए) शर्मिन्दा ? (सिर को झटका देकर उठाते हुए) शर्मिन्दा ? किस बात पर शर्मिन्दा ! बाबू मूलचन्द जी ! गजल सुनने से आपको शर्म आती ह ? (हसकर) शर्म आती है ? अच्छा ! शर्माइए ! आपको अपनी जवानी के दिनों की याद आती ह ? जिन्दगी में रायबहादुर साहब ! शर्म भी अच्छी चीज ह देखिए ! मैं आपको ऐसी ग़जल सुनाऊ कि बाबू मूलचन्द जी शर्मा जाय और आपसे

नजरें न मिला सकें। देखिए तरन्नुम में पढ़ता हूँ —

जो तगे नाज का बिस्मिल नहीं ह
हमारी राय में वह दिल नही ह।
कभी उनकी झलक देखी थी मन—
मेरे काबू में अब तक दिल नही ह।
यह खो जाए कि रह जाए तुम्हें क्या ?
हमारा ह तुम्हारा दिल नही ह।

जरा ग़ौर फरमाइए हुजूर! शेर कहता हूं—

जरा आँखें मिला कर फिर तो कहिए—
हमारे पास तेरा दिल नही ह।

सुनिए साहब।

वह ह मुट्ठी में क्या कहते हो यह क्यों
नहीं ह दिल नहीं है दिल नहीं ह।

आखिरी शेर सुनिए—

अगर दिल ह तो दिल में ह मुहब्बत
मह ब्बत फिर कहाँ जब दिल नहीं ह।

इसी दिल पर दूसरे दो मिसरे सुनिए—

वो हिया से सन्मे उठाए हुए ह
कि हाथों से दिल को दबाए हुए हैं।

सुनिए हुजूर! वो मेरे क्या दिखाएंगे महशर में मुझको—

जो आँखें अभी से चुराए हुए हैं।
चुराए हुए हैं अजी चुराए हुए है

(हँसते हैं।)

मूलचन्द अब यहाँ बैठा नहीं जाता! राय बहादुर साहब! हमें इजाजत दीजिए। (श्याम मोहन से) चलो श्याम!

श्याम (आँखें फाड़कर) श्याम? अच्छा ले जाइए श्याम को। मैं तो राय बहादुर साहब को ग़ज़लें सुनाऊंगा! सुनिए रायबहादुर

साहब ! हमारे मशहूर शायर बिस्मिल इलाहाबादी ने एक गजल कही है—चिराग जलता है। उन्हीं के तरन्नुम में सुनाता हूँ ! मुलाहजा हो—

आह से दिन का दाग जलता है।
यह हवा में चिराग जलता है ॥
खुद ब खुद दिल का दाग़ जलता है।
अरे बे जलाए चिराग जलता है ॥
खानए दिल में दाग जलता है
बन्द घर में चिराग़ जलता है ॥

सुनिए साहब ! दागे दिल काम आया मरने पर।

कब्र में भी चिराग़ जलता है ॥
अरे, गर के घर वो जाने वाले हैं।
रह गुजर में चिराग़ जलता है ॥
उसकी क़ुदरत का वाह ! क्या कहना
आसमां पर चिराग जलता है ॥
मर रहे हैं पतिंगे जल-जल कर
इसी गम में चिराग़ जलता है।

और सुनिए शाम से सुबह तक शबे फुरकत।

साथ मेरे चिराग जलता है।

देखिए मुझे प्यास लगी है। प्यास का चिराग़ भी हमेशा गले में जलता रहता है। एक गिलास पानी !

भ्रज (गंभीरता से) भरो एक गिलास पानी !

भैरव जो सरकार को हुक्म। (प्रस्थान)

मूलचन्द चलो घर चल कर जितना चाहो मैंने कहा, उतना पानी पी लेना। यहाँ क्या तमाशा कर रहे हो ?

श्याम तमाशा ? कैसा तमाशा ?

हमने माना कि बहुत देखे हैं मरने वाले।
आप मरने का हमारे भी तमाशा देखें॥

ग़ौर फरमाइए हुजूर!

हमसे औरों से जमाने में सरोकार नहीं।
तू ही खाए जो तमाशा, वह तमाशा देखें॥

मैं तो कहता हू साहब! कि

आइना सामने रख लीजिए खुल जाय अभी।

जी! खुल जाय अभी ई

आप क्या चीज़ हैं यह आप तमाशा देखें॥

और दिखलाऊँ तमाशा आपको?

आतिशे इश्क़ से दिल खाक हुआ जाता है
घर किसी का जले और आप तमाशा देखें!

(भैरव पानी लेकर आता है।)

श्याम पानी ले आए? (पीते हुए) अब मेरे पीने का तमाशा देखिए! भाई! क्या नाम है तुम्हारा? भैरो? जरा एक गिलास पानी और!

भैरव अबई लो सरकार! (गिलास लेकर जाता है।)

श्याम रायबहादुर साहब के दर्शनों से प्यास बुझती है। पानी तो और पानी है!

ब्रज (श्याम से) अच्छा आप खड़े-खड़े थक गए होंगे। तशरीफ रखिए, पानी आ रहा है।

श्याम (बैठकर) बहुत बहुत शुक्रिया! देखिए रायबहादुर साहब! आप समझें कि ज़िन्दगी का राज़ क्या है। जो हसरतें ज़िन्दगी में पूरी नहीं होतीं वे कभी पूरी नहीं होतीं। (भैरव पानी लेकर आता है, वह श्याम को अजीब तरह से घूरता है।) अच्छा! तुम ले आए पानी? शुक्रिया। (पानी पीते हैं।

पीकर ग्लास देते हुए) मसलन देखिए यही पानी की बात है। जिन्दगी में अगर प्यास नहीं बुझी तो कभी बुझती भी नहीं है। हज़ार बार पानी पियो लेकिन प्यास जो पहले थी वह अब भी है। पानी पानी की प्यास आपका क्या खयाल है रायबहादुर साहब !

राज ठीक है प्यास तो प्यास है।

श्याम क्या बात कही है आपने ! प्यास तो प्यास है। वाह रायबहादुर साहब प्यास तो प्यास है ! मेरी तारीफ कीजिए कि मेरी प्यास सिर्फ पानी की है। और लोगों की प्यासें तरह तरह की होती है। कभी हुस्न की प्यास कभी शराब की प्यास ! शायर कहता है कि

> चूने का रंग और कुछ अंगूर का अरक
> कोई हराम चीज नहीं है शराब में।
> माज़ा जो महरबां है तो पान का जिक्र क्या
> निकलूँगा मकदे से नहा कर शराब में॥

और हज़रत दाग तो कहते हैं कि

> ए शख्स जो बताये मय ऐश को हराम।
> एसे को दो लगाए भिगो कर शराब में॥

(हँसकर) भिगो कर शराब में ! (चित्र की ओर संकेत कर) आप देखते हैं उमर ख़ैयाम को ? इसी शराब के घूंट पर उसने अपनी जिन्दगी के हर लमहे को गिना है। लेकिन मैं ? मैं तो उमर ख़ैयाम के पैरों की धूल भी नहीं ! हाँ धूल भी नहीं ! मुझे तो सिर्फ पानी की प्यास है सिर्फ पानी की। हुस्न और शराब की प्यास सिर पर चढ़ कर बोलती है। सिर पर रायबहादुर साहब ! पर मेरी प्यास तो सिर्फ गले पर चढ़ कर रह जाती है। सिर्फ गले तक ! (हँसते हैं।) देखिए

इधर देखिए (गला दिखलाते हैं ।) हाँ एक गिलास पानी और चाहता हू ।

ब्रज कोई बात नहीं । भरो ! एक गिलास पानी और ।

कामता (बीच ही में) भरो ! तुम कुछ कहना चाहते थे ?

भैरव सरकार ! अगर हुक्म होय तो अरदास करौं । जो प्यास मामूली जल सैं न बुझइ गगा-जल सैं बुझै ।

श्याम (उछलकर) वाह गगा जल ह । तो गंगा जल लाओ ।

भैरव (हाथ जोड़कर) अबो गगा जल इत नइ आ सक सरकार ! मरे ठाकुर जी क सांहीं धरो ह । उतइ चरक पान पडह ।

श्याम मतलब ये कि वहीं चल कर पीना पड़ेगा ?

भैरव हुआ सरकार !

कामता तो तुम्हारे ठाकुर जी कहाँ ह ?

भैरव व आ कमरा में विराजे ह ।

कामता यहाँ नहीं आ सकते ?

भैरव (आँखें फाड़कर) नइ सरकार ! ठाकुर जी दरोगा साहब थोड़ा ह क चाहे जस चल आय । व तो तीन तिरलोक बरमहाड के स्वामी जी हैं । उनई क सेवा में चलो चाहिए । बाबू साहब उतई चल क पीलें तो उनकी प्यास बुझ जह ।

श्याम तुम्हारे कह । का मतलब यह कि म उधर हा चल के पीलूँ तो मरी प्यास बु झ जायगी ? गगा-जल से हमेशा के लिए प्यास बुझ जायगी ? मेरी प्यास बुझ। दो भरव लाल ! म कहीं भी चल सकता हू । मरी प्यास मुझ बहुत परशान करती ह । इजाजत ह रायबहादुर साहब ?

ब्रज बिलकुल ! लकिन आप क्यों तकलीफ करेंगे ?

कामता जान दीजिए न रायबहादुर साहब ! एक बार भरो का बात भी मान लीजिए ।

भरो बहुत हीरा आदमी है ! देखो कितना ऊँचा टीका लगाया है ! मालूम होता है सुबह का सूरज है मेरी जिन्दगी की सुबह का सूरज ! चलो भरव ! तुम्हें एसी एसो गजलें सुनाऊँगा कि तुम मेरे माथे में भी टीका लगा दोगे ! मेरी प्यास जरूर बुझा दो भरो लाल ! रायबहादुर साहब के सामने बार-बार पानी पीने में शर्म भी आती है। शायर कहता है—

नशे से है काम साकी मै से कुछ मतलब नहीं।
तू पिला दे काश अपने हाथ से पानी मुझे॥

हुजूर ! कहता हूँ कि

यों सदा देता है जाहिद आके मैखाने के पास
मैं बहुत प्यासा हूँ पिलवा दे कोई पानी मुझे।

पानी पिला दो भरो लाल !

देखो शुद्ध गंगा-जल पिलाना ! जाने दीजिए रायबहादुर साहब ! बार-बार पानी पीने से इन्हें आपके सामने शर्म आती होगी।

अच्छी बात है ! भरो ! इज्जत के साथ ले जाना।

बहुत इज्जत के साथ सरकार ! (श्याम से) चलिए बाबू साहब ! (प्रसन्न होकर) बखुशी चलेंगे भरो लाल ! वाह ! कितना अच्छा नाम है तुम्हारा ! ऐसा पानी पिलाओ कि कभी प्यास न लगे ! वाह शायर भी क्या कहता है ! (स्वर से)

आए हैं वह खींच कर मक्तल में तेरी आबदार !
सर से ऊँचा अब नजर आने लगा पानी मुझे।

और सुनिए साहब !

याद अब आती नहीं दिल की परेशानी मुझे।
मुस्कुरा कर उसने एसा कर दिया पानी मुझे॥

(गाते गाते प्रस्थान)

(ब्रजकिशोर और मूलचन्द किंकर्तव्यविमूढ़ से बैठे देखते रह जाते हैं।)

कामता (मौन भंगकर) क्या है यह सब मूलचन्द जी! बहुत दुखी हो गए हम यह देखकर।

मूलचन्द (सर पर हाथ रखकर) मैं क्या कहूँ साहब! मेरी तो इज्जत मिट्टी में मिल गई, मैंने कहा!

ब्रज इसमें इज्जत मिट्टी में मिलने की बात तो नहीं है। इसमें आपका कुसूर ही क्या है? श्याम मोहन इतना शिष्ट और सज्जन लड़का! कुछ देर पहले कितनी अच्छी बातें करता था! एकाएक उसे यह क्या हो गया!

मूलचन्द मैं क्या बताऊं रायबहादुर साहब! इसे अभी तक किसी तरह की बीमारी नहीं हुई मैंने कहा। एक दिन इस कमरे में आया, यहाँ की मैंने कहा सफाई करवाता रहा। शाम को लौटा मैंने कहा तो ऐसा ही हाल हो गया! अपनी माँ को मैंने कहा गजलों पर गजल सुनाता रहा।

ब्रज आपने तो अच्छे से अच्छे डाक्टर को दिखलाया होगा?

मूलचन्द रायबहादुर साहब! बड़े-बड़े शहरों के डाक्टर बुलवाए मैंने कहा! इसे दिखलाया तरह-तरह के इलाज किए मैंने कहा। लेकिन ज़रा भी फायदा इसे नहीं हुआ। बाबू कामता प्रसाद इसे जानते हैं मैंने कहा।

कामता जी हाँ मैं बहुत बार डाक्टरों को बुलाकर लाया हूँ।

ब्रज (सोचते हुए) बाबू श्याम मोहन की हालत हमेशा तो ऐसी रहती नहीं। अभी जब आपके साथ आए थे तो कितनी अच्छी बातें करते थे! अचानक उनका दिमाग़ न जाने कैसा हो गया!

मूलचन्द पता नहीं, किस वक्त उसकी तबीयत बिगड़ जाय! बहुत बार

वह इस कमर में श्राया ह मन कहा तब उसको तबीयत नही बिगडी मन कहा म भी समझता था कि पिछली बात खत्म हो गई नहीं तो इस कमर में न आपको ठहराता न यहाँ उसको लकर श्राता मन कहा ।

कौन सी पिछली बात ?

(सम्हलकर) यही यही तबीयत बिगडन को मन कहा । बहुत िनो से इसकी तबीयत खराब नही हुई न कोई चक्कर आया मन कहा ।

मन भी यही सुना था कि बाबू श्याम मोहन को चक्कर आते हैं लकिन आज का यह ढग तो अजीबो-गरीब ह ।

म भा यही समझता या कि चक्कर ही आत ह । इसीलिए मन आपका चक्कर आन की बात लिखी था—लकिन इस चक्कर में तो कोई दूसरा ही चक्कर ह ।

मुझको ्सका बहुत अफसास ह रायबहादुर साहब मन कहा । लकिन आप यह न समझें कि मन आपको धोखा िया । आप चाहें तो शा्ा का रिश्ता ताड सकत ह मन कहा । मुझ कोई शिकायत मन कहा नहीं होगी ।

मैं बहुत हरान हू नाना जी । म रिश्ता ता् तो सकता हूँ लकिन श्याम माहन मझ निहायत पस् ह । म इसे छोडना भा नहीं चाहता और अपनी ल्की की जि्गी भा बरबा् नहीं करना चाहता । म क्या करू कुछ समझ ही में नहीं आता । मै शा्ा पक्का करन क लिए ही यहाँ आया था लकिन यह भी जान लना चाहता था कि यह चक्कर का बीमारी क्या है ? अगर इजाजत हा ता मैं ्स अपन साथ ि्ली के नर्सिग होम में ल जाऊ ।

आप ल जा सकत हैं मैंन कहा । लकिन हमशा तो इस चक्कर

माते नही। चक्कर न आने की हालत में इससे बढकर कोई तन्दुरुस्त लडका नही ह, मन कहा।

ब्रज अच्छा, लाला जी! यह बतलाइए कि इन्हें कभी डायबिटीज या डायबेटिक कोमा तो नही हुआ?

मूलचन्द कभी नही मन कहा—कभी नही! न डायबिटीज और न डायबटिक कोमा! कोमा म तो आदमी बेहोश हो जाता है। उसकी यादाश्त खत्म हो जाती ह मन कहा।

कामता ठीक ह आपन राहुल सांकृत्यायन जी का नाम सुना होगा। डायबिटीज की आखिरी स्टेज में उनकी याददाश्त तो बिल्कुल ही खत्म हो गई थी! उन्हें राष्ट्रीय सरकार न पद्म भूषण का उपाधि दी तो उन्हें इसका कुछ एहसास ही नही हुआ! व रूस ने जाए गए—लकिन वहा के इलाज से भी कोई फायदा नही हुआ। उनकी याददाश्त जो एक बार खत्म हुई तो फिर कभी ठीक ढग से लौटी भी नही।

ब्रज तो ऐसा तो श्याम मोहन जी के साथ कुछ नहीं ह। उन्हें तो न जान कितन तरह की गजलें याद ह! हर बात पर एक नई ग़ज़ल सुनाते ह। मन डायबिटीज की बात इसलिए कही कि उन्हें प्यास बहुत लगती ह।

मूलचन्द हमेशा तो नहीं लगती मन कहा। ऐसे ही मौका पर मने कहा—वो पानी पीता ह।

ब्रज माफ कीजिए—कभी ऐपीलप्सी यानी मिरगी तो नही आई?

मूलचन्द कभी नही मन कहा रायबहादुर साहब! मिरगी में तो आदमी चक्कर खाकर गिर पडता ह। उसके मुँह से फेन निकलने लगता ह। वह बेहोश हो जाता ह—मन कहा।

कामता इनको तो बस नशे-जसी हालत हो जाती ह। ऐसी कि कोई शराब पीकर ग़ज़लें सुनाना शुरू कर द!

व्रज बड़ी चुभती हुई गज़लें सुनाते हं—तबीयत होता ह कि उनके पढन की दा‍ दू नकिन दिल म अजीब उलझन होती ह।
कहा श्याम मो न बाबू की पहली बातें और कहाँ बाद की!
ममता उनकी ता शख्सियत ही बदल जाती ह।
नन्द जा हाँ बिलकुल मैंन कहा। अब म क्या बतलाऊ! मैंन कहा। घर के लोग कुछ और ही समझत ह—मन कहा और म भी वसा ही समझने लगा हू।
व्रज वह क्या नाला जी?
नन्द आप मुझस कहलाना ही चाहते हं? मन कहा—अच्छा तो कहता हू। सुनिए! रायबहादुर साहब! श्याम मोहन के मामा इसे बहुत चाहते थे। व इसा कमर में मरे मन कहा और इस घर से उन्हें इतना मोह था कि वे यह घर नही छोड सके।
व्रज यानी उनकी आत्मा यहीं ह वे भूत बनकर यहाँ रह रहे हं?
नन्द जी हाँ मैंन कहा और वही भूत कभी-कभी श्याम मोहन के सिर पर आ जाता ह।
व्रज देखिए नाना जा! मै भूत-वगैरह में कोई विश्वास नही करता। बाबू कामता प्रसाद जी भी इसी तरह की कुछ बातें कह रह थ। यह सब अन्ध विश्वास ह।
नन्द हा सकता ह रायबहादुर साहब! मन कहा। लकिन कुछ बातें एसी ह कि विश्वास करना पडता ह मन कहा।
व्रज व क्या?
नन्द व एसी हैं मैंन कहा कि श्याम मोहन क मामा जी बहुत ग़ज़लें गात थ। वहा आप श्याम मोहन स सुनत हैं।
ममता कहत हैं कि मामा जी को हज़ारों तरह की ग़ज़लें याद थीं। व कभी कभी ग़ज़लें लिखत भा थ।
व्रज मुमकिन ह बाबू श्याम मोहन को मामा जी की ग़ज़लें याद हों।

मूलचन्द रायबहादुर साहब ! श्याम मोहन कभी मामा जी के साथ रहा ही नहीं मैंने कहा। जब मामा जी मरे वह बहुत छोटा था। और मन कहा, श्याम मोहन कभी ग़ज़लें पसन्द भी नहीं करता।

अज कुछ समझ में नहीं आता लाला जी !

मूलचन्द एक बात और है रायबहादुर साहब ! घर के लोग कहते हैं, मैंने कहा, कि जब मामा जी का हार्टफेल हुआ तब वे बहुत प्यासे थे मैंने कहा। यही वजह है कि जब श्याम मोहन पर मामा जी का भूत सवार होता है तो वह पानी बहुत पीता है।

कामता आपने लाला जी ! किसी ओझा को नहीं दिखलाया !

मूलचन्द ओझा खुद इस भूत से डर के भाग गया ! मैंने कहा—ओझा भी ग़ज़लें गाने लगा ! उसकी हालत और खराब हो गई, मैंने कहा। वो तो नाचने भी लगा मैंने कहा !

कामता मामा जी बहुत जबरदस्त मालूम होते हैं ! ओझा तक से ग़ज़लें पढ़वाते हैं।

अज ये सब बातें मेरी समझ में नहीं आतीं !

(इसी समय नेपथ्य से एक हलकी सीटी की आवाज सुनाई देती है जो क्रमशः तेज होती जाती है। बिजली की बत्ती दो-तीन बार धीमी और तेज होती है। बाबू मूलचन्द और कामता प्रसाद घबराकर नेपथ्य की ओर देखते हैं। दोनों अपनी कुर्सी से उठ खड़े होते हैं। रायबहादुर साहब बिजली के बल्ब की ओर देखने लगते हैं। फिर एक क्षण के लिए स्टेज पर अंधकार हो जाता है। प्रकाश होने पर मूलचन्द और कामता प्रसाद जमीन पर निश्चिलता के साथ गिरे हुए नजर आते हैं। वे दोनों उठने की चेष्टा करते हैं।)

अज (खड़े होकर) आप लोग जमीन पर कैसे गिर पड़े ?

वन्द रायबहादुर साहब ! आपको तो मन कहा, कुछ नहीं हुआ ?
व्रज नहीं—क्या क्या बात ह ?
न्द (उठते हुए) मुझे मालूम हुआ रायबहादुर साहब ! मैंने कहा, जसे कोई मेरी कमर पकडकर घसीट रहा ह। मैं समझा कामता प्रसाद जी तो नहीं हं ?
ता (बठते हुए) मैं आपको क्यो घसीटता ! मैं तो समझा कि आप मेरे कान पकड रहे ह। मैंन कोई कुसूर तो किया नही।
व्रज ये बातें क्या हो रही ह !

(इसी समय नेपथ्य से धीरे धीरे श्याम मोहन प्रवश करते हैं। उनके मुंह पर हरा रुमाल बधा हुआ है। कामता प्रसाद मूलचन्द और व्रजकिशोर अवाक होकर देखते हैं। सब को देखत ही श्याम मोहन शीघ्रता से रुमाल की गाँठ खोलकर अपने मुह से रुमाल हटा लेता है।)

न्द (आश्चय स) ये कसो बात मैंन कहा ?
व्रज (हतप्रभ हो) क्या बात ह ?
ता भरो का इलाज मालूम होता ह।
ाम क्षमा कीजिए रायबहादुर साहब ! मरे किसी व्यवहार से आपको कष्ट हुआ हो ! (क्षमा की मुद्रा में हाथ जोड़ते हैं।)
न अब आपकी तबीयत कैसी ह ?
ाम मैं ठीक हूँ। मैं स्वय नहीं जानता कि आप लोगो को यहाँ बठा हुआ छोड कर मैं क्या भीतर चला गया था !
न आप तो पानी पीन के लिए गए हुए थ—गंगा-जल !
ाम क्षमा शमा जन ! मझ तो प्यास नहीं लगी थी। और शिष्टता क अनुसार तो पहल मुझे आप लोगों से पानी क लिए पूछना चाहिए। (अपना पट टटोलत हुए) मुझे आश्चय ह कि मैंन पानी पिया नहीं और पट भरा भरा मालूम देता ह।

(अपने आप) और मेरे जूते कहाँ हैं ? (पर देखते हैं।)

कामता आपके जूते यहाँ ह ! आपके परो में जोर से "द हुआ था।

श्याम दद ? मुझे तो किसी तरह का दद नही हुआ ! और पर में तो कभी कोई दद हुआ ही नही। और एसा दद कि जूते उतारने पडे ?

[अपनी कुर्सी के पास आकर जूते पहनते हैं।]

ब्रज (सोचते हुए) द" तो हुआ था।

श्याम क्षमा करें रायबहादुर साहब ! आपकी बात कैसे काटूँ, लकिन इस बीच में कोई भ्रम अवश्य हुआ ह और आश्चय तो मुझे इसी बात का ह कि मरे द्वारा ही यह भ्रम हुआ ! मेरी समझ में कुछ नही आता। य" ष्ट न हो तो समझाए कि मुझसे कौन सी भूल हुई ?

मूलच"द भरे भूल करनवाला तो कोई और ह मैंने कहा ! और ये भूल रायबहादुर साहब के सामने इसी वक्त, मन कहा, करना था ?

श्याम तो यह भूल करनेवाला कौन ह ?

ब्रज (कुछ स्वस्थ होकर) भरो कहाँ ह ? (पुकारकर) भरो !

(नेपथ्य से) आ गया सरकार !

ब्रज (श्याम से) आपके जूते भरो ने उतारे थे !

श्याम भरे उसन मर पर क्या छुए ? अच्छा ! मरा सिर कुछ भारी मालूम होता ह आज्ञा हो तो म बाथरूम में जाकर अपना मुँह धो आऊँ।

ब्रज हाँ, यहीं के बाथरूम में मुह धो लीजिए।

मूलचन्द नहीं श्याम ! यहाँ फिर से जान की मन कहा जरूरत नहीं ह। थोडा और ठह क अपने बाथरूम में अच्छी तरह सिर धो लेना।

याम (मुस्कराकर) अच्छी बात है अपने ही बाथरूम से होकर अभी आता हूं। (हाथ जोडकर) नमस्कार करता हूँ। (प्रस्थान)

ब्रज श्याम मोहन बाबू फिर पहले जैसे सुशील और सज्जन हो गए ! गजल पढने वाले श्याम मोहन और इन श्याम मोहन में जमीन आसमान का अन्तर है !

चन्द बस मेरे बेटे को कभी कभी ऐसा ही हो जाता है मैंने कहा !

ममता देखिए भैरव का इस बारे में क्या कहना है ! (पुकारकर) भैरव लाल !

(समीप ही नेपथ्य से) आ गयो सरकार ! (भैरव का प्रवेश भैरव बड़े उत्साह से आता है। उसके हाथ में एक गंगाजली है जो लोटे की तरह है ! उसका मुंह घुमावदार ढक्कन से बन्द है ! वह गंगाजली का कड़ा हाथ में लिए हुए सम्हालकर पकड़े हुए है। उसके मुख पर अभिमान की मुद्रा है।)

ब्रज तुम्हें आने में देर क्या लगी ?

भैरव सरकार ! माफ़ी चाहत हों। धरती पै चक्कर खींच कैं एक मंत्र पढ़ रहो थो ! अधूरो मंत्र नई छोड़ो जाय ! हमारे गुरु ने हमें ऐसई सिखाओ थो ! माफ़ी दई जाय !

ममता अच्छा ! और श्याम मोहन बाबू के मुंह पर हरा रूमाल क्यों बंधा हुआ था ! वह तुमने बंधा था ?

भैरव सरकार ! छिमा चाहत हों ! मामाजी को भूत बड़ो बेंमड़ हतो ! जासे रूमाल बांधनो पड़ो !

ब्रज भूत ? यह क्या बदतमीजी थी !

भैरव जा बदतमाजी नाही सरकार ! भूत प्रेत के मामला में बद

हमीजी मदतमीजी नई देखी जाय ऐसे हमारे गुरु जी कहत हते। भूत प्रेत जो चाहें, सो कर। सो हम सोइ जो चाहें सो कर। भत प्रेत तो

ब्रज भूत प्रेत? फिर भूत प्रेत?

भैरव सरकार! आपस नई कहूं। आप कौन भूत प्रेत मानत हैं। कामता परसाद जी से आ केह रहो हों।

मूलचन्द मुझसे भी तो कहो भाई। भर बेट की बात मत कहा।

भैरव लाला जी! श्याम बाबू के मामा जी बडे चालाक हते। मना हमसे पार ने पा सके। अपनी सी भौत करी उनने मनो हमने सोई अपनी कला दिखाई। नरसिंह कवच पढ़के मन मामाजी को भूत पकल्लयो, बाह् बंद कल्लयो।

ब्रज बन्द कर लिया?

भैरव हाँ, सरकार! बडी चालाकी सें कैद करो! (कामता प्रसाद से) बताओ, कामता परसाद जी! मामाजी कहाँ हैं! (सिर हिलाता है।)

कामता मैं क्या जानूँ, कहाँ हैं।

भैरव मामा जी जा गगाजली में हैं। (गगाजली हाथ से ऊपर उठाकर) जा गगाजली में मामाजी बैठे हैं।

कामता गगाजली में?

मूलचन्द अरे इसी गगाजली में? मत कहा!

भैरव हाँ सरकार! जई गगाजली में। मन हजारा भूता सा यें पार सें ओ पार कर दओ! मामाजी कहाँ के हुसियार हते। उन्हें जई गगाजली में बिठार दओ!

ब्रज (आश्चर्य से) क्या मतलब?

भैरव सरकार! आप नाराज न होंय (गगाजली को टेबल पर रखकर) धीर-जतन से सुनें, तो बतायें मैं।

कामता हाँ हाँ बतलाओ ।

मूलचन्द भया ! बताओ म भी सुनना चाहता हूँ मने कहा ।

भैरव स्याम मोहन भया जू न तीन दार मो सा पानी मगाओ और म जान कित्ती बार पानी नान परतो ! सो मैन सोच लई क स्याम माहन भया जू की मूड प मामाजी आए ह और व भौत प्यासे हैं !

मूलचन्द हाँ हाँ प्याम तो बहुत लगती थी मन कहा ।

भैरव सो मन गगाजल की बात आ कह दई । मोरे पास जा घुमावन्दार ढक्कन की गगाजली ह सो जई की खबर मोह आ गई !

कामता यह तो तुम अपन साय लाए थे !

भैरव मारे ठाकुर जू क सग जई तो चलत ह । मुहड तक गजाजल सें भरी भई ह ।

ब्रज ता तो क्या हुआ !

भैरव मैं स्याम मोहन भया जू खा अपन सग ल गओ ! पहल तो वे भौत गजलें अजलें गाउन ते जब मारे कमरा में आए तौ मैंन नरसिग जू को मत्र पढ कें उन प तीन फूकें मारी। जस उनक मन्ड प फूकें लगीं व चुप मार गए । बडी-बडी आँखन में मरा तरफ घूरन लग। सबरी गजलें भूल गए !

मूलचन्द फिर क्या हुआ भया ! मैंन कहा ! तुम तो बड गुनिया मालूम पडत हो मैंन कहा ।

भैरव सुनत जाओ नाना जो ! फिर मैंन हनुमान-चालीसा मनइ मन म पढ उनकी आँखा स आँखें मिलाइ और कही—प्यास लगा ह मामाजा ! पाना पा लो । उनन कहा—गगा-जल दिना दा भाई ! मैंन कहा सरकार ! गगाजली को ढक्कन खोला और उत्तै चुपचाप पाना पी लो। जसई व पानी पीन को बढ कै

मनें तुरतई स्याम मोहन जू के खीसा में जो हरीरो उरमाल हतो बाइ निकार क उनके मुँहडे पै कस दश ! मंत्र पढ़कें !

अज यह क्या बदतमीजी थी !

भैरव बततमीजी नइ, सरकार ! भूता प आपको बिसवास नइ हाँ, जई सें आप बततमीजी मा कत ह । मन स्याममोहन जू के महड प उरमाल नइ बाँधो मामाजो के मुहड प बाँधो । वा बखत स्याम मोहन जू कौन अपन आपे म हत !

मूलचन्द तो मुह पर रुमाल बाँधने से क्या हुआ ? मन कहा !

भैरव अब जई तौ सोचवे की बात ह । मामाजो न उरमाल से छुटब की कुरम-मुन्न भौत करी मना मन तौ मंत्र पढकें कस कें उरमाल बाँधो हतो ! बड जोर स साँस लेंकें मूड हलाउन लग—जई सें माटो सी सुनाई परी हती और उजियारो धीमो पड गयो हतो ।

अज हाँ लाइट फिलकर तो जरूर हुआ था ! कुछ दर को अधेरा भी हो गया था !

मूलचन्द उसी वक्त किसी ने मुझे कमर पकडके घसीटा था मन कहा । शायद मामाजी रुमाल खोलने में मेरी मदद चाहते होंगे, मैंन कहा !

कामता और मर कान क्या पकडे गए साहब ?

अज (हसकर) क्या किसी पुरान मास्टर साहब की याद आ गइ, आपको ? अरे रुमाल कान को ढककर बाँधा गया होगा तो उसे छुडाने के लिए आपके कान का इशारा किया होगा, मामा जी के भूत न ।

भैरव सरकार ! मामा जी बडी दार तक मूड हलाउत रहे, मनों उन्हें बड जोर की प्यास लगा हती । जब उनने देख लई कि व स्याम मोहन जू के म्हौं से पानी नई पी सकें तो घबडान !

वे स्याम मोहन जू के मूँड प सें उतरे गगाजल तो उहें पीन हतौ सो ब गगाजली में खिसके।

कामता तुमन यह कसे जाना कि मामा जी श्याम मोहन जी के सिर से उतर कर गगाजली में आ गए हं ?

भैरव अब जा तो सरकार ! मत्र विद्या की बात ह जा कसे बताए— मना एक तो स्याम मोहन जी की आँखें असली रग प आउन लगी और दूसर गगाजली क ऊपर हलको सो धुआँ दिखानो। जसेई बो धुआँ गगाजल की सतह प आओ मैं जान गओ क मामा जी म्हों के बिना जल तो नई पी सक मना गगाजल सें सीतल आ हो रह हैं—मन तुरतई गगाजली को ढक्ना बद करकें कस दओ। मामा जो भीतर और स्याम मोहन जू बाहर !

मूलचन्द शाबास भरा भया ! तुम बड गुनिया ही नहीं बड होशियार भी हो ! मन कहा।

कामता भरा न सचमच बहुत बहादुरी का काम किया !

भैरव सरकार (ब्रजकिशोर को सकेत कर) के चरना को परताप ह। म तो चाकर हों। मना ढक्ना एसो कसकें बन्द करो ह क अब मामाजी जामें स निकर नई सकें। (गगाजली उठा कर) ज दखों जामें मामा जी बन्द ह। (मूलचन्द से) सरकार ! छिमा दई जाय !

मूलचन्द अर वाह ! तुमन इतना होशियारी का काम किया तुम्हें तो मैं बहुत बडा इनाम दूगा मन कहा।

भैरव (हाथ जोडकर) सरकार ! इन बातों में इनाम नई लओ जाय ! बस सरकार की और मालकी किरपा बनी रह।

ब्रज ता तुम्हारा इस गगाजली में मामा जी का भूत ह ? देखें जरा !

(भैरों ब्रजकिशोर के हाथ म गगाजली देता है।)

भैरव सरकार! ढकना न खोलियो, नई तो फिर मामा जी पकड़ में ने आहें।

ब्रज (जोर से हँसकर) अच्छा ये रही गंगाजली! इसमें तुम्हारे मामा जी हैं। (तिरछा सीधा करके देखते हैं।)

भैरव (हाथ से मना करते हुए) नइ सरकार! गंगाजली टेढ़ी ने करौ। मामा जी सीधे बैठे हैं। टेढ़ करब स उलट जहैं। उन्हें तकलीफ हुइ है।

(सब हँसते हैं।)

ब्रज (गंगाजली सीधी कर के) अच्छा, अच्छा सीधा ही रखेंगे। तुम्हारे मामा जी को कोई तकलीफ न हो।

ममता भैरों तो बहुत तजुरबकार मालूम होता है। गंगाजली में मामा जी के उतरते ही श्याम मोहन जी बिलकुल पहले जैसे हो गए।

मूलचन्द सचमुच! भैरों लाल! तुम तो बड़े गुनिया निकले। तुमने मामा जी को बड़ी होशियारी स पकड़ा। श्याम मोहन तो बिलकुल ही ठीक हो गए। अपने हाथ से जूते पहन कर मुँह धोने चल गए।

ब्रज हाँ लाला जी! श्याम मोहन जी को अच्छा देख कर मुझे भैरव की बात पर विश्वास करना ही होता है। (भैरव से) अच्छा भैरव! इस गंगाजली का क्या होगा?

भैरव सरकार! (गंगाजली हाथ में लेकर) जा गंगाजली में मामा जी हैं। उनकी मुक्ति अभी चाहिए। तो फिर अब जा गंगाजली खा गंगा जी में विसर्जन करो चाहिए। खास संगम की बीच धार में। मामा जी त्यों जब तक गंगाजल पाव की हौंस रहै गंगाजली में रहें। जब पानी के जोर से गंगाजली को ढकना खुलहै तब संगम के भीतर रहन लगहैं। गंगा जी

उन्हें तार देंहें। एक कवराज कहत ह—

जम की सब त्रास विनास करी मुख ते निज नाम उचारन में।
गिरधारनजू कितन विरचे गिरधारन धारन धारन में॥

मूलचन्द अरे, वाह भरो लाल! मने कहा, कि तुम तो कविता भी जानते हो।

कामता हमारा भरो लाल क्या नहीं जानता?

अज भरव लाल सचमुच काम का आदमी ह।

भैरव आपका चरना को धूरा हा सरकार!

अज अच्छा तो ल जाओ इस गगाजली को गगा जी की धार में।

भैरव जसी आपकी अना। (गगाजली को देखकर) चलो मामा जी! तुम्हें गगा जी के दरसन करा दऊ! भनो तुमाए साथ हमाई गगाजनी सोई चली!

मूलचन्द अर भरो लाल! तुमन क्या काम किया ह मन कहा, कि तुम्हें सोन की गगाजली दू।

कामता असली नही चौन्ह करट की।

भैरव जा आपन का कही? चौन्ह करट? जा का कहाउत ह? जौन लोग सोन की कम कस कॅ रट नगाउत ह उनई ह दो करट करट। माह कछू नई चाउत।

मूलचन्द अर तुम्हारा तो मैं पूजा करूगा भरो मैंन कहा।

भैरव पूजा तो सरकार (अजकिशोर को लक्ष्यकर) की करो चाहिए।

मूलचन्द अच्छा बात ह। सरकार की पूजा किसी देवता की पूजा से कम न होगा मैंन कहा।

भैरव अच्छा बात ह तो मैं चलो। चलो मामा जी! (गगाजली को ऊपर उठा कर जाता है।) ज बजरंग बली!

(प्रस्थान)

मूलचन्द आपके भरो लाल ने बड़ा काम किया, रायबहादुर साहब !
श्याम मोहन तो बिलकुल अच्छे हो गए ।
कामता भरो का कहना बिलकुल ठीक निकला ।
मूलचन्द अब आप कुछ दिन मन कहा रायबहादुर साहब ! यहीं रहिए ।

(श्याम मोहन का प्रवेश)

श्याम क्षमा कीजिए मुझे कुछ देर लग गई ।
ब्रज कोई बात नहीं अब तो आपकी तबीयत बिलकुल ठीक है ?
श्याम जी हाँ बिलकुल ठीक । न जाने क्यों सिर कुछ भारी भारी मालूम होता था । सिर धो लिया तो अब बिलकुल ठीक हूँ ।
मूलचन्द श्याम मोहन ! मैंने रायबहादुर साहब से बिनती की है मैंने कहा कि वे कुछ दिन यहाँ और ठहरें ।
श्याम इससे बढ़कर प्रसन्नता की क्या बात हो सकती है !
ब्रज अच्छी बात है तो इसी बात पर आप कोई ग़ज़ल अच्छी-सी ग़ज़ल सुना दीजिए ।
श्याम ग़ज़ल ? मैंने तो आज तक कोई ग़ज़ल गाई नहीं । ग़ज़ल जानता ही नहीं हूँ । मुझे पसन्द भी नहीं है । ग़ज़लों की अपेक्षा तो मुझे शास्त्रीय संगीत में अधिक रुचि है ।
ब्रज हाँ (समझकर सिर हिलाते हुए) मुझे खुशी है कि आप शास्त्रीय संगीत में रुचि रखते हैं । अच्छा मैं अपने कारिन्दे मोहनलाल से आपको शास्त्रीय संगीत सुनवाऊँगा । (पुकार कर) मोहनलाल !

(मोहनलाल का प्रवेश)

मोहन आज्ञा सरकार !
श्याम ये मोहनलाल जी क्या बहुत अच्छा गाते हैं ?
ब्रज हाँ अगर हारमोनियम का स्वर खराब भी हो तो उसी खराब स्वर से खुद भी गा लेते हैं । (मोहनलाल से) तुम हारमोनियम

पात्र

सेठ अमोलक चद
बैजनाथ
रामधनी
श्यामकिशोर
लीला
ताँगावाला

[सेठ अमोलक चन्द के बगल का एक सजा हुआ कमरा। बैजनाथ रामधनी से बात कर रहे हैं। नेपथ्य में मुर्गे की आवाज और उसके बाद बिल्ली की आवाज।]

बैजनाथ (रामधनी से मुँह में पान दबाकर जिस स्वर से बोला जाता है उस स्वर से) ह ह ह सेठ जी का मकान भी एक मुसीबत है ! मुर्गे को दाना दो, कुत्ते के लिए बिस्कुट का इन्तजाम करो और बिल्ली के लिये हरी का दूध ! जितना घर के दस आदमियों के इन्तजाम में मेहनत करनी पड़ती है उतनी सिर्फ इन जानवरों की हिफाजत के लिये चाहिए समझे न रामधनी ! सेठ जी तो महीनों के लिये कलकत्ते क्या चले गये, ये जानवर हमारे गिरनेटर बना गये। इनको खिलाओ, पिलाओ और खुशामद करो !

रामधनी ए मुनीम जी ! ऊ कौनो बाबू आव का रहें ? जिनकर खातिरदारी हिंया हुइ गवा है। सेठ जी भी तो उनकर नाम लेते रहें। भला का नाम है उनका (सोचकर) हाँ श्यामकिसोर। ऊ हिया रहे के बदे आवका रहें ऊ नहीं आय का ?

बैजनाथ चिट्ठी तो छोड़ गये थे, लेकिन ग्यारह बज रहे हैं और उनका पता ही नहीं है। जाने कहाँ रास्ता भूल गये ! कौन इस महल के कंगाल में आकर रहेगा रामधनी !

रामधनी (बाहर देखकर) ऊ कौनो बाबू आय रहे हैं हियाँ। साथ में मेहू जी भी दिखाय रहा है।

बैजनाथ हाँ ! ठीक है, वही तो है। सामान भी उतर रहा है। वही हैं, वही हैं वही हैं। देखो रामधनी जरा हसन का कोशिश करो। (खुद हँसता है) हा हा हा हा !

कि उन्होंने मर लिए अपने बगले में जगह खाली कर दी।, ट

लीला सचमुच ! आपके सेठ जी बड उदार सज्जन ह। नहीं तो आजकल कौन किसको पूछता ह !

बैजनाथ *नहीं श्रीमती जी ! सेठ जी न सारा बगला आपके लिए दिया ह। आप जसे चाहें इसमें रहें। हाँ, कुछ थोडी सी तकलीफ* क्या रामधनी ! सब सामान रख दिया ? सामान मेज़ पर रख दिया ह ना ? अरे हाँ हम लोगा का सामान जमीन पर रहता ह तो बड आदमियो का सामान ऊची जगह पर रहना ठीक ह।

श्याम किशोर क्या बात कहते हैं मुनीम जी ! हाँ आप कोई तकलीफ की बात कर रह थे। इस मकान में मुझ कौन तकलीफ होगी ?

बैजनाथ कोई खास बात नही। सठ जी सब अपन हाथ से करत ही थ आप भी कर ही देंग। तकलीफ कसी ! बात यह ह कि सेठ जी जरा शौक़ीन तबियत के ह आप भी हाग।

श्याम किशोर म सीधा सादा आदमी हूँ मुझ क्या शौक़ ह ?

लाला यह शौक किस बात का ह मैं जान सकती हू ?

बैजनाथ घर यहो बड आदमी ह एक जनी भी ह !

लीला जनी ! यह जनी कौन ह, कोई ऐंग्लो इन्डियन लडकी ह ?

बैजनाथ (हँसकर) अर साहब ! ऐंग्लो-इन्डियन लडकी कहाँ ? और सेठ साहब तो सीध सादे आदमी ह यह जनी उनकी क्या नाम ह ? अलसेशियन कुतिया ह। लकिन साहब क्या ग़ज़ब की कुतिया ह ! बडी-बडी औरतो का मात कर देती ह। सेठ साहब क परों क पास एस बठी रहती ह जसे जनम-जनम की सगिनि हो ! और एसी सीधी सादी कि आप चाहें ता उसका तकिया बना क सो जाय। बस उसके लिए दूध और बिस्कुट का इतजाम करना ह, भो वह आप कर ही देंग।

श्याम किशोर हाँ हाँ ! इसमें क्या बात है। दूध बिस्कुट घर में आयगा ही तो थोड़ा उस भी दे दिया जायगा।

बैजनाथ वाह वाह ! क्या कहना है। आखिर आप उनके मित्र ठहरे ! उनका ख्याल आपको न होगा, तो किसको होगा। (हँसता है।)

श्याम किशोर ठीक है ! ठीक है ! कोई बात नहीं।

बैजनाथ और साहब ! एक बड़ी प्यारी पूसी भी है। आहा हा ! क्या कहना है उसका ! बिल्कुल दूध में धोई है ! बिल्कुल सफेद ! जब मीठे स्वर में म्याऊँ करती है तो घरवाली का मैं आऊ कहना भी मात हो जाता है ! उसके लिए भी कोई यहाँ एक पाव भर दूध का इन्तज़ाम सुबह और शाम हो जाय।

लीला अरे, आजकल दूध देखने को तो मिलता नहीं। आदमियों को दूध नसीब नहीं होता तो इनके लिए कहाँ से आयेगा ?

बैजनाथ अजी आप फिकर न करें। ग्वाला दे जायगा। महीने के आखिर में, बाबू साहब उसका बिल चुकता कर देंगे।

श्याम किशोर हूँ ! खैर, कोई बात नहीं। इतने बड़े बंगले में रहने का एवज़ में छोटा-मोटा खर्च क्या है ?

लीला इन कुत्ते बिल्लियों के अलावा और भी कोई शौक है, आपके सेठ जी को।

बैजनाथ अजी, साहब ! हमारे सेठ जी को एक शौक है ! लेकिन अपने शौक की चीजें बहुत सी साथ ले गये हैं। इन्हें क्या ले जाते ! हाँ साहब ! आपको अंडों से तो परहेज़ नहीं है ?

श्याम किशोर मुझे ! मुझे क्या परहेज़ होगा, मैं तो सभी कुछ खाता हूँ (लीला की ओर संकेत कर) यह ज़रूर कुछ छुआछूत मानती हैं।

बैजनाथ अरे तो इनके पूजाघर में मुर्गियां थोड़े ही जायेंगी। साहब! सेठ जी के इस बगीचे में बीस मुर्गे मुर्गियां हैं। क्या किसम किसम की मुर्गियां हैं! सेठ जी ने इकट्ठी की हैं कि देखते ही बनता है! और हर रोज ऐसे अंडे देती हैं कि मालूम हो कि विलायती रसगुल्ले हैं।

लीला विलायती रसगुल्ले?

बैजनाथ हां और क्या बिल्कुल जैसे मशीन के बने हुए हैं। ये बड़े बड़े! (हाथ से बतलाता है।) इसीलिए सेठ जी साहब इन मुर्गियों को इतना प्यार करते हैं कि अपने हाथ से उन्हें दाना चुगाते हैं और साबुन से उनके पंख साफ करते हैं।

लीला (श्याम किशोर से) कहिए आप उन्हें हाथ से दाना चुगायेंगे और साबुन से उनके पंख साफ करेंगे?

बैजनाथ अरे श्रीमती जी! अगर आप उनको देखिएगा तो अपने हाथ से दाना चुगाइएगा। और साहब! क्या खूबसूरत शेरा है!

श्याम किशोर शेरा! यह शेरा कौन है?

लीला क्या सरकस का भी शौक है सेठ जी को।

बैजनाथ नहीं साहब! क्या खूबसूरत मुर्गा है! अगर वह न बोले तो सूरज की मजाल है कि निकल आए! गर्दन उठाकर ऐसा बोलता है कि किसी कालेज का प्रोफेसर हो।

श्याम किशोर (मुस्कराकर) कितना दाना लगता है इन प्रोफेसरों को।

बैजनाथ यही कोई दो-ढाई सेर! इससे ज्यादा क्या लगेगा! कोई ज्यादा खर्च नहीं है बड़े आदमियों के तो आगे-पीछे खर्च लगे ही रहते हैं साहब! यह तो शौक है शौक।

श्याम किशोर इस तरह का शौक तो मुझे रहा नहीं। (फीकी हंसी।) मुझे क्या पता था कि सेठ अमीरचन्द अब इतनी शौकीन तबीयत के हो गये हैं!

लीला यह शौक आपके ढाई सौ रुपयों में पूरे हो जायेंगे ? इन थोड़े से रुपयों में किस किसे खिलाइयेगा ?

बैजनाथ अरे श्रीमती जी ! आप भी क्या कहती ह ! बाबू साहब के हाथ में बरकत ह । यह तो अपने साथ पचासों आदमियों का पेट पाल सकते हैं। (हँसता है) और यह रामधनी ह ह हैं ह ! यह तो आपसे बड़ी आशा लगाए ह । यह कहां रहेगा ? अरे आपके ही चरनों में पड़ा रहेगा । ऐसा काम करने वाला अगर और कहीं होता तो अपनी खिदमत के सौ रुपये लेता, लेकिन बाबू साहब ! सेठ जी के साथ रहते रहते हीरा बन गया ह, हीरा । सिर्फ़ पचास रुपये और खाने-कपड़े पर अपनी जिन्दगी काट रहा ह । आपसे कुछ ज्यादा नहीं लेगा । इतने रुपयों में वह आपके चरनों में अपनी जिन्दगी काट लेगा । (हंसकर) अच्छा ! अब तो मुझे आज्ञा दीजिए । म चलूँ । सेठ जी का हुकुम था कि आपको यहीं ठहरा देना, कोई तकलीफ़ न होने पावे । जिस चीज की जरूरत हो, आप मुझसे कह दीजियेगा । यहां पड़ोस में ही रहता हू । रामधनी जानता ह । यह सँभालिए चाबियों का गुच्छा । रामधनी ! जरा जाके पानी गरम कर । तूने बाबू साहब का बिस्तर लगा दिया ह कि नहीं ?

रामधनी हाँ हजूर ! सेठ जी के पलंग प बाबू साहब का बिस्तर लगाय दिहेन हई और पानी गरम होइके धर द दीन हइ ।

बैजनाथ वाह ! वाह ! क्या कहना ह रामधनी ! तू किस स्कूल में पढ़ा था र ! किसने सिखलाया था तुझे यह सब ? बड़ा होशियार है । देखो ! इसी तरह काम किये जाना तनखाह के साथ बख़सीस भी मिलेगी साहब से । बड़े दानदयालु हैं ! जरा बहू जी को भी खुश रखना । अच्छा ज राम जी की बाबू साहब !

जै राम जी की, बहू जी ! यह चाबियों का गुच्छा सँभालिए (मेज पर चाबियों के रखने की आवाज) ज राम जी !

(प्रस्थान)

लीला यह खूब रही। यहाँ आके अच्छी आफत गल पड़ी। कुत्ते को बिस्कुट खिलाओ बिल्ली को दूध पिलाओ। मुर्गे-मुर्गियों को दाना चुगाओ।

श्याम किशोर सचमच अजीब आफत ह ! म क्या जानता था कि सेठ जी इतन शौकीन हो गये ह।

लीला अजी ! अभी क्या हुआ ह। आग देखिए धीरे धीरे सेठ जी के कितन शौकों का आपको पता चलेगा।

श्याम किशोर इतन शौक की चीजों से ही मुसीबत हो रही ह। और बातों का पता चलगा तो न जान क्या होगा।

लीला (व्यंग्य से) आपके मित्र के ही तो शौक ह। साथ-साथ खले ह पढ़ ह गालियाँ खाई ह और न जान क्या-क्या किया ह ! अब निभाइय आप ही।

श्याम मैं क्या निबाह सकूंगा ! इससे अच्छा तो यही था कि हम लोग बीस-पच्चीस रुपय क मकान में रहते खुद ही खान-पीन की चिन्ता करत। यहाँ तो इन अजायब घर की चीजों को खिलान पिलान में कहीं अपन खाने-पीने की याद ही न भूल जाय।

(नेपथ्य मे चीनी क बतनों के गिरने और टूटने की आवाज)

श्याम किशोर यह क्या हुआ ! देखो जरा अन्दर जाके (लीला तेजी से अन्दर जाती है।) अजीब परेशानी है ! आते देर नहीं हुई कि चीजों का टूटना-फूटना शुरू हो गया ! अच्छे है सेठ जी ! कुत्त बिल्ली मुर्गियाँ और न जान क्या-क्या ! पहल इनको

खिलाओ, तब खाओ। रामधनी की तनख्वाह के साथ बख्शीश दो और शायद मुनीम जी को भी तनख्वाह देनी पड़े।

लीला (जल्दी से हाँफते हुए प्रवेश करके) गजब हो गया।

श्याम किशोर क्यों-क्या खैर तो है ?

लीला खूब शौक़ हैं सेठ जी के। नया टी-सेट जो आप दिल्ली से लाए थे न वह टेबिल पर रखा हुआ था। सेठ जी की पूसी ने दूध के लालच में सारे सेट को जमीन पर गिराकर चूर-चूर कर दिया। एक मिनट में सैकड़ों रुपये का नुकसान। बाज आए घर के मकान से।

श्याम किशोर क्या वह नया टी-सेट टूट गया ?

लीला जी! इस बड़े घर में आने पर कुछ निछावर तो करना चाहिये। कर दी आपने, पूसी की निछावर। और वह लाडली जनी आपके बिस्तर पर तकिया बनी बैठी है। और मैंने देखा, किचिन में मुनिया की सभा लगी हुई है। मैं बाज आई ऐसे अहसान से। घर ही का मकान है! मित्र का मकान है।

(नेपथ्य में बैजनाथ की आवाज)

बैजनाथ (खाँसते हुए) अरे बाबू साहब! मैंने आपको सब चाबियाँ तो दे दीं, पर यह एक चाबी (घोड़े के हिनहिनाने की आवाज) हैं हैं हैं। घोड़े के अस्तबल की रह ही गयी! आपको उसकी भी फ़िकर रखना जरूरी है। तो मैंने सोचा कि लगे हाथ आपको यह चाबी भी देता चलूँ। यह लीजिए।

श्याम किशोर नहीं नहीं! यह चाबी आप अपने पास ही रखिये। और वह लीजिये चाबियों का गुच्छा आप ही इसको सँभालिए। मुझमें इतनी हिम्मत नहीं है कि मैं अपने को सेठ साहब के बंगले का मालिक समझूँ।

बैजनाथ हूँ ! हूँ ! यह आप क्या कह रहे हैं ? आप सब लायक हैं । सेठ जी के मित्र होकर आपमें इतनी नम्रता तो होनी ही चाहिए । हूँ ! कभी-कभी सेठ जी भी ऐसा ही कहते हैं ।

लीला मुनीम जी ! यह नम्रता सेठ जी को ही शोभा दे सकती है, हम लोगों को नहीं । एक मिनट में अस्सी रुपये का नुकसान हो गया ।

बैजनाथ नुकसान ! कैसा नुकसान ?

श्याम किशोर कुछ नहीं मुनीम जी ! हमारे लिए ताँगा मँगवा दीजिए हमारे लिए धर्मशाला की वह कोठरी बहुत अच्छी है !

लीला चलिए ! जल्दी चलिए !

बैजनाथ हैं ! हैं ! यह कैसे होगा साहब ! कैसे होगा !

(नेपथ्य में मुर्गे के बोलने की आवाज़ फिर कुत्ते के भौंकने की और अन्त में बिल्ली की म्याऊँ ।)

(पर्दा गिरता है ।)



साहित्यिक

वर्षा विहार

मन मस्त हुआ तब क्या बोले ।

सूर-संगीत

भारतेन्दु-मंडल

प्रसाद-परिचय

छायावाद-युग

कविता का युग-पथ

वर्षा-विहार

(गीति-नाट्य)

पात्र

उद्घोषक
स्त्री
चार पुरुष
भारती
विद्यापति
कबीर
सूरदास
तुलसी
'वपा'
मीरा

(वर्षा ऋतु है। आकाश में मेघ छाए हुए हैं। कभी-कभी हलकी गरज हो जाती है और जल बरसने की ध्वनि होती है।)

उद्घोषक सृष्टि-सर्जना में इस पावस की ऋतु ने
शान्ति से ही प्राप्त किया यश मातृ-पद का
पेड़ लता, फूल कली पत्र किसलय में
नूतन हरीतिमा का जीवन सजाती है।

जल बिन्दु जन्म लें, न जाने किस क्षण में
बनते हैं जीवन के दिव्य द्रुत गति से
तन्द्रिल शिथिल मौन लघु बाल-बीजों को
मृत्तिका की गोद में विपुल बाहु भरते।

और तब किसलय गात किस लय में
जीवन का गीत मन्द वायु की तरंग में
पाकर अरुणिमा का अंगराग प्रेम से
कलिका के साथ साथ सौरभ में हँसते।

पावस का पर्व नव-सृष्टि का प्रभात है
चेतना चपल चूमता है कण-कण को
और तब पावस की रिमझिम गीतिका
गाती है उमंग भरी उत्सव की रागिनी।

स्त्री स्वर बादल का एक झीना आवरण लेकर
देखो यह वर्षा-देवि कितनी उदास है?
बैठी हुई नील नभ के सुदूर कोने में
आँसुओं की धार रह-रह गिर जाती है।

क्योंकि

क्योंकि जन कवि कठ मुखरित हुआ नहीं
वर्षा-गीत गाने को अनेक नय छन्दो में
जनता के जीवन के हेतु वर्षा रानी की
मोतिया सी बूदा की अपार दान राशियाँ—
छम छम गिरती हैं तल तक हृय से—
उनको समेटते हं निज लघु अको में
किन्तु इस उत्सव में जन कवि मौन ह !
कसे सजना का पथ विस्मृत हुआ उन्हें ?

(बादलों का गजन)

बादल बेचारे व्यय नभ में गरजाते
मन चल यक्ति इन बादला को देख के
और कभी सुन कर उनका गरजना
करते विनोद प्रय भर यग-वाक्या में।

एक स्वर ओ हो य बादल ! य बोझ बन योम के
घूमत हं फिरत ह और शाहीन हं
विजली क पाछे बन बावन निलज्ज हैं
जस म पान कर करते प्रलाप हं !

दूसरा स्वर देखो ! इस बादल न वानप्रस्थ न लिया
सब कुछ छाड घूमता ह शू य व्योम में
फिर भी न वासना को छोड सका मायावी
विद्युत के रूप में तडप उठती ह जा।

तीसरा स्वर बादल ? यह प्रेम भरा मरा ही उर ह
सकुचित और कभी विस्तृत हो जाता ह

किन्तु जब मुझसे नहीं हो तुम, मिलते
आँसुओं के रूप में बरसता हूं धीरे-से।

चौथा स्वर बादल धुएँ का रूप लेकर गगन में
घूमता है जैसे कोई अलख जगाता है
किन्तु जब छद्म वश खलता है उसका
भू पर पतित होता वह पानी पानी हो।

स्त्री स्वर यह परिहास सुन वर्षा दुख मग्न है
उसके सहस्रदृग अश्रु पूर्ण हो गए
व्याकुल व्यथित बनी वह नत जानु हो
झुक गई जैसे नील पंकज विनम्र हो।

करती उपासना है शारदा की प्रेम से
अभ्र रूपी हाथ उठे उनमें सजी हुई—
श्रद्धा और भक्तिपूर्ण माला इन्द्रधनु की
शुभ्र जल बिन्दु माना अर्चना के फूल हैं।

पूजा वीणापाणि की निरन्तर ही होती है
घन-वाष्प पुंज मानो होम धूम छाया है
चातकों के कंठ बार-बार गूंज जाते हैं
माना यह श्रद्धा और भक्ति की विनय है।

(बादल की गरज)

सहसा प्रकाश हुआ विद्युल्लताओं का
जैसे हो प्रसन्न उठी महादेवि भारती
और स्निग्ध बादलों के मृदु मन्द्र घोष सा
एक वरदान कंठ से स हास निकला।

भारती स्वस्ति ! देवि वर्षा रानी ! तुमसे प्रसन्न हूँ
उर की समस्त भावनाएं जानती हूँ मैं
तुम्हें दूंगी कवियों की ऐसी म परम्परा
जिसमें तुम्हारा यश गौरव से गूंजेगा।

काव्य महाकाव्य गीत नव-नव रूपों में
जनता के कंठ से महान् कवि गावेंगे।
विश्व की दिशाओं में तुम्हारी विरुदावली
जननी के गौरव की भाँति सदा गूंजेगी।

देखो ! चन्द्र मण्डल की भाँति यह कौन है ?
उदित हुआ है कवि काव्य के क्षितिज से।
आहा ! सौम्य वेश रूपवान् सस्मित मुख
कवि-कुल-कंठहार वीणा-स्वर-कंठ है।

यह विद्यापति जन भाषा में पदावली
गा रहा है। मिथिला के कुंज का है कोकिल
प्यारे हरि मथुरा गए हैं राधा मौन है
यमुना की वाणी वर्षा रूपक में गूंजी है

विद्यापति (मधुर कंठ से)

हरि हरि विलपि विलापिनि रे लोचन जल धारा।
तिमिर चिकुर घन चमरत रे जनि बिजुलि पसारा।
नील वसन तन बोधल रे उर मोतिक हारा।
सजल जलद कत भाँपिय र डगमग कत तारा॥

उठि उठि समय कत जागिनि र विधिया जुग जाती।
पवन परस पुनि आमोन र जनि भाव्व राती।
यामिनि समर्के बरसनि र विरहिन पिक बामा।
समसए बह धिक अनुभव र धीरज मह रामा॥

भारती धीरज रखो हे देवि ! कितना मधुर गान—
गूँज उठा जन-कवि विद्यापति-कंठ से !
और ये महान् संत, देखो ये कबीर हैं,
गा रहे तुम्हारा गान रूपक में प्रेम से।

कबीर गगन गरजि बरसै अमी बादल गहिर गंभीर।
चहुँ दिसि दमकै दामिनी भीजै दास कबीर ॥

सतगुरु हम सूँ रीझि करि, एक कह्या परसंग।
बरस्या बादल प्रेम का भीजि गया सब अंग ॥

कबीर बादल प्रेम का हम परि बरस्या आइ।
अंतरि भीजी आतमा हरी भई बनराइ ॥

अंबर कुंजां कुरलियाँ गरजि भरे सब ताल।
जिन पै गोविंद बीछुरे तिनके कौन हवाल ॥

नैना नीझर लाइया रहट बहै निसि जाम।
पपिहा ज्यूँ पिउ पिउ करौं कबरू मिलहुगे राम ॥

झिरिमिरि झिरिमिरि बरसिया, पाँहण ऊपरि मेह।
माटी गलि सैं जल भई पाँहण वोही तेह ॥

भारती राम से कबीर मिले पूर्ण भक्ति भावना में।
किन्तु देखो देवि ! यह कौन श्याम भक्त है ?
भक्ति-पूर्ण नेत्र बन्द दीखते महाकवि के
वीणा के स्वरों में गान करता है प्रेम से।

ये हैं सूरदास-ज्योति मानस-दृगों से ही
श्याम छवि पान कर सुधि भूल बैठे हैं।

सूरदास सखी ! इन ननन तें घन हार।
बिनही रितु बरषत निसि बासर सदा मलिन दोउ तार।
ऊरध स्वास-समीर तज अति सुख अनक द्रुम डारे।
दिसिन सदन करि बसे बचन-खग दुख पावस के मारे।
सुमिरि-सुमिरि गरजत जल छांडत अंसु सलिल के धारे।
बूडत ब्रजहिं सूर को राख बिनु गिरिवर घर प्यारे॥

भारती आ गए श्याम ब्रज किंतु राम की भी सुधि
एक महाकवि श्रेष्ठ करता है प्रेम से
जिसन कि प्रेममय मानस के बीच में
राम को कमल के समान सजा रक्खा है।

वे हैं देवि ! तुलसीदास जो जन वाणी में
राम की विरह दशा वर्णन हैं करते।

तुलसीदास वर्षाकाल मेघ नभ छाए। गजत लागत परम सुहाए।
लछिमन देखहु मोरगन नाचत वारिद पेख।
गृही बिरति रत हरष जस बिष्नु भगत कहु देख॥

घन घमंड नभ गरजत घोरा। प्रियाहीन डरपत मन मोरा।
दामिनि दमकि रही घन माही। खल क प्रीति यथा थिर नाहीं।
बरषहिं जलद भूमि नियराए। जथा नवहिं बुध विद्या पाए।
बूंद अघात सहहिं गिरि कैसे। खल के बचन संत सह जैसे।
छुद्र नदी भरि चलि उतराई। जस थोरहु धन खल इतराई।
भूमि परत भा ढाबर पानी। जिमि जीवहिं माया लपटानी।
सिमिटि सिमिटि जल भरहिं तलावा। जिमि सद्गुन सज्जन पहिं आवा।
सरिता-जल जलनिधि महुँ जाई। होहि अचल जिमि जिव हरि पाई।

हरित भूमि तृन संकुल समुझि परहिं नहिं पंथ।
जिमि पाखंड बाद तें गुप्त होहिं सद्ग्रंथ॥

भारती दर्शन करो हे देवि ! ऐसे महाकवि के
जिनसे कृतार्थ हुई मेरी ध्वनि शक्तियाँ
काव्य में महाकवि हैं भक्ति में सु भक्त हैं
जनता के मध्य प्रेम धर्म में पुरोधा हैं।
वर्षा देवि ! मैं कृतार्थ हुई आज से सुखी हूँ मैं
इन जन-कवियों को सुन के प्रशस्तियाँ
इनके स्वरों में लीन होके हुई धन्य हूँ
इनकी सदैव पूजा करती रहूँगी मैं
किन्तु

सरस्वती हाँ हाँ बोलो देवि !

वर्षा

कैसे कहूँ भारती !
क्या न कोई नारी-कंठ गूंज सका मुझमें ?

(सरस्वती की मन्द हँसी)

भारती आ गई स्वजाति पर ? देखो देखो देवि ! न
भक्ति की पयस्विनी सी प्रेममयी नारी को
जिसने प्रसन्न किया गिरिधर गोपाल को
कैसा गान आज वह गा रही है प्रेम से

मीरा सुनी मैं हरि आवन की आवाज।
महल चढ़ि-चढ़ि जोऊ मोरी सजनी कब आवे म्हराज।
दादुर मोर पपीहा बोले कोइल मधुरे साज।
उमग्यो इन्द्र चहूँ दिस बरसे दामिनि छोड़ी लाज।
धरती रूप नवा नवा धरिया इन्द्र मिलन के काज।
मीरां के प्रभु गिरिधर नागर वगि मिलो म्हराज।
सुनी मैं हरि आवन की आवाज।

वर्षा धन्य ! धन्य ! धन्य ! मोरो ! तुमने रखी है लाज
सारी नारि जाति की ! मैं तुमसे कृताय हूँ !

भारती इस भाँति चलती है काव्य की परंपरा
जन भाषा कवियों की ! कितने सुकवि हैं
जो तुम्हें कभी न कभी कविता सुनावेंगे
और निज काव्य में तुम्हारी रिमझिम से
गान वे करेंगे नित्य नये-नये भाव ले
तुमको करेंगे सदा गीत-गुण-मण्डिता।

वर्षा मैं हुई कृताय देवि ! मेरी यह वन्दना
प्रेम से स्वीकार करो ! तुमने ही वाणी दे
कवियों को कोमल कला से सम्पन्न कर
साधना दी ऐसी वे पुजारी हैं प्रकृति के।
देवि ! यह वन्दना की रागिनी हो मेरी ही
मन्द्र मेघ-स्वर से मैं करती प्रणाम हूँ।
(हलके बादलों की गरज)



मन मस्त हुआ तब क्या बोले

[रूपक]

पात्र

निर्देशक
सेठ धनपत — एक नगर श्रेष्ठी
सोमदत्त — सेठ का मुनीम
नाथ-पंथी साधू
चार मदिरा पीने वाले
मदिरा बेचने वाली
पंडित पंचानन पांडे
एक यात्री

निर्देशक मन मस्त हुमा तब क्या बोल इस ममर वाणी के गायक सत कबीर हैं जिन्होन धम और काय दोनो क्षेत्रो में क्रान्ति उपस्थित की और एसे प्रयोग किय जो सत्य की कसौटी पर आज भी कचन की लीक की भाँति उज्वल और अमिट हैं। पद्रहवीं शताब्दी का युग। चारो दिशाओ स झोके उठे और बीच में तिनके की जसी दशा होती ह वसी ही दशा विविध धम सिद्धान्तो के बीच में यक्ति की हो रही थी। तभी सत कबीर न एक छोटी सी साखी कह दी—

उठा बगूला प्रम का तिनका उठा अकास।
तिनका तिनके से मिना तिनका तिनके पास॥

उन्होंने उन हवा के बगूला की प्रेरणा प्रम में दखी और व्यक्ति रूपी तिनके जसी सामान्य सत्ता में ब्रह्म की सत्ता का सकेत किया। एक और अपन कम-काड को लकर वष्णव धम था तो दूसरी और हठ-योग को लकर नाथ सम्प्रदाय था। एक और रोजा-नमाज की विधियो को लकर इस्लाम था तो दूसरी और मन्त्र और अभिचारो को लकर कौल सम्प्रदाय था। प्रत्यक धम के साथ बाहरी मान्यतायें थीं। यद्यपि सब धर्मों का लक्ष्य सत्य को पहिचानना ही था तथापि इन बाहरी मान्यताओं न उनमे भेद उत्पन्न कर दिये थ और परस्पर द्वेष के बीज बो दिय थे। सत कबीर न बाहरी मान्यताओ को जड-मूल से उखाड दिया और एक मात्र सत्य की अनुभूति उनके सामने उभर आई। सत्य और धम का मूल विश्वास में ह। विश्वास के आदि में प्रेम ह और अन्तमें आनन्द। कबीर न अपने सत्यगत धम की भूमि में प्रम और आनन्द के पुष्प विकसित

किय । सत्य क प्रति प्रेम और आनन्द ही रहस्यवा की अनुभूति के अग ह । इसीलिए उन्होंन इस प्रेमानन्द की अनुभूति में कहा—

मन मस्त हुआ तब क्या बोल

हाँ एक बात और ह ! सत कबीर न प्रेम और आनन्द की जितनी बातें कही व सब जीवन की सामान्य गतिशीलता से हो ली ह । उन्होन कल्पना स कोई काम नहीं लिया । उनकी ऊची से ऊची अनुभूति जीवन की सहज और स्वाभाविक घटना में बिखरी पडी ह । जिस तरह छोटी सी चीटी धूल म बिखरे शकरा के कणो को चुन लती ह उसी प्रकार सत कबीर ससार में बिखरी हुई आनन्द की अनुभूतियो को ग्रहण कर लेत ह और गम्भीर से गम्भीर बात सहज उदाहरण से कह देत ह ।

श्रेष्ठी धनदत्त (दबे कठ से) कोई यहाँ ह तो नहीं सोमदत्त ?

सोमदत्त मैं देख लता हूँ ! (कुछ क्षण बाद) कोई नहीं ह ! काह महाराज ?

श्रेष्ठी अर बडा गुप्त बात ह । किसी सू कहन की नहीं ।

सोमदत्त मुझम भी नहीं ? अर महाराज ! मैं ता आपी का हूँ मैं तो बाहरी नही । म ता गुप्त बात को इकाई समझता हूँ श्रेष्ठी जी !

श्रेष्ठी अर ता मैं तुझम ता कही दूँगा पर किसी सू कहन की नही ह ।

सोमदत्त तो श्रेष्ठी जी मैं किसी के सौंहो गान ता जाऊगा नहीं सिर्फ आपकी बजाना जानता हूँ ।

श्रेष्ठी तो किसी सू कहियो मती ।

सोमदत्त अर स्वामि क्यो महाराज ! भला जुबान प आ सकती है ज

बात ?

श्रेष्ठी अच्छा तो फिर खबरदारी से देखना ! देखो ! (डिब्बी खोल कर दिखलाता है ।) जे का है ?

सोमदत्त (चौंककर) अरे श्रेष्ठी जी ! वाह ! जे कहाँ से पा गये ?

श्रेष्ठी (डाँटकर) अरे जोर सू नहीं जोर सू नहीं ! दीवार भी कान की कच्ची और मुह की पक्की होती है ।

सोमदत्त छिमा करो श्रेष्ठी जी ! (धीरे से) वाह ! क्या चमक है । सूरज की किरन झाँक रही है चन्द्रमा करवट लेकर बैठा जान पड़े । वाह क्या कहना है ।पर जे आप पा कहाँ से गये ?

श्रेष्ठी (मुह की हंसी दबाते हुये) नइ बताऊँगा नइ बताऊँगा !

सोमदत्त अरे, श्रेष्ठी जी ! बतान से इसके पख थोड़े निकल आयेंगे ! और गुप्त बात की वार्ता तो लक्ष्मी जी की कथा है कथा ।

श्रेष्ठी (आँखें फाड़कर) ऐं कथा है, कथा ? तो कहूँ ? पास आ जाओ ! जरा पास ! (फुसफुसाहट के स्वर में) किसी सू कहना मती । एक गाहक आया था गाहक ! हाथ में पहन था, ये अँगूठी । हमने नाक सिकोड़ के कहा—वाह, व्यापारी जी ! लखपती होय के काँच पहरे हो काँच ? उसने कही—श्रेष्ठी जी ! हीरा है हीरा ! हमने कही—लाख रुपये का दाँव ! लच्छमी इस पार या उस पार । हाँ ! काँच, निबक काँच । सकते में आ गया बपारी । जौहरी बुलाया । बोई लाला बुलाखी लाल । अपना आग्मी । दिन को रात कह दे । मेरी आँख की कोर दबी देखी के बोला—बपारी जी इसमें लच्छमी नहीं है ! जे तो मुह देखन का शीशा है शीशा । तो वो भी आसमान से गिरा ! बस पाँच हजार का हीरा पाँच रुपय में ठोक लिया !

सोमदत्त वाह श्रेष्ठी जी ! क्या शीशा दिखलाया है ! तो वो गाहक दे गया, पाँच रुपये में ?

श्रेष्ठी अरे, अगूठी उतार के फेंक गे उसन ! पाँच रुपये तो उसकी खातिरी में खच कर ग्यि थे। सोने की कीमत रोकड जमा ए रोक्ड जमा।

(नपथ्य से अलख निरजन अलख निरजन !)

श्रेष्ठी अरे कोई आया ! इधर लाओ अगूठी इधर लाओ ! हाँ अब किसी को क्या मालूम

सोमदत्त अर ये तो बठके में ही चला आया !

(नाथ पथी साधू का प्रवेश)

नाथ अलख निरजन ! (दृढ़ता से) बच्चा ! तेरा उपकार करन आया हूँ !

श्रेष्ठी स्वामी जी ! हमार वड भाग !

सोमदत्त हाँ उपकार करना तो सता का सुभाव ठहरा।

नाथ बच्चा ! बोल ! तू क्या चाहता ह ? अलख अलख अलख ! जाग मच्छन्दर गोरख आया गोरख आया गोरख आया ! बोल क्या चाहता ह ?

श्रेष्ठी महाराज !

नाथ जुलाह का सूत दू अधूते को धून दूँ निपूते को पूत दूँ। सच्चा अवधून हूँ ! दिन को सोय रात का चल आकाश का बिरवा पाताल में फल उजल में अधर का दीपक जल ! अलख निरजन ! बोल !

श्रेष्ठी स्वामी जी ! आप तो सचमुच बड़ महात्मा ह !

सोमदत्त तीन नाक में घूमत ह काहू न मगात्मा हाय !

नाथ देख मैं एक बात पूछू ? पूछू ? तेर पास हीरे की अगूठी ह ?

श्रेष्ठी (घबराकर) अय हीरे की अगूठी ह ? हीरे की अगूठी तो

सोमदत्त हीर की अगूठी कहाँ है ?

नाथ श्रेष्ठी धनदत्त के पास ! क्या ? हीरे की अगूठी ह ? सच बोल नहीं तो (हाथ उठाता है।)

श्रेष्ठी (घबराकर) नहीं, नहीं स्वामी जी ! ह ! ह ! हीरे की अगूठी।

नाथ आठा पहर छत्तीस जोगनी गुरु को वर खवामी।
माया की काया गहि राखा ऐसी मरी कासी॥
बोल हीरे की अगूठी ह ?

श्रेष्ठी (कांपते हुये स्वर मे) ह स्वामी जी ! ह। अब आपसे क्या छिपा ह ?

सोमदत्त वाह स्वामी जी ! हीरे की अँगूठी में कितना दूरकी कौडी लाय !

नाथ (ज़ोर से) अलख ! सता की डयोढ़ी में हसना काल में फसना। माया मोड दे जग का बन्धन तोड दे। हीरा काँच समझ के छोड दे !

श्रेष्ठी (डरते हुये) ह, महाराज !

नाथ गुपत माल ह गुपत माल ह मच्छन्दर का जाल ह, गोरख की ढाल ह। बोल दूना कर दूँ इसे ?

श्रेष्ठी स्वामी जी ! दूना हो जायगा ! यह हीरा दूना हो जायगा ?

नाथ बच्चा ! गोरख का नाम ! दिन को दूना रात चौगुना ! क्या समझा ! (सोमदत्त को ओर देखकर) इसकी आंखा में माया है। वाह र गोरख ! कहीं धूप वहीं छाया ह। बच्चा ! दून का काम अकेले में। गुरु को धून का काम अकेले म। इसको (सोमदत्त की ओर सकेतकर) यहाँ से जाना पडगा।

श्रेष्ठी (लालच से) एक हीरे के दो हीरे हो जायेंगे ?

नाथ (जोर से) अलख निरजन !

श्रेष्ठी अच्छा सोमदत्त ! जाओ स्वामी जी कहत हैं तो जाओ !

नाथ बस्ती न सुन सुन न बस्ती अगम अगोचर ऐसा।
गगन मडल में बालक बोल ताका नाव धरोग कसा?
अलख निरजन!

सोमदत्त अच्छा स्वामी जी! मुझे डर भी लगता है! मैं जाता हूँ! परणाम!

(प्रस्थान)

नाथ (अट्टहास करके) चला गया न?
अदख देखिया देखि बिचारिबा अदिस्ट राखि बचीया।
पाताल की गगा ब्रह्माड चढ़ाइया तहाँ विमल रस पीया॥
कहाँ है तेरा हीरा?

श्रेष्ठी (हीरा निकालकर) यह है स्वामी जी!

नाथ जसा नाथ का अमोल नाम तसा अमोल हीरा।
प्रेम की मझधार डूबा गग जमुन तीरा॥
तूने इसको दिन में बीस पचीस बार खोला?

श्रेष्ठी हाँ स्वामी जी! दिन में बीस पचीस बार तो खोला ही होगा।

नाथ अलख निरजन! दस बारह आदमियों से इसकी बात कही?

श्रेष्ठी हाँ स्वामी जी! दस-बारह आदमियों से जरूर कही होगी।

नाथ (जोर से) कहा होगा नहीं! कही।

श्रेष्ठी (काँपते हुए) हाँ स्वामी जी! कही।

नाथ (अट्टहासकर) दस-बारह आदमियों से और हर एक से कहा किसी से कहना मत। ए! (अट्टहास)

श्रेष्ठी हाँ स्वामी जी! कहा तो ऐसा ही।

नाथ अच्छा बतला मुझे बस पता चला!

श्रेष्ठी अब स्वामी जी! यह मैं कसे कहूँ? उन्हीं दस बारह आदमियों में से किसी ने

नाथ (बोलकर) ज्ञान मच्छन्दर गोरख को गुरु में ज्ञान और माया मछिन्दर का ध्यान। नाथ का अपमान करता है? उलट

दूंगा—पलट दूंगा। गुप्त माल का डंका, मन में रह न कोई सका। पूत मछिन्दर का गुरु गोरख बंका।

श्रेष्ठी नहीं स्वामी जी! क्षमा कीजिए।

नाथ गुरु गोरखनाथ हिमालय में देखूं—गुरु मछिन्दरनाथ त्रिभुवन में देखूं और श्रेष्ठी का हीरा न देखूं! बोल दिला दूं तेरा सिंहासन? गुप्त माल लेने की युक्ति दे दूं? माया का नाक काट दूं? श्रेष्ठी को बारह बाट दूं?

श्रेष्ठी नहीं स्वामी जी! आपके चरणों का दास हूं।

नाथ अच्छा, अच्छा। धर्मनाथ के माथे पर गंगाजल! एक आंख में गरम दूसरी आंख में शीतल। आदेश आदेश, धर्मनाथ! आदेश! कहां है तेरा हीरा?

श्रेष्ठी ये रहा, स्वामी जी!

नाथ इसे रख दे भूमि पर! पृथ्वी पृथ्वीपति को जाने। दारिंग आता भीतरि भान। बोल एक हीरा का दो हीरा हो जाय!

श्रेष्ठी एक हीरा का दो हीरा हो जाय!

नाथ बोल—मेरी शक्ति गुरु की भक्ति।

श्रेष्ठी मेरी शक्ति गुरु की भक्ति।

नाथ एक हीरा का दो हीरा हो जाय!

श्रेष्ठी एक हीरा का दो हीरा हो जाय!

नाथ आंख बंद कर ले।

गगन मंडल में औंधा कुंआ तहां अमृत का वासा।
सुगरा होए सो भर भर पीवे निगुरा जाइ प्यासा।
शब्द के जोर से एक हीरा दो हीरा हो जाय!

अलख बोलो रे अवधू! अलख बोलो। अलख का जोग देख मैं मन में। और न कर तू धंधा। अगर तूने कहीं बिन आंख खोली तो अंधा! जनम जनम का अंधा।

श्रेष्ठी स्वामी जी! हमने आंख बंद कर ली।

नाथ खोलेगा तो नहीं ?
श्रेष्ठी नहीं स्वामी जी।
नाथ हीरा तेरे सामने है। आँख बन्द कर ले। सबद जोर से मन भर ले। एक हीरा दो एक गोरख दो मछन्दर एक आकाश दो पाताल एक बीज दो पेड आँख बन्द है ? नाथ पीछे हटे सबद आगे बढ़े। हम पीछे हटेंगे सबद आगे बढ़ेगा। आँख बन्द है ?
श्रेष्ठी हाँ स्वामी जी।
नाथ (जोर से) अलख निरंजन ! प्रगट की गाय प्रगट में बूढ़े गुपत का बन्दा गुपत में जाय। अलख निरंजन !

चार डग आगे धरूँ एक डग पाछे।
हीरा दो बाँध लाऊँ मूँद नयन आछे ॥
मूँद नयन आछे अलख निरंजन !
चार डग नाथ पीछे हटे सबद आगे बढ़े ! चार डग

(आगे बढ़ता हुआ) एक दो तीन चार (धीरे धीरे गिनने की ध्वनि दूर होती जाती है।)
श्रेष्ठी (धीरे से) अब आँखें खोलूँ स्वामी जी ?
नाथ (दूर से बोलता हुआ) धीर न धर तू अंधा। मेरे कहे बिन आँखें खोलना तो जनम जनम का अंधा !

(अधिक दूर गिनने की आवाज आती है।)

श्रेष्ठी (कुछ जोर से) अब आँखें खोलूँ स्वामी जी ?

(कोई उत्तर नहीं मिलता।)

श्रेष्ठी (कुछ और जोर से) अब आँखें खोलूँ स्वामी जी ?

(कोई उत्तर नहीं मिलता।)

श्रेष्ठी (जोर से) मानता हूँ स्वामी जी ! एक हीरे से हो गए दो ! (आँखें खोलता है।) हाय ! स्वामी जी कहाँ गए ! (क्रन्दन के स्वर में) चोर चोर मेरा हीरा कहाँ गया ?

(ज़ोर से पुकारकर) अरे, सोमदत्त! दौड़ो-दौड़ो मैं लुट गया! अरे, वो स्वामी जी अन्तर्ध्यान हो गए मेरा हीरा भी ले गए! हाय मेरा हीरा! अरे स्वामी जी! हाय, हीरा जी! मैं तो लुट गया!

(सोमदत्त का प्रवेश)

सोमदत्त श्रेष्ठी जी क्या हुआ!

श्रेष्ठी हुआ क्या! लालच मुझे खा गया! स्वामी जी ने एक हीरा को दो करने के लिए कहा! हाय! आधा भी नहीं रहा! हाय! मेरा हीरा! स्वामी जी ने अपने जोग बल से माथे में ठोक लिया।

सोमदत्त स्वामी जी तो सच्चे मालूम पड़ते थे श्रेष्ठी जी! हीरा ही लेकर गायब हो गए! अब किस पर भरोसा किया जाय

श्रेष्ठी अपनी बेवकूफी पर। अरे, दौड़कर स्वामी जी का पता ले हीरा लेकर चम्पत हो गया।

सोमदत्त अभी जाता हूँ, श्रेष्ठी जी! पर ऐसा भी तो सोचना चाहिए कि उन्होंने आपको माया-मोह से छुड़ा दिया।

श्रेष्ठी अरे, माया-मोह के बच्चे! भाड़ में डाल, अपना ज्ञान। मेरा ऐसा अच्छा हीरा-जैसे आँख खोल के मुझे देखता था! हाय! ले गया, वह जोगड़ा।

सोमदत्त अच्छा, मैं देखता हूँ जाके! (प्रस्थान)

श्रेष्ठी तू क्या देखेगा! उस जोगड़े की शरारत में तू भी शामिल होगा! नहीं तो उसे पता कैसे चलता? हाय! हाय! मेरा हीरा! मैंने उसे दूसरों को दिखलाया ही क्यों! उस भेद को क्या खोला! हाय हीरा हाय हीरा!

सोमदत्त (नेपथ्य से) अरे श्रेष्ठी जी! ये जोगड़ा वही गाहक था जिसे धोखा देकर आपने हीरा हथिया लिया था। वही भेस

बन्ल कर आया था और अपना हीरा लकर चम्पत हो गया !

श्रेष्ठी हाय हीरा चम्पत हाय हीरा चम्पत !

निर्देशक म्हो हीरा ईश्वर का नाम ह । यह धाखे से नही लिया जा सकता उसका यापार नही किया जा सकता । उसका न्खिावा कमा ? दूमरा पर उमका रहस्य खोलना कमा ? सन्त कबीर न कहा ह —

(नेपथ्य मे सगीत का स्वर)

हीरा पाया गाठ गठियायो बार बार वाको क्या खोले ?
मन मस्त हुआ फिर क्या बोल !
मन मस्त हुआ फिर क्या बोल !



दृश्यातर

[एक मदिरालय का दृश्य । कुछ लोग शराब पीकर झूम रहे हैं । कुछ लोग तिपाइयों पर बठे हुए शराब के नशे के मजे ले रहे हैं । कुछ लोग आपस म मस्ती से बातें कर रहे ह । दूकान के मध्य में मदिरा बेचने वाली की जगह है जो इस वक्त वहाँ नहीं है । दूर से मस्त बातों की भनक सुनाई पडती है ।

एक (झूमते हुए स्वर में) जरा ये शेर सुनना भाई !
साकी तू न्पि जा मय जिस जिस को न्पिया चाहे ।

सब (दुहराते हैं) साकी ! तू न्पि जा मय जिस जिसको न्पियाचाहे ।

एक मरन्मव में वो सोहागिन ह जिसको कि पिया चाहे !!

(वाह वाह क्या शेर कहा है ! बहुत खुब, ! 'बहुत खूब ! की ध्वनियाँ)

सब 'सब में वो सुन्दगन है, जिसको कि पिया चाहे।

दूसरा हाजरीन! जरा मेरे शेर को भी दाद दीजिए। कहता हूँ कि

तू आज हुआ साक़ी गर मेरी लिया चाहे।

तीसरा वाह! किस मज़े से बात कही गई है—(दुहराते हुए)

तू आज हुआ साक़ी गर मेरी लिया चाहे।

दूसरा अरे तो हम तब से पिला दे मय पीते हो पिया चाहे।

(वाह, वाह की धूम—वाह! पीते हो पिया चाहे

क्या बात कही है—पीते ही पिया चाहे।)

तीसरा अब जरा इधर भी ग़ौर फ़रमाए। कहता हू कि

दिल पास था जो मेरे (हाथ उठाकर) सुनिये हुजूर!

दिल पास था जो मेरे दिलवर को दिया मन।

अब जान भी हाज़िर है जाना जो लिया चाहे।

(वाह वाह की ध्वनि) अरे जान तो उसने पहले ही ले ली!

(अट्टहास)

चौथा हुजूर! मेरे हाल पर भी रहम हो! मैं कहता हूँ कि

मय पीते है मस्तान हम इश्क के दीवाने!

सब वाह! क्या बात कही है—मय पीते हैं मस्तान, हम इश्क़ के दीवान!

(सब की सम्मिलित आवाज़)

चौथा मय पीते हैं मस्ताने हम इश्क़ के दीवाने।

काबे को तू मयखाना कर दे

(सब सम्मिलित स्वर में) जो किया चाहे॥

वाह वाह मियाँ! तुमने तो ग़ज़ब कर दिया। काबे को मयखाना बना दिया!

(सुभान अल्लाह सुभान अल्लाह की सम्मिलित ध्वनि!)

पहला भई, मय का ज़िक्र जिस मस्ती से किया गया है लेकिन वो मय

क्या जो जबान पर आकर गले तक न पहुँच जाय !

दूसरा सिर्फ गले तक नहीं दिल और दिमाग तक। लाना भई, सागर और पमाना।

तीसरा लेकिन साकी कहाँ है ? सिर्फ काली काली बोतलें दिखाई देती हैं !

यह काली काली बोतलें जो है शराब की।
रातें हैं उनमें बन्द हमारे शबाब की॥

चौथा बात तो खूब कही लेकिन उन रातों को रौशन करने वाली साकी आए—बाकी सब चला जाए !

पहला हाय ! साक़ी का घर भी कितनी दूर है !

काश ! घर तेरा मेरे घर के बराबर होता।
तू न आता तेरी आवाज़ तो आया करती।

दूसरा सही बात कहते हो दोस्त !

न जाने बात यह क्या है उसे जिस दिन से देखा है।
मेरी नजरों में दुनियाँ भर हसीं मालूम होती है।

तीसरा क्या तुम्हारी नजर को क्या कहें—लेकिन नजर सम्हाल के डाला करो—

अच्छी सूरत भी क्या बुरी शै है
जिसने डाली बुरी नजर डाली।

दूसरा और मेरे हाल पर भी तो नजर कर कि

तेरे हुस्न की हमने इज्जत बढ़ा दी।
जमाने की नजरों में खुद को गिरा कर।

चौथा और मेरा हाल तो यह है कि

तेरी गली में आके यूँ खो गए हैं दोनों।
दिल मुझको ढूँढता है मैं दिल को ढूँढता हूँ॥

पहला अरे मेरी हालत तो इससे भी गई बीती है दोस्त !

जिन्दगी ये किसी मुफलिस की कबा है जिसमें
हर घड़ी दर्द के पैबन्द लगे जाते हैं।

दूसरा लेकिन दोस्त ! यह भी कोई जिन्दगी है ?
यह भी कोई जिन्दगी है जान हम खोते रहें।
लोग हम पर मुस्कुराएँ और हम रोते रहें ?

तीसरा (सहसा) देखो—सुनो—वह साकी की आवाज आ रही है।

चौथा साकी की ? यह तो घुंघरुओं की रुनझुन है। (रुनझुन होती है।)

पहला साकी ही नाचती हुई आ रही है ?

दूसरा हाँ हाँ, वही तो आ रही है !

चौथा लेकिन वह नाचेगी क्यों ?

तीसरा क्यों ! वह हम सब लोगों से ज़ियादह खुश रहना जानती है।

पहला और आज तो उसने भी पी है—ऐसा मालूम होता है।

दूसरा सब दिन तो वह हमें पिलाती है आज उसने खुद ही पी ली तो क्या गुनाह किया, उसने ?

तीसरा गुनाह ? अरे हम पर करम किया है करम, उसने। पीकर पिलायगी तो शराब का मजा ही दूसरा होगा।

पहला आज उसने दो मन शराब पी है। एक अपने मन भर और दूसरा हमारे मन भर ! (खिलखिलाहट की हँसी)

(नाचते हुए साक़ी का प्रवेश)

साक़ी (तरन्नुम में) बन्सुरी के साज पर गाने का मौसम आ गया।
आ गया पीकर बहक जाने का मौसम आ गया।

सब सुभान अल्लाह ! सुभान अल्लाह !!

साक़ी लिखकर हमारा नाम जमीं पर मिटा दिया।
उनका था खेल खाक में हमको मिला दिया।

चौथा क्या बात कही है—

उनका था खल खाक में हमको मिला दिया।

सब सुभान अल्लाह ! सुभान अल्ला" !

दूसरा गजब ह ! आज ता साकी एसे बखूदी के आलम में है गोया सागर से भी म छलक उठी ह।

साकी (नाचते हुए गाती है।)

कोई देख मरा जुनून तलव
उनको अपना बना रही हूँ म
शाय" अब इश्क़ हो गया कामिल
गम में लज्ज़त सी पा रही हूँ म
देखिए किस सितम का हो आगाज
फिर उन्हें या" आ रही हूँ म।

(रुककर)

जो मै एसा जानती प्रीति किय दुख होय।
अरे नगर ढिंढोरा पीटती प्रीति करो जिन कोय॥

(गात गात बेहोश हो जाती है।)

प्रीति... करो जिन कोय !

निर्देशक इस प्रकार आत्मा जब तक जीवन की रगीनिया में डूबी रही वह साकी बनकर दूसरा को शराब पिलाती रही वह जब स्वय हरि क प्रम में मस्त हो गई फिर पिलान का ध्यान कहाँ ! फिर तो बगर अन्दाज के खु" ही पीने लगी। पीकर मस्त हो गई !

(नेपथ्य म कबीर का स्वर)

हलकी था जब च" तराज पूरी भई तब क्या तौलें।
सुरति कलारी भई मतवारी, म"वा पी गई बिन तौल।
मन मस्त हुआ तब क्या बोल।
मन मस्त हुआ तब क्या बाल॥

● ● ●

दृश्यान्तर

(एक चबूतरे पर हरि कथा। तीन-चार भक्तगण बैठे हैं। पंडित पंचानन पाण्डे जी प्रवचन कर रहे हैं। पहले शंख और फिर घंटा बजने की आवाज आती है। फिर जय ध्वनि—शंकर भगवान की जय!

बम भोले की जय!

स्वामी जी महाराज की जय!)

पंचानन: सज्जनो! अब प्रार्थना जो है सो प्रारम्भ करते हैं—

(स्वर से)

कर पूर गोर करु नाव तार।
शिव सार असार भुज मेंद हार।
सदा बसन्त हो दया द बन्द।
भाव भवानी सहि तुम नमामी॥

सज्जनो! यहाँ जो है सो गुसाईं जी महाराज भवानी जी की अस्तुति करे हैं। कैसे करें हैं जो है सो 'कर पूर गोर'! कर कहिए हाथ सो सम्पूर्ण रूप से गोरे हैं! भवानी जी बहुत गोरी हैं तो उनके हाथ भी बहुत गोरे हैं। तिन्हीं से गुसाईं जी महाराज कहते हैं कि करु नाव तार कि हमारी नाव जो है तिसको संसार के भव सागर से पार लगाकर हमको तार देवो! क्योंकि संसार जो है सो असार है। शिवसार असार और हे भवानी! तुम जो हो सो अपनी भुजाओं में गेंद कहिए ब्रह्माण्ड सो तिनके हार पहने हो। जब गेंद की तरह ब्रह्माण्डों के हार तुम अपनी भुजाओं में धारण किये हो तो ये असार संसार तुम्हारे सोहीं क्या है? और आपके यहाँ तो, सदा बसन्त अर्थात हमेशा ही बसन्त ऋतु छाई रहती

ह। तिश करकें जो आपके मन में जो ह शो, दयाह बदे दया ह उशी शे भक्तगण आपकी वन्ना करते ह और हे भवानी! तुम अपन भक्ता के भाव कुभाव को शह जाती हो— भाव भवानी शहि तुम! इशालिए हम आपको ममामी करते ह अर्थात प्रणाम करते ह।

एक भक्त वाह महाराज आपन बडी अच्छी टीका की। कितनी अच्छी तरह से समझाया जसे दपन में रूप दिखा दिया!

दूसरा भक्त महाराज! यह बात समझ में नही आई कि भवानी जी भजाग्रा में कसे हार पहनती ह?

पचानन अभी रस्ते पर नहीं लग हो भगत जी! अनान जो ह शा धीरे धीरे ही दूर होता ह जशें दीमक जो ह शो काठ को धीरे धीरे ही काटती ह। अरे भगत जी! य तो दुनियाँ क लोग ह जो गल में हार पहनत ह। भवानी जी जो ह शो उनका शरीर जो ह शा दिव्य ह। उनके तो चरनार विंदु तक माला पहन शक्त ह जो ह शा भजा ता भुजा ह। विन्ध्याचल की अष्ट भुजा देवी को देखा ह? हरक भुजा में जो ह शो कलप विरछ की माला झूलती रहता ह।

दूसरा भक्त शका का समाधान हो गया महाराज!

पचानन मुझ तुमन कोई मामूली पडित शमझा ह जा ह शो मरे मैं पचानन हूँ पचानन। कुछ भक्त लोग पजानन भी कह देते हं क्योंकि मैं बड शा बड पडित श पजा लडा शकता हूँ। जब अपना पजा बढ़ाना ह (दिखलाकर) इशा तरह तो बड शे बड पहलवान पडित जो ह शा न न करन लगते ह। शो पजानन ता लाग ठीक जा हैं शा कहत हैं।

तीसरा भक्त एक बात और समझा दीजिए महाराज!

पचानन इशा करता मैं अनान का अधकार दूर करत फला हुआ ह। मुझे

अपने ज्ञान का पजा फिर चलाना पडेगा।

तीसरा भक्त आपकी बड़ी कृपा होगी महाराज ! ये जो आपने भुज गेंद हार' में ब्रह्माण्ड को गेंद क॰ ़िया सो कैसे ? गेंद तो छोटी होती है और ब्रह्माण्ड बड़ा। और गेंद की माला कैसे होती है ?

पचानन आँख रहत हुए भी तुम उशशे काम नही लते। हाय ! हाय ! तुम कश भगत हो ! गें॰ का माला म तुम उलझ गए ! जो है शो अरे तुमन गेंदे का फूल देखा है ? गेंदे की माला देखी है ? तो यहाँ गें॰ जो है शो गेंदे के फूल श मेल खाती है जो है शो। शमझ ?

तीसरा भक्त य बात आपन ठीक कही पडित जी !

पचानन दूशरी बात भी शमझ लो जिशश भल न जाओ। जो है शो। तुमन भूगोल की किताब पढ़ी है। हमन पढ़ी है। उशमें दुनियाँ गें॰ की तरह है कि नहा ? तो भुज गें॰ हार का अर्थ इश तरह शमझना प॰गा कि गेंदे के फूल की खुशबू लिए हुए गें॰ की तरह ब्रह्माण्ड की माला भुजाओ में है। अब शमझ गए ? भवानी को गेंदे का फूल पशन्द है।

तीसरा भक्त बिलकुल समझ में आ गया पडित जी !

चौथा भक्त पडित जी ! आप सस्कृत म तो आचाय होगे ?

पचानन अच्छा ! तो आप लोग मेरी परीक्षा, जो है शो ले रहे हैं। यहाँ अज्ञान का अंधेरा फैला हुआ है। अब इश नगर में मैं बिलकुल नहा रहूँगा। यहाँ तो डमड डमड डमड ज्वलल्लाट फट्ट पादुके लोग पूछने लग ! अब पूछो पादुके क्यो फट्ट बोलती है।

पहला भक्त नहीं महाराज ! आपका बोलना ही काफी है। इन लोगों के अपराध के लिए मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ।

पचानन तुम्हारे कारन ही मैं रुका हूँ नहीं तो अभी तक यहाँ से जो है सो चला जाता। गोसाइं जी ने भी कहा है सो भी विभी पराभौ कारन। यही कारन है!

पहला भक्त अच्छा तो मैं इन लोगों को यहाँ से हटा देता हूँ। भाइयो! तुम लोग यहाँ से जाओ।

चौथा भक्त अच्छी बात है! तुम्ही इनका ज्ञान सुनो। (बाकी लोगों से) चलो भाइयो! इन दानों को पजा लगाने दो।

शेष लोग चलो चलो कुश्ती लड़ते हैं कि कथा बाँचते हैं।

(प्रस्थान)

पचानन देखा ये लोग पायखाना करके नहीं गए।

पहला भक्त मूर्ख तो हैं ही ये लोग।

पचानन यथार्थ में वह मूर्ख हैं जो है सो धर्म में विश्वास नहीं है! चले गए अच्छा हुआ अब कहा जाने मेरा मन शान्त हुआ। तुम बैठ के अपनी शंका समाधान करो।

पहला भक्त महाराज आपका स्वरूप इतना प्रिय है कि आपको देखते ही मेरी शंकाएं आपसे आप समाधान हो गईं जैसे अच्छे तरने वाले के हाथ के लगने से तालाब की काई फट जाती है।

पचानन वाह वाह तुम तो सच भगत हो जो है सो बहुत अच्छी बात कहते हो।

पहला भक्त आपका आशीर्वाद है महाराज! आप कहाँ से आ रहे हैं?

पचानन मेरे कहाँ पूछते हो भगत! बड़े दूर से आ रहे हैं आत्माराम जो है सो। आ रहा हूँ! द्वारकापुरी! पहुँच गए द्वारकापुरी वाह वाह किशन भगवान महाभारत करा के बैठ गए समुन्दर के किनारे। अब जो कहो कि क्या बस गए समुन्दर के किनारे तो समझ लो जो है सो—महाभारत की गर्मी को शान्त करने के लिए। बड़ी गर्मी थी महाभारत में। आग बरसती थी रात

और दिन । अगिन बान एशे चलत थे कि आशमान में उजालइ उजाला । अरे रात और दिन का फरक थोड़ मालूम होता था । वो तो शमभो लड़ाई तब बन्द होता था जब अगिन-बान खतम हो जाते थे । दूसरे दिन फिर अगिन बान चलाय जात थ ।

पहला भक्त महाराज ! आपके कहन स एसा मालूम होता ह कि आपन महाभारत का लड़ाई देखी ह ।

पचानन अरे जे शब भगती का प्रताप ह जो ह शो ।

पहला भक्त क्या कहना ह महाराज ! फिर द्वारकापुरी से आप कहाँ गए ?

पचानन द्वारकापुरी श गए रामश्वरम । अन्ना हा ! रामेश्वरम् में आ धनुष कोटी ह तो ऐशी धनुष का कोटी खिची हुई ह जशे राम न अभी रावण को मारा ह ।

पहला भक्त महाराज ! वहाँ से कुछ लाए ?

पचानन अरे भगत जी कन्याकुमारी की बालू ! हाय,हाय, जशे चावल क दान ! हाय ! कन्याकुमारी का ब्याह नही हुआ जो ह शो तो ब्याह का शब चावल बिखर गया और वही जो ह शो इतन बरशो में शूख क रत हो गया । हाय, हाय !

पहला भक्त सचमुच सूखा हुआ चावल मालूम होता ह । इसे खा लू महाराज ?

पचानन अरे भगत ! इशके खाने वाले और जो ह शो इश हजम करने वाल लोग भी चल गए । अब तो बश परनाम कर लो परनाम जो ह शो ।

पहला भक्त परनाम महाराज ! आपको और इन चावलो को ।

पचानन फिर उनके बाद गए जगरनाथ ! जो ह शो, वाह ! कशी मूरत ह ! कर बिनु करम कर विधि नाना ! गोशाई जी कह गए हैं । हाथ नहीं ह प हजारो हाथों श चावल बाँटत है वाह ! वाह जो ह शो जगरनाथ का भात खाव शाता जात ।

पहला भक्त आप धय हं महाराज ! आपके दशना से मुझे घर बठ तीरथों का पुय परताप मिल गया। कित्ते दिन लगे होयग मब जगह जान में ?

पचानन अर शब जगह जा ह शो थोड जा पाया हूँ अभा जो ह शो अभी बन्रीनरायन श्वामी जी की तरफ जाना ह। तब चारो धाम होयगे।

पहला भक्त आपन बडी तपस्या करी महाराज ! चारा धाम करन म बड ग्नि लगते हं।

पचानन अब भगत जो ! इम एकान्शी को पूर ग्यारह महीन हो जायग जो ह शो। शब भगवान अपन हाँ शब भगवान अपन। श्री रामश्वरम में हमारी चोरी भी हो गई। कोई भागवान हमारी भोली लकर चला गया। शब भगवान अपन ! अर जिशन न्या ह वह ने ल तो हमारा क्या बश ! हमारा क्या बश जो ह शा !

पहला भक्त और महाराज ! कहत ह कि भगवान हमार मन में ह फिर बाहर जान स क्या फायन्।!

पचानन अर ता फायन्। क निए भगवान को पूजा करत हं जो है शा ! फिर भगवान क ै नहीं ह। शब जगह हं फिर भगवान न तारथ क्या बनाए ? जो ह शो तीरथ बनान का मतबल जे कि वहाँ जाकं धरम करा। घर बठ कहीं धरम हाता ह ? धरम हाता ह मन्तन-मशक्कत श।

पहला भक्त मेहनत मसक्कत स धरम हाता ह ? हागा म राज ! लकिन मरा मन क ता ह कि महनत मसक्कत स बाहर जान का मतलब ज ह कि भगवान क भजन करन का वखत चलन फिरन में धाया। नाम का धन तो न मिले पाम का धन चोर ल जाय। भठ पजारियो को पूजो और

पचानन (बीच ही मे) भगत ! आगे मत बक । जिश बात को न जाने, चुप रहा कर । अब देख श्री जगरनाथ जी की मूर्ति लाया हूँ कितनी सु दर ह !

(झोली से मूर्ति निकालते हैं ।)

पहला भक्त महाराज ! आपकी मूर्ति तो बडी सु दर होगी ।

पचानन (मूर्ति देखकर) हाय ! य मूर्ति (रोने के स्वर मे) किशने तोड दी ? हाय ! मरी मूर्ति टूट गई ! हाय ! मेरे भगवान टूट गए !

पहला भक्त भगवान टूट गए ! अर मूर्ति टूट गई ? लेकिन भगवान कस टूट सकते ह ?

पचानन (रुक्षता मे) अर तेरा तो न्मिाग़ फिर गया ह जो ह शो ! (फिर मूर्ति देखकर रोते स्वर में) हाय मेरे अच्छे भगवान थे ! एशी अच्छी आंख ऐसा अच्छा शिर हाय ! मरे कितने अच्छे भगवान थे !

पहला भक्त तो क्या अब भगवान नही रह ? जा भगवान बिछुडा को मिला देता ह टूट हुआ को जोड देता ह वह खु द कैसे टूट सकता ह ? महाराज ! छिमा कीजिए ! आपका ज्ञान अभी कच्चा ह । यहाँ-वहाँ जान स कुछ नहीं होता ! तीर्थों में धक्के खान से कुछ फायदा नहीं । अपन घर में बठो और भगवान् का भजन करो । तुम्हारे भगवान तुम्हारे मन में ही ह । सुना नहीं, सत कबीर जी न कहा ह—

जिन पाँयन भुइ बहु फिर, घूम देस बिदेस ।
पिया मिलन जब होइया आँगन भया बिदेस ॥

पचानन अरे मुझे को ग्यान शिखाता ह जो ह शो ! मूरख कहीं का । यहाँ मेरे भगवान् टूट गए और तीर्थों को विदेश बताता ह ! हाय ! अब फिर जगरनाथ जाऊ मूर्ति लन के लिए ! हाय !

हाय ! मेरे भगवान !

पहला भक्त तो अब भगवान के लिए नहीं मूर्ति के लिए रोइए। नमो नारायण !

(प्रस्थान नेपथ्य मे कबीर का पद)

हंसा पाये मान-सरोवर ताल तलया क्यों डोले।
तेरा साहब ह घट माही बाहर नना क्या खोले ॥
मन मस्त हुआ तब क्या बोले !

(नेपथ्य मे दूर कबीर का पद गूजता रहता है।)

निर्देशक इस भांति सत कबीर ने अपने युग में फले हुए धर्म के आडम्बर को दूर किया। उन्होंने तिल की ओट पहाड देखा—जीवन की छोटी से छोटी घटना में ब्रह्म के दर्शन किए। कबीर सत ही नही परम सत थे भक्त ही नही परम भक्त थे !

(नेपथ्य मे गीत गूजता है।)

कहत कबीर सुनो भाई साधो, साहब मिल गए तिल ओल।
मन मस्त हुआ तब क्या बोल क्या बोले।



सूर-सगीत

पात्र

निर्देशक
हरिराय जी
सूरदास
महाप्रभू
स्त्री
बालक

(पृष्ठभूमि में दूर पर कीर्तन के स्वर प्रभु मेरे अवगुन चित न धरो—गाती हुई मंडली दूर चली जाती है। स्वर धीरे धीरे और दूर होता जाता है।)

निर्देशक महाकवि सूरदास ! तुमने नेत्र रहित होकर भगवान का जो सौन्दर्य देखा है वह संसार के तीक्ष्ण नेत्रों वाला न भी नहीं देखा। भगवान कृष्ण को उनके अलौकिक रूप को तुमने शत शत रेखाओं में साकार किया है शत शत कंठों में स्वरित किया है। जिन राग और रागिनियों में तुमने अपने श्याम की लीलाओं का गान किया है, उनमें प्रेम का सागर लहराया है ! वह प्रेम का सागर जो नेत्रों की अगणित यमुनाओं द्वारा पोषित होकर तरंगित हुआ है। वही तो सूरसागर है। संसार के साहित्य में ईश्वर मानव के इतने समीप कभी नहीं आया। उसने मानव जीवन के छोटे-छोटे कार्यों में भाग लेकर संसार को अपनी स्वाभाविकता से चकित कर दिया। महाकवि ! तुमने अपने श्याम को मानवता के रत्नाकर में लीन कराकर भी रत्नों की भाँति स्वच्छ और ज्योतिर्मय रक्खा। तुम्हारे श्याम यशोदा की गोद में जिस जिस क्षण बैठे उसी क्षण उनकी गोद में संसार की समस्त माताओं की गोद लीन हो गई। राधा के प्रेम ने इन आँसुओं में सारे संसार के नेत्रों की करुणा बिखेर दी और गोप गोपियों के हृदय हृदय नहीं थे, वे तुम्हारे प्रेम के अंकुर थे जिनमें मानवता के कल्याणरूपी विशाल वट वृक्ष की छाया सिमटी हुई थी। उस तुम्हारे श्याम की जो कृपा थी वही तो हमारा पुष्टि मार्ग था। साहित्य में तुमने ब्रजभाषा को

अमर कर दिया। महाकवि! वह ब्रजभाषा जिसका प्रत्येक शब्द ही अंगूर का दाना है जिसमें अनन्त माधुर्य भरा हुआ है उस ब्रजभाषा में तुमने अपने श्याम का माधुर्य भर दिया। माधुर्य में माधुर्य! इस राधा ने अपने अधरामृत से अमृतमयी कृष्ण की लीला का गान किया हो। या श्याममयी यमुना ने अपने श्याम के रूप के प्रतिबिम्ब को अपना भजन बना लिया हो। तुम धन्य हो महाकवि!

हरिराय जी सो सूरदास जी दिल्ली के पास चारि कोस उरे में एक सीही गाम है जहाँ राजा परीक्षत के बेटा जनमेजय ने सर्प यज्ञ कियो है। सो ता गाम में एक सारस्वत ब्राह्मण के यहाँ प्रकट। सो सूरदास जी के जन्मत ही सो नेत्र नहीं हैं। सो या भाँति सौं सूरदास जी को स्वरूप है। सो तीन बेटा या सारस्वत ब्राह्मण के आगे के हते। और घर में बहोत निष्किंचन हतो। वा सारस्वत ब्राह्मण के घर चौथे सूरदास जी प्रकट। सो जब इनके नेत्र न देखे आकार हू नाहीं। सो या प्रकार देखि के वा ब्राह्मण ने अपने मन में बहोत सोच कियो और दुख पायो।

दूसरा स्वर सो ये सूरदास जी महा प्रभून के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय हते। तामें इनकी वार्ता को पार नाही सो कहाँताई कहिये।

हरिरायजी सो या प्रकार ब्राह्मण ने अपने मन में बहोत दुख पायो। सो काहू तें जो जन्म पाछे नेत्र जाय तिनको आँधरा कहिये सूर न कहिये। और ये तो सूर हैं सो माता पिता घर के सब कोई बोलत नाहीं। जाने जो नेत्र बिना को पुत्र कहा। तासों इन सों कोई बोलता नाहीं। सो ऐसे करत सूरदास जी बरस छः के भये तब पिता को वा ग्राम के एक द्रव्यपात्र धनी जजमान ने दोय मोहोर दान में दीनी।

ता पाछें रात्रि को एक कपडा में बाँधि के ताक में धरि के सोयो । तब रात्रि को दोय मोहोरन का मूसा ले गय । सो घर की छाति में बिल्ल में धरि दीनी । तब सवार उठि क देख तो मोहोर नहीं ह । सो तब ता सूरदास के माता पिता छाती कूटन लागे भौर रोवन लाग । सो देखि क सूरदास जी माता पिता सों बोले तुम एसो दुख विलाप क्यों करत हो । जो या भगवान को भजन सुमिरन करो तासों सब भलो होय ।

दूसरा स्वर सो य सूरदास जी महाप्रभून के एसे कृपा पात्र भगवदीय हते । तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं सो कहांताई कहिय ।

हरिराय जी तब माता पिता न सूरदास सो कही जो तू एसी घडी को सूर जनम्यों ह सो हमको वाही दिन सो दुःख हो में जाम बीतत ह । जो हमको काहू दिन सुख नाहीं भयो भौर हमको भर पट अन्न हू नाहीं मिलत ह । तब सूरदास जी बोले जो तुम मोको घर में न राखो तो मैं अब ही तिहारी मोहोर बताय देउ । तब यह सुनि क माता पिता न सूरदास सों कह्यो जो भौर हम को कहा चाहियत ह जो तू हमको मोहर बताय देउ भौर हमारी मोहोर पाव फरि तर मन में आवे तहाँ तू जाइयो । हम तोकों बरजेंगे नाहीं । तब सूरदास बोल जो छाति में बिल्ल के भीतर्र पर धरी ह । तब वह ब्राह्मण सोधि क मोहोर पाय । भौर सूरदास जी तो हाथ में एक लाठी लैक घर सों निकस ।

दूसरा स्वर सो य सूरदास जी महाप्रभून के एसे कृपा-पात्र भगवदीय हुते तात इनकी वार्ता को पार नाहीं सो कहांताई कहियें ।

हरिराय जी सो सीहे सें चल । सो चार कोस ऊपर एक गाम हतो, तहाँ

एक तलाब गाम बाहिर हतो। सो वहाँ एक पीपर के वृच्छ नीचे सूरदास जी आय बठ। यह सुनि क सब लोग गाम के आवन लाग। तब सूरदास की बडी पूजा चली। और लगी रह। खान पान भली भाँति सा आवन लाग्यो। या प्रकार सूरदास तलाव प पीपर क वृच्छ नीच बरस अठारै क भय। सो एक दिन रात्रि को सोवत हते, ता समय सूरदास को वराग्य आयो। तब सूरदास जी अपन मन म बिचारें जो दखो मैं श्री भगवान क मिलन अथ वराग्य कर के घर सो निकस्यौ हतो सो यहाँ माया न ग्रसि लियो। मोकू अपनी जस काहू को बढावनो हतो। जो म श्री प्रभु को जस बढ़ावतो तो आछो। और यामैं तो मरो बिगार भयो तासा अब कब सवारौ होय मैं यहां सू कूच करू।

दूसरा स्वर सो य सूरदास जा महाप्रभून क एसे कृपा पात्र भगवदीय हत तात इनकी वार्ता को पार नाहीं सो कहाँताई कहिय।

हरिराय जी सो एस करत सवारो भयो। पाछ सूरदास एक वस्त्र पहरि कै लाठी ल क उहाँ त कूच किय। सो सूरदास मन में बिचार जो ब्रज ह सो श्री भगवान को धाम ह सो उहाँ चलिये। तब सूरदास उहाँ त चल सो श्री मथुरा जी मैं आय। तहाँ विश्रात घाट प रहि क सूरदास न विचार कियो जो मैं मथुरा जी मैं रहूगो सो यहाँ हूँ मरा माहात्म्य बढ़ गो और यह श्रीकृष्ण को पुरी ह सो यहा मोकौं अपनो माहात्म्य प्रकट करनो नाहीं। सो यह विचारि क सूरदास मथुरा क और आगरे कै बीचौं बीच गऊघाट ह तहाँ आय क श्री यमुना जी कै तीर स्थल बनाय कैं रह। सूरदास को कठ बहोत सुन्दर हतो। सौ गान विद्या में चतुर और सगुन बतायवे मैं चतुर। सौ उहाँ हू बहोत लाग सूरदास जो क पास आवत। उहां हू सेवक

बहोत भय सो सूरदास जगत म प्रसिद्ध भये ।

दूसरा स्वर सो य सूरदास जी महाप्रभून क एसे कृपा-पात्र भगवदीय हते, तात इसकी वार्ता को पार नाहीं सो कहाताई कहिय ।

हरिराय जी सो गऊघाट ऊपर सूरदास रहत तब कितन क दिन पाछ श्री आचाय जी महाप्रभु आपु अडल त ब्रज कू पाव धार । सो कछू दिन म श्री आचाय जी आप गऊघाट पधार । ता समय श्री आचाय जी क सग सेवकन को बहोत समाज हतो सो सब वष्णव सहित श्री आचाय जी आपु श्री यमुना जी म स्नान किय । ता पाछ सध्या-वन्दन करि पाक करनको पधार ता समय एक सेवक सूरदास को तहाँ आयो । सो वान जाय कै सूरदास को खबरि करी

तीसरा स्वर सूरदास जो ! आज यहाँ श्री वल्लभाचाय जी पधार हं । जो जिनन काशी म तथा दक्षिन में मायावाद खडन कियो ह, और भक्तिमाग स्थापन कियो ह ।

सूरदास अहा हा ! श्री महाप्रभू श्री वल्लभाचाय जी पधार ह ! जब श्री वल्लभाचाय जी भोजन करि के निश्चितता सों गादी तकियान न ऊपर विराजैं ता समय तू हम कों खबरि करियो । जो म श्री वल्लभाचाय जी क दशन को चलूगो ।

हरिराय जी सो जब श्री आचाय जी आपु भोजन करि क गादी तकियान प विराज और सवक हूँ सब आस-पास आय बठ, तब वा सेवक न जाय क खबरि करी । तब सूरदास वाही समय अपन सग सभर सवकन को लैं आचाय जी क दशन कों आय । सो तब आय क श्री आचाय जी को साष्टाग दडवत करत ह ।

सूरदास श्री महाप्रभून को सूरदास साष्टाग दडवत करत ह ।

महाप्रभु नमामि हृदय शये लीला क्षीराब्धि शायिन ।
लक्ष्मी सहस्र लीलाभि सव्यमान कलानिधिम् ॥

महाप्रभु सूर ! आओ कछु भगवत जस बरणन करो ।
सूर दास जो आज्ञा, महाराज !

(राग धनाश्री)

प्रभु हौ सब पतितन को टीको ।
और पतित सब दिवस चारि के हौं तो जनमत ही को ।
बधिक अजामिल गनिका तारी और पूतना ही कौं ।
मोहि छाडि तुम और उधारे मिटै सूल क्यों जी कौ ।
कोउ न समरथ अघ करिब कौं खेंचि कहत हौं लीको ।
मरियत लाज सूर पतितन में हमहू तें को नीको ॥

महाप्रभु बहुत सुन्दर गायो सूरदास ! पै सूर ह्वै के ऐसो घिघियात काहे को है ? सो तासों कछु भगवल्लीला बरणन कर ।
सूर दास महाराज ! मैं कछू भगवल्लीला समुझत नाही हूं ।
हरिराय जी तब सूरदास प्रसन्न होय कै श्री यमुना जी में स्नान करि कै अपरस ही में श्री आचार्य जी पास आये । तब श्री आचार्य जी ने कृपा करि के सूरदास कों नाम सुनायो ता पाछें समर्पन करवायो । पाछे आप दसम स्कंध की अनुक्रमणिका करी हती सूरदास को सुनाय । सो सगरी श्री सुबोधिनी जी को ज्ञान श्री आचार्य जी ने सूरदास के हृदय में स्थापन कियो । तब भगवल्लीला जस बरणन करिबे को सामर्थ भयो । तब सूरदास ने श्री आचार्य जी के आगे यह पद करि के गायो

सूर दास (राग देवगंधार)

चकई री चलि चरन-सरोवर जहाँ न रनि वियोग ।
निसिदिन कृष्णबास रस पूरन भव रज नहिं दुख सोग ।
जहाँ सनक से मीन हंस सिव नख रवि प्रभा प्रकास ।
प्रफुलित कमल निमिष नहिं ससि उर गुंजत निगम सुबास ॥

जिहि सर सुभग मुक्ति मुक्ताफल सुकृत अमृत रस पीज ।
सो सर छांडि कुबुद्धि विहगम इहाँ कहा रहि कीज ॥
लक्ष्मी-सहित होति नित क्रीडा सोभित सूरजदास ।
अब न सुहात विषय रस छीलर, वा समुद्र की आस ॥

महाप्रभु बहुत सुन्दर गायो सूरदास ! अब लीला को अभ्यास करो । कछू नन्दालय की लीला गावो । श्री नन्दराय के घर को वर्णन करो ।

सूरदास जो आज्ञा महाराज !

(राग धनाश्री)

जसोदा हरि पालनै झुलावै ।
हलरावै दुलराइ मल्हावै जोइ सोई कछु गावै ।
मेरे लाल को आउ निंदरिया काहे न आनि सुवावै ॥
तू काहे न बेगिहि आवै तोको कान्ह बुलावै ।
कबहूँ पलक हरि मूँद लेत हैं कबहूँ अधर फरकावै ।
सोवत जानि मौन ह्वै के रहि करि-करि सैन बतावै ॥
इहि अंतर अकुलाइ उठे हरि जसुमति मधुरै गावै ।
जो सुख सूर अमर मुनि दुरलभ सो नन्द भामिनी पावै ॥

महाप्रभु बहुत आछो गायो सूरदास ! एसी प्रसन्नता भई मानो सूर नन्दालय को लीला में निकट ही ठाढ़े हैं । सो एसो अच्छो कीर्तन गायो । अब हम तुमकू पुरुषोत्तम सहस्रनाम सुनावेंगे । तब समस्त श्री भागवत की लीला तिहारे हृदय में स्फुरेगी । तामें प्रथम स्कंध सों भागवत सों द्वादश स्कंध सेवत हो गयो तामें दान लीला मान लीला आदि को वर्णन बनि पड़ेगा ।

हरिराय जी ता पाछें गऊघाट ऊपर श्री आचार्य जी आप तीन दिन रहे । सो तब सूरदास ने जितने सेवक किये हुते सो सब श्री आचार्य जी के सेवक कहाये । ता पाछें श्री आचार्य जी आप ब्रज में

पधारें। तब सूरदास हू श्री आचाय जी के सग व्रज में आये। सो प्रथम श्री आचाय जी महाप्रभु आप गोकुल पधारें। तब श्री आचाय जी न श्री मुख सा कह्यो जो सूर ! श्री गोकुल को दशन करो। तब सूरदास जी ने श्री गोकुल को साष्टाग दडवत किये। सो दडवत करत ही श्री गोकुल की लीला सूरदास के हृदय में स्फुरी तब सूरदास जी अपन मन में विचार।

सूरदास श्री गोकुल की लीला म वरनन कसे करों। सो काहे तें जो श्री आचाय जी को मन श्री नवनीत प्रिया जी के स्वरूप के ऊपर आसक्त ह सो श्रीनवनीत प्रिया जी को कोतन श्री गोकुल की बाल लीला को वरनन गायो चाहिये।

(राग बिलावल)

सोभित कर नवनीत लिय।
घुटरुन चलत रेनु-तनु मण्डित मुख दधि लेप किये।
चारु कपोल लोल लोचन गोरोचन तिलक दिये।
लट-लटकनि मनु मत्त मधुप गन मादक मधुहि पिय॥
कठुला-कठ वज्र केहरि नख राजत रुचिर हिय।
धन्य सूर एको पल यह सुख का सत कल्प जिय॥

महाप्रभु बहुत आछो गान करयो सूरदास ! अब यह बात विचारो जो श्री गोवधन नाथ जी को मदिर तो समरायो और सेवा को मडान भयो तातें तुम्हें श्रीनाथ जी के पास रहो चाहिये। तब सम सम के सगर कीतन मडान होगयो और सो आग वष्णव जन तुम्हार पद गाय क कृताथ होत होयग।

सूरदास जो आज्ञा महाराज !

हरिराय जी तब यह कह क सूरदास कू सग ल क श्री आचाय जी आप श्री गोवधन पधार सो ऊपर पधार क श्री नाथ जी क दशन किय। तब श्री आचाय जी आप श्रीमुख सो सूरदास सो कहें

महाप्रभु सूर ! श्रीगोवर्धननाथ जी के दर्शन करो और कीर्तन गावो।
सूरदास जो आज्ञा महाराज !

(राग धनाश्री)

अब हौं नाच्यौ बहुत गोपाल।
काम क्रोध को पहिरि चोलना कंठ विषय की माल ॥
महामोह को नूपुर बाजत निन्दा शब्द रसाल।
भरम भरयौ मन भयौ पखावज चलत कुसंगत चाल ॥
तृष्णा नाद करत घट भीतर नाना विधि दै ताल।
माया को कटि फेंटा बांध्यौ लोभ तिलक दियौ भाल ॥
कोटिक कला काछि दिखराई जल थल सुधि नहिं काल।
सूरदास की सब अविद्या दूरि करौ नन्दलाल ॥

महाप्रभु सूरदास ! अब तो तिहारे मन में कछु अविद्या रही नाहीं जो तिहारी अविद्या सो प्रथम ही श्रीनाथ जी ने दूर कीनी है। तासों अब तुम भगवल्लीला गावो जामें माहात्म्य पूर्वक स्नेह होय। अब तुमको पुष्टि मारग को सिद्धान्त फलित भयो है, तासों अब तुम श्री गोवर्धन धर के यहाँ समय-समय के कीर्तन करो। नित्य प्रातः काल व जगायबे ते लेके सयन पर्यंत कैं दर्शन पर कहो।

निर्देशक इस प्रकार धीरे धीरे सूरसागर का निर्माण हुआ। जिस प्रकार सहस्रदल कमल की एक एक पँखुड़ी विकसित होती है। सूरदास ने श्रीमद्भागवत के दशम स्कंध में श्रीकृष्ण की लीला बड़े विस्तार से कहा है। सूरदास ने बाल्य जीवन के सरस चित्र बड़े सुकुमार भाव से चित्रित किए हैं। शिशु जननी परिजन सखा सखी, ग्राम वधुओं के प्रेममय मनोविनोद की छटा महाकवि के नेत्रों ने देख कर संसार को उपहार स्वरूप प्रदान की है। आप

सूरदास जी के इस मनोवैज्ञानिक शृगार रस में अवगाहन कीजिए। माता यशोदा श्रीकृष्ण का चलना देख कर बडा सुख प्राप्त कर रही हैं

(राग धनाश्री)

श्री कठ चलत देखि जसुमति सुख पावै।
ठुमक ठुमक धरनी पर रेंगत जननी देखि दिखावै॥
देहरी लौं चलि जाति बहुरि फिर फिरि इतही कौं आवै।
गिरि गिरि परत बनत नहिं नांघत सुर मुनि सोच करावैं॥
कोटि ब्रह्मड करत छिन भीतर हरत विलब न लावै।
ताको लिय नद की रानी नाना रूप खिलावै।
तब जसुमति कर टेकि श्याम को क्रम-क्रम क उतरावै।
सूरदास प्रभु देखि-देखि सुर नर मुनि बुद्धि भुलावै॥

निदर्शक जिस ब्रह्म ने समस्त ब्रह्माण्डों का निर्माण किया वह देहरी भी नहीं लांघ सकता और फिर लौट कर माता यशोदा के समीप आ जाता है। कृष्ण का इससे अधिक मानव रूप और क्या हो सकता है! कृष्ण बड़े हुए तब माँ यशोदा ने उनसे कहा —

(राग धनाश्री)

श्री कठ कजरी को पय पियहु लाल तेरि चोटी बढ़ै।
सब लरिकन में सुन सुन्दर सुत तो श्री अधिक चढ़ै॥
जैसे देखि और ब्रज बालक त्यों बल-बैस चढ़ै।
कस केशि बक बैरिन के उर अनुदिन अनल उठै॥
यह सुनि के हरि पीवन लागे त्यों त्यों लियो लटै।
अचवन पै तातो जब लाग्यो रोवत जीभ उठै॥
पनि पीवत ही हँसि टकटोरत झूठे जननि रटै।
सूर निरखि मुख हँसत जसोदा सो सुख उर न कढ़ै॥

निर्देशक श्री कृष्ण ने अपनी चोटी बढ़ाने के लालच में दूध पीना प्रारम्भ किया। किन्तु जब चोटी नहीं बढ़ी तो कृष्ण ने कहा —

(राग रामकली)

बाल कंठ मैया कबहिं बढ़ैगी चोटी ?
किती बार मोहिं दूध पियत भई यह अजहूं है छोटी।
तू जो कहति बल की बेनी ज्यों ह्वै है लांबी-मोटी॥
काढ़त गुहत न्हवावत ओंछत नागिनी सी भ्वै लोटी।
काचो दूध पियावत पचि पचि देत न माखन रोटी॥
सूर श्याम चिरजीवो दोऊ भैया हरि-हलधर की जोटी।

निर्देशक इस प्रकार जननी और बालकृष्ण के परिहास में जीवन का विस्तार होता गया। श्रीकृष्ण ने ग्वाल-बालों के साथ अपनी बाल्यावस्था का विकास किया। माखन उन्हें बहुत अच्छा लगता था। वे माखन के लिये गोपियों के घर भी जाने लगे और अपने बाल बन्धुओं के साथ माखन खाने लगे। गोपियों ने माता यशोदा के घर आकर उलाहना दिया —

(राग बिलावल)

स्त्री कंठ तेरो लाल मेरो माखन खायो।
दुपहर दिवस जानि घर सूनो ढूंढि ढंढोरि आपही आयो।
खोल किवार सून मन्दिर में दूध दही सब सखन खवायो॥
सींके काढ़ि खाट चढ़ि मोहन कछु खायो कछु लै ढरकायो।
दिन प्रति हानि होत गोरस की यह ढोटा कौन ढंग लायो॥
सूरदास कहती ब्रजनारी पूत अनोखो तै ही जायो।

निर्देशक इस प्रकार घर के स्वाभाविक वातावरण में श्रीकृष्ण किशोर हुए। वे समस्त गोकुल के प्रीति पात्र बने। वृषभानु किशोरी राधा ने कृष्ण के जीवन में प्रेम की सरिता तरंगित की। हमारे साहित्य और दर्शन में राधा का प्रेम भक्ति की चरम

सीमा है। सूर सागर की सबसे कोमल और गतिशील लहर राधा के प्रेम की है।

(राग कामोद)

सूरदास नयो नेह नयो गेह नयो रस नवल कुंअरि वृषभानु किशोरी।
नयो पीतांबर नई चूनरी नई-नई बूंदनि भीजति गोरी॥
नये कुंज अति पुंज नए द्रुम सुभग यमुन जल पवन हिलोरी।
सूरदास प्रभु नव रस विलसत नवल राधिका यौवन भोरी॥

निर्देशक श्रीकृष्ण ने गोकुल में अनेक लीलाएं कर गोकुल वासियों को सुख दिया। उन्होंने कंस के भेजे गये असुरों का वध कर सब की रक्षा की। रूढ़ियों में ग्रस्त जनता को इन्द्र पूजा का निषेध कर गोवर्धन की पूजा का और जब इन्द्र ने ब्रज पर प्रलय वर्षा की तो गोवर्धन धारण कर उन्होंने लोक रक्षा का उज्ज्वल आदर्श उपस्थित किया। कृष्ण सर्वप्रिय थे। अपनी मधुर वंशी के स्वर में वे प्रत्येक को अपनी ओर आकर्षित कर लेते थे। उन्होंने राधा और गोप गोपी जनों के साथ यमुना-तट पर रास रचाया। सूरदास ने कितने मधुर स्वर से उसका वर्णन किया है —

(राग देवगंधार)

सूरदास दोउ राजत स्यामा स्याम।
ब्रज युवती मंडली विराजत देखति सुरगन वाम॥
धन्य धन्य वृन्दावन को सुख सुर-पुर कौन काम।
धनि वृषभानु सुता धनि मोहन धनि गोपिन को नाम॥
इनकी को नामी सरि ह्वै है धन्य शरद की याम।
कबहूँ सूर जनम ब्रज पावै यह सुख नहिं तिहुँ धाम॥

निर्देशक सचमुच! श्रीकृष्ण के राज में जो सुख था वह तीनों लोकों में नहीं था। इस सुख और आनन्द में विघ्न हुआ। कंस ने

कृष्ण को मथुरा बुलाने के लिये अक्रूर को भेजा और कृष्ण अपने प्रेमी गोकुल वासियों को छोडकर मथुरा चले गये। राधा माता, गोप और गोपियाँ सब विरह में मग्न हो गई। इस प्रसग का वर्णन महाकवि सूरदास ने अनेक भाँति से किया है। सहस्रा पदों में यह खोजना कठिन है कि कौन सब से अधिक सुन्दर पद है —

(राग सोरठ)

ऊधौ कठ मेरे कुवर कान्ह बिनु सब कछु वसेहि धरयो रहै।
को उठि प्रात होत लै माखन को कर नेत गहै॥
सून भवन यशोदा सुत के गुनि गुनि शूल सहै।
दिन उठि घेरत ही घर ग्वालिनि उरहन कोउ न कहै॥
जो ब्रज में आनन्द हुतो मुनि मन माहू न कहै।
सूरदास स्वामी बिनु गोकुल कौडी हू न लहै॥

निर्देशक कृष्ण मथुरा से लौट कर नहीं आए। गोपियों ने उन्हें अगणित सदेश भेजे किन्तु परिस्थितिवश कृष्ण गोकुल नहीं आ सके। उन्हें नन्द यशोदा राधा और गोपियों के हृदय की अनुभूति थी। उन्हें धय देने के लिय कृष्ण ने उद्धव को भेजा कि वे सासारिक मोह में न पड कर ब्रह्म की सच्ची उपासना करें, योग करें। किन्तु गोपियों का प्रेम योग सभी योगों से बढकर निकला। राधा के समीप उडते हुये भ्रमर को सकेतकर सूरदास ने उद्धव और कृष्ण पर घटित होने वाले जो भ्रमरगीत लिखे हैं, वे भावना जगत में अमर हैं। सूरदास! तुम जीवन के महाकवि हो! आज शताब्दियों के बीत जाने पर भी तुम्हारा काव्य-जीवन को अनन्त अनुभूतियाँ लिए हुए है!

• • •

भारतेन्दु-मण्डल

पात्र

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
श्रीनिवास दास
कार्तिकप्रसाद खत्री
बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन'
ठाकुर जगमोहन सिंह
प्रतापनारायण मिश्र
राधाकृष्ण दास
बालकृष्ण भट्ट
किशोरीलाल गोस्वामी
मल्लिका
निर्देशक

काल सन १८७३
स्थान पेनी रीडिंग क्लब
समय सध्या समय सात बजे
निर्देशक निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल ।
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को सूल ॥

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र युगान्तरकारी साहित्यकार थे। अपनी प्रतिभाशालिनी दृष्टि से उन्होंने परम्परा और परिस्थिति दोनों को ही परखा और भाषा को शक्ति सम्पन्न कर उन्होंने जो साहित्य लिखा वह युग वाणी के रूप में मान्य हुआ।

सध्या समय सात बजे भारतेन्दु हरिश्चन्द्र कक्ष में बैठे हुए सोच रहे हैं। उन्होंने इस पेनी रीडिंग क्लब में अपने साहित्यिक मित्रों को आमंत्रित किया है जिनमें सर्वश्री श्रीनिवास दास कार्तिकप्रसाद खत्री बद्रीनारायण चौधरी प्रेमघन ठाकुर जगमोहन सिंह प्रतापनारायण मिश्र राधा कृष्ण दास बालकृष्ण भट्ट तथा किशोरीलाल गोस्वामी प्रमुख हैं। भारतेन्दु के साथ ये साहित्य के नवरत्न ऐसे हैं जिनकी ज्योति साहित्य के इतिहास में कभी धूमिल नहीं होगी। इस समय भारतेन्दु की चिन्ता धारा इस प्रकार प्रवाहित हो रही है —

भारतेन्दु (सोचते हुए) राजा शिवप्रसाद सितारे-हिन्द ने 'राजा भोज का सपना' लिखते हुए जगह-जगह पर ऐसी भाषा लिखी है— इसी अरसे में चोबदार ने पुकारा। चौधरी इन्द्रदत्त निगाह रूबरू श्री महाराज सलामत ! भोज ने आँख उठाई।'

महाराज भाज न हुए बादशाह सलामत जलालुद्दीन अकबर के सम्बन्धी हो गए और राजा लक्ष्मण सिंह ने अपने शकुंतला नाटक के अनुवाद में लिखा— मातलि ! बतलाओ तो पूरब पश्चिम समुद्र के बीच यह कौन सा पहाड़ है जिससे सुनहरी धारा ऐसी निकलती है मानो सन्ध्या के मेघ से अंगला। इस लिखने की भाषा में बड़ा झगड़ा है। कोई कहते हैं कि उर्दू शब्द मिलने चाहिए कोई कहते हैं संस्कृत शब्द होने चाहिए और अपनी अपनी रुचि के अनुसार सब लिखते हैं और इसके हेतु कोई भाषा कभी निश्चित नहीं हो सकती। हम इस स्थान पर वाद नहीं किया चाहते कि कौन भाषा उत्तम है और वही लिखनी चाहिए पर हाँ मुझसे कोई अनुमति पूछे तो मैं कहूँगा कि कुछ ऐसी भाषा लिखी जाय तो उत्तम है —

पर मेरे प्रीतम अब तक घर न आए। क्या उस देस में बरसात नहीं होती या किसी सौत के फन्दे में पड़ गए। कहाँ तो वह प्यार की बातें कहाँ एक संग ऐसा भूल जाना कि चिट्ठी भी न भिजवाना ! हा ! मैं कहाँ जाऊँ कैसी करूँ मेरी तो ऐसी कोई मुँहबोली सहेली भी नहीं कि उससे दुखड़ा रो रो सुनाऊँ कुछ इधर उधर की बातों ही से जी बहलाऊँ !
(सोचते हुए) मेरी ऐसी भाषा प्रसिद्ध तो बहुत हो गई है। सोचता हूँ इसी में मैं अपनी चन्द्रावली नाटिका लिखूँ। आज अपनी रीडिंग क्लब में मित्रों का जमाव है। देखूँ उन्होंने किस तरह मेरी भाषा को स्वीकारा है। इस समय मेरी कविता की भाषा ब्रजभाषा को लेकर ही चल रही है। (नेपथ्य में स्त्री-कंठ से घनाक्षरी को राग से पढ़ने की गुनगुनाहट) यह तो मल्लिका का स्वर है !

मल्लिका (नेपथ्य से घनाक्षरी स्वर से पढ़ती है ।)

बान परे कोस चलि चलि थकि गए पाँव
सुख के कसाले परे ताले परे नस के ।
रोम राय ननिन में हाते परे जाल परे
मन्न के पाले परे प्रान परबस के ।
हरीचन्द अंग हू हवाले परे रोगन के
सोगन के माले परे तन बन खसके ।
पगन में छाले परे नाँघिबे को नाले परे
तऊ लाल लाले परे रावरे दरस के ।

हरिश्चन्द्र मल्लिके ! तुम्हारा कंठ बहुत मधुर है । मैं तुम्हें इसीलिए तो चाहता हूँ कि तुम्हारे कंठ में मेरे प्रेम और भक्ति की भावना उतरकर मुझे स्वप्न में अपना रूप दिखला देती है ।

मल्लिका (खिलखिलाकर) अपना रूप ! तुम्हारा रूप तो ऐसा है कि कहने में आता ही नहीं है । भक्ति की कविता प्रेम की कविता और आजकल की कविता सब जगह तुम ही तुम तो हो । तुम्हारी कविता सब बातों को छूकर ही चलती है । अब देखो तुमने जो मुकरियाँ लिखी थीं वे कितनी सच्ची और चित्त को प्रसन्न करने वाली हैं । सुनाऊँ ? अंगरेज की मुकरी !

भीतर भीतर सब रस चूसै,
हँसि-हँसि के तन-मन धन मूसै ।
जाहिर बातन में अति तेज
क्यों सखि ! सज्जन ? नहिं अंगरेज ॥

अंगरेजों पर सुनिए—

सब गुरु-जन को बुरो बतावै
अपनी खिचड़ी अलग पकावै ।

भीतर तत्व न झूठी तेजी
क्या सखि ! सज्जन ? नहीं अँगरेजी ।

पुलिस पर सुनाऊ ?

रूप दिखावत सरबस लूट
फन्दे में जो पड न छूट
कपट कटारी हिय म हूलिस
क्या सखि ! सज्जन ? नहिं सखि पूलिस

और रेल पर तो बडी विचित्र मुकरी ह —

सीटी देकर पास बलाव
रुपया न तो निकट बिठाव
ले भाग मोहि खलहि खल
क्यों सखि ! सज्जन ? नहिं सखि ! रेल ।

हरिश्चन्द्र मुझ तो अपनी कानून की मकरी सदा याद रहती ह—

नई-नई नित तान सुनाव
अपन जाल में जगत फमाव
नित नित हमें कर बल सून
क्या सखि ! सज्जन ? नहिं कानून !

मल्लिका और मन तो आप का यह दोहा प्राणो में बसा लिया ह —

(राग से) भरित नह नवनीर नित बरसत सुरस अथोर ।
जयति अपूरब घन कोऊ लखि नाचत मन मोर ॥

हरिश्चन्द्र मल्लिके ! लोग चाह जो कहें पर म तो यह कहता हूँ कि मरी कृष्ण भक्ति तुम्हारी मधुर वाणी में सजीव हो उठती ह । जब अपन प्यार कृष्ण की भक्ति करता हूँ तो तुम्हें बुला भता हूँ । तुम्हारे मधुर कठ में मेरी कविता—

'नव उज्ज्वल जलधार हार हीरक सी सोहति !

मल्लिका (हसकर) तो मैं आपकी कृष्ण भक्ति की सती हूँ ?

हरिश्चन्द्र तुम जा समझो ! किन्तु इस समय जाओ !

मल्लिका क्या ? क्या कृष्ण भक्ति समाप्त हो गई !

हरिश्चन्द्र वह तो कभी समाप्त नहीं हो सकती, मल्लिके ! किन्तु आज 'पेनी रीडिंग क्लब' की बैठक में मैं अपने अन्य मित्रों की भाषा सुनूँगा। वे सब आ रहे होंगे।

मल्लिका मैं भी साथ रहूँ ?

हरिश्चन्द्र भक्ति एकान्त की भावना है। उसे डंके की चोट नहीं कहनी चाहिए।

मल्लिका अच्छा यह मेरे हृदय की चोट ही सही ! मैं जाती हूँ ! तुम्हारी भक्ति की एक कविता ही कहती हूँ—

ब्रज के लता पता मोहि कीजे।
गोपी पद पंकज पावन की
रज जामें सिर भीजे॥

[गाते-गाते प्रस्थान]

हरिश्चन्द्र (चिंता में) मल्लिके ! तुम नहीं जानती और सारा संसार भी नहीं जानता कि हरिश्चन्द्र ने चन्द्रावली के रूप में ही मल्लिका को देखा है।

(बाहर आने की ध्वनि होती है।) सब लोग आ गये क्या ? मैं उनको द्वार पर लूँ।

(श्री निवासदास, कार्तिकप्रसाद खत्री, बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन ठाकुर जगमोहन सिंह, प्रतापनारायण मिश्र, राधाकृष्ण दास बालकृष्ण भट्ट और किशोरीलाल गोस्वामी का प्रवेश)

सब लोग बाबू साहब जय गोपाल जी की !

हरिश्चन्द्र जय गोपाल जी की ! आइए। बड़ी देर से आँखें बिछाए हूँ।

श्रीनिवास आँखें तो हम लोगों की तरस रही हैं आपके दर्शनों के लिए।

आपने पेनी रीडिंग क्लब स्थापित कर हम लोगों के लिए बड़ी सुविधा कर दी कि जो कुछ हम लोग साहित्य में लिखें वह एक दूसरे को सुना दें कि भाई, हम लोग राह-कुराह तो नहीं जा रहे हैं।

कार्तिकप्रसाद राह-कुराह क्या जायेंगे बाबू साहब का पत्र कवि-वचन सुधा सतरी की तरह सब लोगों को सच्चा रास्ता जो दिखला रहा है !

बदरीनारायण और बाबू साहब ने हिंदी-वर्द्धिनी सभा में हिंदी भाषा पर जो व्याख्यान दिया था उसने तो भाषा के मैदान में हरिश्चन्द्री हिंदी की छाप ही लगा दी।

प्रतापनारायण भाई ! उसमें पूज्यपाद हरिश्चन्द्र जी ने बारह हिन्दी भाषा के जो नमूने दिए हैं वे तो लाजवाब हैं। उसमें सातवें नम्बर की भाषा जो पुरबिया की बोली या काशी की देश भाषा है वह मुझे बहुत अच्छी लगी —

'के साहब आप कब्बो कलकत्ता गए हौ कि नहीं। जो न गये हो तो एक बेर हमरे कहे से आप ऊ सहर के जरूर देखो। देखै ही लायक है। आप से हम ओकी तारीफ का करी। अपने आँखी से देखे बिना ओ का मजा नहीं मिलता। आप तो बहुत परदेश जा थो। एक बेर ओहरौ झुक पड़ो।

कार्तिकप्रसाद वाह ! क्या कहना है ! कलकत्ते की बात तो मुझसे पूछो।

हरिश्चन्द्र ठीक है सौभाग्य से हिन्दी के प्रेमी सभी शहरों में हैं। ये श्रीनिवासदास जी दिल्ली में रहते हैं तो कार्तिकप्रसाद जी कलकत्ते में। प्रतापनारायण जी कानपुर में तो ठाकुर जगमोहन सिंह मध्यप्रान्त के विजयराघोगढ़ में। बदरीनारायण चौधरी मिरजापुर में रहते हैं और श्री बालकृष्ण भट्ट जी प्रयाग में। श्री किशोरीलाल जी और राधाकृष्ण दास तो काशी

में ही निवास करते हैं।

बालकृष्णभट्ट आपकी कृपा से जैसे नदियों का जल गंगाजी में मिलकर पवित्र हो जाता है वैसे ही आपके पास आकर हम सब पवित्र हो गए!

हरिश्चन्द्र भट्ट जी काशी ही में गंगाजी नहीं हैं प्रयाग में भी हैं।

राधाकृष्ण दास यह बात तो आपने खूब कही।

किशोरीलाल तो फिर आज इस पेनी रीडिंग क्लब की गोष्ठी किसी उपन्यास की स्टोरी की तरह होगी?

हरिश्चन्द्र अगर आप उसके नायक बनना पसन्द करें।

जगमोहन हाँ नायक तो किशोरीलाल ही बन सकते हैं।

प्रतापनारायण किशोरीलाल जी नायक यानी हीरो। मैंने 'कलि कोष' में हीरो का अर्थ दिया है। ही यानी हँसना जैसे ही ही ही ही और रो यानी रोना मतलब यह कि जो बात-बात में हँसते रोने में बराबर हों वह नायक।

बदरीनारायण तो इनके उपन्यासों में नायक लोग बारी-बारी से हँसते रोते ही तो हैं।

हरिश्चन्द्र हमें तो रोना है दूसरों के लिए और हँसना है अपने आप पर। लेकिन आज पेनी रीडिंग क्लब में जिन हिन्दी प्रेमियों ने जो कुछ लिखा है वह सबके बीच में सुनाना चाहिए। देखें, जिस तरह की हिन्दी की कल्पना मैं कर रहा हूँ उस तरह आप लोगों की रचनाओं में आ रही है या नहीं।

प्रतापनारायण आपकी हिन्दी न चलेगी तो क्या वो चलेगी जो बनारस अखबार में निकलती है? अगर अखबार के ख को र और व करके पढ़ें तो उसमें अरब पढ़ना ही आ जाता है।

किशोरीलाल अगर हमें प्रतापनारायण जी की प्रतिभा मिलती तो हम बात-बात में उपन्यास लिख डालते।

जगमोहन अच्छा तो अब बात-बात में ही हिन्दी की बात हो जाय जो बाबू साहब न कही है।

राधाकृष्ण अच्छी बात है तो श्रीनिवास जी पहले आप सुनाइये।

श्रीनिवास लखनऊ का तकल्लुफ यदि करूँ तो कहूँ—जनाब पहले! आप फरमाइये।

कार्तिकप्रसाद यह पेनी रीडिंग क्लब है लखनऊ नहीं। अच्छा श्रीनिवास जी सुनाइए! आपका साहित्य जानने के लिए मेरी आँखें अखबार का कालम बन रही है।

बदरीनारायण अगर जल्दी नहीं सुनायेंगे तो मैं प्रेमघन बनकर आपके सिर पर बरस पड़ूँगा।

श्रीनिवास अच्छी बात है! सुनाता हूँ भाई! सुनाता हूँ। देखिए मैं एक नाटक लिखने की बात सोच रहा हूँ।

कार्तिकप्रसाद क्या कहना है शिष्य हो तो ऐसा हो।

श्रीनिवास अच्छा तो सुनिए। रणधीर प्रेम मोहिनी नाटक का मैंने जो प्रथम दृश्य लिखा है उसमें चपा और प्रेम मोहिनी की बात चीत है। जरा भाषा पर ध्यान दीजिये —

[पढ़ते हैं।]

चपा इसमें संदेह नहीं सब नगर निवासियों के मन में उनका प्रेम छाप सा गई है परन्तु राजकुँवर निश्चय हुए बिना तो यह राजकुमारी के लायक न ठहर सकता—

प्रेम मोहिनी (मन में) यह सब बातें मन क्या सुनी मनुष्य का मन एक सरोवर के समान है। जैसे सरोवर में तारे आकाश चन्द्रमा वृक्ष और पर्वतादिक की अनेक परछाँही पड़ती है उसी तरह मनुष्य के मन में भी किसी बात का नया विचार आन से पहले के सब विचारों में अन्तर पड़ जाता है। हा! यह सब जानने का फल है जो इस बात की भनक मेरे

कान तक न पहुँची होती तो मुझको इस पचायती से क्या काम था !

हरिश्चन्द्र बहुत सुन्दर, बहुत सुन्दर ! भाषा रेशम के धागे में मोतियों की तरह गुथी है ! यही हिन्दी आगे चलेगी।

सम्मिलित स्वर बहुत सुन्दर !

किशोरीलाल सरल भाषा में कितनी गहरी बात कह दी है।

हरिश्चन्द्र अच्छा कार्तिकप्रसाद जी कहो ! अब आप अपनी भाषा का परिचय दीजिए।

कार्तिकप्रसाद मैंने समय का बर्ताव नाम से एक नया निबन्ध लिखा है। सुनिए —

'आगामि कल' यह वाक्य बड़ा ही भयानक है क्योंकि इन दो शब्दों के भीतर कितने ही पाप प्रतिज्ञा भंग निराशाएं कामों में ढील और जीवन की हानियाँ छिपी हैं कि जिन्हें सोचकर चकित होना पड़ता है। किसी बुद्धिमान ने कहा है कि 'आगामि कल' यह शब्द केवल मूर्ख और अज्ञ लोगों के ही वाक्य में लिखा है। सच है ज्ञानी मनुष्य आगामि कल किसे कहते हैं यह जानते ही नहीं क्योंकि यह शब्द अभी तक उनके व्यवहार में नहीं आया है। वे तो बीते हुए कल और आज इन्हीं दोनों शब्दों को भली भाँति से जानते हैं। इस कारण से जो दिन कि उनके हाथ से निकल गया है और उसका उत्तम रीति से उनसे बर्ताव नहीं हुआ है, उस पर वे खेद करके आज अर्थात् वर्तमान समय को अच्छे कामों में लगाकर दूने उत्साह और साहस के साथ कार्य का आरम्भ करते हैं।

हरिश्चन्द्र बहुत सुन्दर भाषा का प्रवाह है।

बालकृष्ण निबन्ध लिखा जाय तो इस प्रकार लिखा जाना चाहिए !

यह पत्र का अग्रलेख होगा !

जगमोहन सिंह सचमच कल का खेल आज की प्रतिज्ञा होनी चाहिए !

हरिश्चन्द्र अच्छा ठाकुर जगमोहन सिंह जी ! आप अपनी रचना सुनाइए।

जगमोहनसिंह जसी आज्ञा ! बहुत दिनों से एक स्वप्न लिखने की बात सोच रहा था।

राधाकृष्ण राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द की भाँति राजा भोज का सपना !

किशोरीलाल हाँ आप भी राजा साहब हैं।

जगमोहन सिंह नहीं कहाँ वे और कहाँ मैं ! मैं श्यामा-स्वप्न लिखने की बात सोच रहा हूँ। उसके प्रथम याम का स्वप्न इस प्रकार है

आज भोर यदि तमचोर के रोर से जो निकट की खोर ही में जोर से सोर किया नींद न खुल जाती तो न जाने क्या-क्या वस्तु देखने में आती। इतने में ही किसी महात्मा ने ऐसी परभाती गाई कि फिर वह आकाश-सम्पत्ति हाथ न आई। वाह रे ईश्वर ! तेरे सरीखा जंजालिया कोई जंजालिया भी न निकलेगा। तेरे रूप और गुण दोनों वर्णन के बाहर हैं। आज क्या-क्या तमाशे दिखलाए। यह तो व्यर्थ था क्योंकि प्रतिदिन इस संसार में तू तमाशा दिखलाता ही है। कोई निराशा में सिर पीट रहा है कोई जीवाशा में भूला है कोई मिथ्याशा ही कर रहा है कोई किसी से नेत्र के चैन का प्यासा है और जन विहीन दीन-मीन के सदृश तड़प रहा है— बस इन सब बातों का क्या प्रयोजन ?

हरिश्चन्द्र वाह ! इस गद्य में तो पद्य का ही आनन्द है। इतनी मधुर भाषा हिन्दी में और कहाँ शायद ही मिले। आप अपना श्यामा-स्वप्न शीघ्र ही पूरा कीजिए।

श्रीनिवास यह स्वप्न सच हो जाय तो क्या कहना !

बालकृष्ण बड़ी सरस भाषा है।

हरिश्चन्द्र अच्छा बालकृष्ण भट्ट जी! अब आप अपना गढ़ा हुआ गद्य सुनाइये।

बालकृष्ण जैसी आज्ञा। पुरुष भहरी और स्त्रियां भहर हैं।

प्रतापनारायण बहुत सोच समझकर आपने नाम जाँचा।

बालकृष्ण सुनिए—एक बड़ी पुरानी कहानी है। शिशुता के झलक के मिटते ही ज्यों ही तरुणाई की गरमाहट का संचार होने लगता है कि यह भहरी चारों ओर अपने भहर की खोज में आँखें दौड़ाने लगता है। यह लाचार केवल इतने ही से हो जाता है कि किसी किसी अवस्था में समाज के जटिल बन्धन इसे ऐसा जकड़ लेते हैं कि यह अपने स्वच्छाचार को बर्ताव में नहीं ला सकता।

हरिश्चन्द्र मनुष्य की प्रकृति का कितना सुन्दर चित्रण आपने किया है! अब प्रतापनारायण जी अपना मनोरंजक गद्य सुनाने की कृपा करें।

राधाकृष्ण प्रतिभापूर्ण मनोरंजन का तो आपको वरदान है।

प्रतापनारायण बशर्ते कि वर का भय दुलहा न हो! (हँसी) अच्छा तो सुनिए। मैंने नारी पर एक लेख लिखा है।

किशोरीलाल आपने मेरे मन का विषय चुना।

प्रतापनारायण किशोरीलाल जी कहिए तो नारी को किशोरी से वन्दन दूँ। सुनिए—

न का अर्थ है नहीं और अरि कहते हैं शत्रु को। भावार्थ यह हुआ कि न यह शत्रु है न इससे अधिक कोई शत्रु है। जहाँ तक हो इन्हें स्वतन्त्रता न सौंपो। अच्छे वैद्य के द्वारा पथ्यापथ्य विचार द्वारा, म्यूनिसिपलिटी द्वारा सदुपदेश द्वारा नारी मात्र को अनुकूल रखना ही श्रेयस्कर है। तनिक

भी "यतिक्रम पाओ तो वद्यराज से कहो—महाराज नारी देखिए। मुन्ल्ल के महतर स कहो कि चिलम पीन को यह पसा ना ओर नारा अभी साफ करो। घर की लक्ष्मी से कहो—ना री ! एसा उचित नही। कोई अफीम खा गया हो तो उसके सम्बन्धी से कहो कि नारी का साग पिलाना चाहिए। इसी प्रकार सदव नारी का विचार और भगवान मन्नारी (कामदेव के मदनान्तक शिव) का ध्यान रक्खा करो नही महा अनारी हो जावोगे।

हरिश्चन्द्र वाह ! आपने ता ससार को ही नारीमय कर दिया।

किशोरीलाल नही तो कहते ह—महा अनारी हो जावोगे।

बदरीनारायण वाह ! गद्य म भी अलकार की घटा है !

हरिश्चन्द्र किशारीलाल जी ! अब आप कुछ सुनाइए।

किशोरीलाल मन ता उपन्यास लिखे ह। इतने थोडे समय में न सुना पाऊगा। किसी दिन पेनी रीडिंग क्लब का सबूत दे दूगा !

प्रतापनारायण किशोरीलाल जी के चरणों म तो सम्पूर्ण जीवन अर्पित किया जा सकता है।

हरिश्चन्द्र अच्छी बात ह। तो अब बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन की कविता का आनन्द लिया जाय।

बदरीनारायण पहले राधाकृष्णदास जी अपने नाटक का अश सुना दें।

राधाकृष्णदास भया के सामने सुनाने का साहस नहीं होता। फिर कभी सुना दूगा। आप सुनाइए प्रेमघन जी !

बदरीनारायण अच्छा ! देखिए मैंने झूलन की एक कजली लिखी है —

झूलत कालिन्दी के कूलन झूलन चलिए नन्दकिशोर।

वृन्दावन कुसुमित कदम्ब की कुजनि नाचत मोर।

कूकत कोयल चहूँकत चातक दादुर कीनें शोर।
सरस सुहावन सावन आयो घहरत घिरि घन घोर।
अँधियारी अधिकात चपला चमकि रही चित चोर।
मन भाई छाई छबि सी छिति हरियाली चहुँ ओर।
लहरावत द्रुमलता चलत पुरवाई पवन झकोर।
चलो उत जनि विमल करो मन ठानत हठ बरजोर।
प्रिया प्रेमघन ! बरसावहु रस द आनन्द अघोर।

हरिश्चन्द्र वाह ! वा ! वाह ! शब्दों के ध्वनि में ही अर्थ ध्वनित हो गया। कितनी मधुर कविता है !

किशोरीलाल इस कविता से बदरीनारायण जी का उपनाम प्रेमघन सार्थक है।

प्रतापनारायण प्रेमघन क्या प्रेमघनाधन होता तो और भी अच्छा था (हँसी) प्रेमघनाघन !

बदरीनारायण अपना सिर बचाए रहियेगा।

कार्तिकप्रसाद अब हम सब भारतेन्दु जी से प्रार्थना करेंगे कि वे अपनी एक सरस रचना सुनावें।

श्रीनिवास बाबू साहब ! आपने खड़ी बोली में कविता लिखी हो तो वह भी सुनावें।

हरिश्चन्द्र कुछ तो लिखी है ! एक बेर एक दोहा लिखा था —

भजन करो श्रीकृष्ण का मिलकर के सब लोग।
सिद्ध होयगा काम औ छूटेगा सब सोग॥

अब देखिए यह कितनो भोंडा कविता है। मैंने इसका कारण सोचा कि खड़ी बोली में कविता मीठी क्या नहीं बनती। तो हमको सबसे बड़ा यह कारण जान पड़ा कि इसमें क्रिया इत्यादि में प्रायः दोष मात्रा होती है। इससे कविता अच्छी नहीं बनती। आप लोगों को स्पष्ट हो जायगा कि

कविता की भाषा निस्सदह ब्रजभाषा ही ह और दूसरी भाषाओं की कविता इतना चित्त को नही पकडती ।

बदरीनारायण सत्य ह सत्य ह आप ब्रजभाषा की ही कविता सुनाइय ।

जगमोहनसिह अपन प्रिय विषय चन्द्रावली की ही एक कविता सुनाइए ।

हरिश्चन्द्र जसी आप लोगा की इच्छा । (स्वर से सुनाते हैं ।)

जग जानत कौन ह प्रेम विथा
केहि सा चरचा या वियोग की कीजिए ।
पुनि को कही मान कहा समुझ काउ
क्या विन बात की रारहि लीजिए ।
नित जो हरिचद जू बीत सह
बकि क जग क्या परतीतहि छीजिए ।
सब पूछत मौन क्या बठि रहा
पिय प्यार ! कहा इह उत्तर दीजिए ॥

सम्मिलित स्वर वाह वाह ! बहुत सुन्दर !

जगमोहनसिह प्रम की इस गगा में जो नहाय वह धन्य !

प्रतापनारायण एक ग्रौर सुना दीजिए प्रभ !

बदरीनारायण हाँ एक ग्रौर । एक से प्यास नही बुझी ।

हरिश्चन्द्र सुनिए—

इन दुखियान का न सुख सपन हू मिल्यौ
यौं हा सदा व्याकुल विकल अकुलायँगी ।
प्यार हरिचन्द जू की बीती जानि ग्रौधि जो प
जन प्रान तऊ य तो सग न समायँगी ।
देख्यौ एक बारहू न नन भरि तोहि यात
जौन जौन लाक जहं तहौं पछितायँगी ।

विना प्रान प्यारे भये दरस तुम्हारे हाय,
देख लीजो आँखें ये खुली ही रहि जायँगी ।

सम्मिलित स्वर वाह, अत्यन्त सुन्दर ! कितनी सुन्दर !
जगमोहनसिंह देखि लीजो आँखि म खुली ही रहि जायँगी ।
बालकृष्ण भट्ट कितनी मर्मस्पर्शी बात कही है !
किशोरीलाल इससे आगे कोई और क्या लिखेगा ।
श्रीनिवास हमारे बाबू साहब हिन्दी भाषा में अमर होंगे ।
कार्तिकप्रसाद सब सज्जन के मान को कारन इक हरिचन्द ।
जिमि सुभाव दिन रैन को कारन नित हरिचन्द ॥
हरिश्चन्द्र यह सब सरस्वती देवी की कृपा है ।
निर्देशक इस भाँति भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी भाषा का रूप अनेक प्रकार से सँवारा । अपने प्रेम और सौजन्य से उन्होंने हिन्दी के अनेक सेवियों को प्रोत्साहित कर उनसे साहित्य की रचना कराई । वे हरिश्चन्द्र थे सूर्य और चन्द्र दोनों ही । और उन्होंने हिन्दी भाषा और साहित्य को सूर्य की भाँति पोषित कर चन्द्र की भाँति अमृतमय बना दिया ।
परम प्रेम निधि रसिकवर अति उदार गुनखान ।
जग-जन रंजन आशु कवि को हरिचन्द समान ॥



प्रसाद-परिचय

पात्र

कर्ण
दुर्योधन
विदूषक
राक्षस
दुःशासन
पद्मावती
उदयन
वासवदत्ता
दासी
पर्णदत्त
नागरिक
देवसेना
स्कन्दगुप्त
प्रतिन्यास

[स्थान—काशी, सन १८८९। सूघनी साहु के नाम से प्रसिद्ध घराने में एक शिशु उत्पन्न हुआ। उसका नाम रक्खा गया जयशंकर, जो आगे चलकर श्री जयशंकर प्रसाद के नाम से हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ नाटककार प्रसिद्ध हुआ। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में ही जयशंकर 'प्रसाद' ने लिखना शुरू कर दिया और उनकी रचनाएं 'भारतेन्दु' और 'इन्दु' में जगमगाने लगीं! यह कविता की कली है, यह कहानी का फूल है, यह उपन्यास का फल है और यह नाटक की क्यारी है। जयशंकर 'प्रसाद' सभी कुछ लिख सकते थे। उनकी प्रतिभा सूरज की एक किरण थी जिसमें साहित्य के भाँति भाँति के रंग छिपे हुए थे।

देखिए, ये प्रसाद जी के नाटक हैं। ये खुद आपके सामने बोल सकते हैं—]

एक स्वर राज्यश्री।

दूसरा स्वर विशाख।

तीसरा स्वर अजातशत्रु।

चौथा स्वर जनमेजय का नाग-यज्ञ।

पाँचवाँ स्वर ध्रुवस्वामिनी।

छठा स्वर स्कंदगुप्त।

सातवाँ स्वर चन्द्रगुप्त।

आठवाँ स्वर एक घूंट।

प्रतिध्यास इनमें तीन नाटक पुराने हैं जो खुद नहीं बोल सके। मैं उनके नाम सुनाता हूँ। वे हैं सज्जन, प्रायश्चित्त और कामना। इस तरह कुल ग्यारह नाटक हैं। इन नाटकों में तीन तरह के रंग हैं—तारा का प्रकाश, उषा और सूर्योदय। इन तीनों की झाँकी देखिए —

यह सस्कृत के बाग का पोघा ह। इसम नान्दी पाठ ग्रार प्रस्तावना के पत्ते ह गद्य और पद्य की कलियाँ और फूल ह। इन कलियो म ब्रजभाषा की सुगन्धि ह। विदूषक भौंर की तरह गुनगन कर रहा ह इसम अलकारो के रग ह और रस का मकरन्द भरा हुआ ह। इसका नाम ह सज्जन

पट-मडप में दुर्योधन दु शासन कर्ण शकुनी आदि बठे हैं। नाच हो रहा ह। गान वाली गाती ह।

गानेवाली सदा जुग जुग जाग्रो महराज।
सुखी रहो सब भाति अनन्दित भोगो सब सुख साज।
नित नव उत्सव होय मगन मन विनव राज समाज।

कर्ण वाह क्या अच्छा गाया

दुर्योधन (अगूठी देकर)—मित्र कर्ण पाण्डवो को हमारे ग्रान का पता लगा कि नहीं ?

कर्ण अवश्य ही उन्हें ज्ञात होगा।

दु:शासन पांचो इस समय अकेले होग समय तो अच्छा ह।

कर्ण चुप हाँ हमारे वभव को देख कर व अवश्य ईर्षा से जलते होग और हम लोगो के आन का तात्पय भी तो यही ह।

दुर्योधन (गहरी सांस लेकर) जब से अर्जुन के अस्त्र प्राप्ति की बात हमने सुनी ह तब स हमारे मन म बडी आशका ह।

कर्ण कुछ आशका नहीं ह।

जो चड ग्रार भजदण्ड रहे सहार
ह नित्य नतन हिए मह आज धार
उद्योग मो विरत होय कबौं न हली
लछमी सदा रहत तासु बनी सुचेली

दुर्योधन क्यों न हो मित्र कर्ण ! तुम ऐसा न कहोगे तो कौन कहेगा ?

प्रतिन्यास और विदूषक अलग कह रहा है—देखो केवल कर्ण से सलाह लेने वाले मनुष्यों की क्या दशा होती है। मनुष्यो ! तुम्हें ईश्वर ने आँख भी दिया है उससे काम लिया करो। हमारे राजा दुर्योधन के तो केवल कर्ण ही मित्र हैं और होना भी चाहिए क्योंकि धृतराष्ट्र के पुत्र हैं।

कर्ण क्या बड़बड़ाता है ?

विदूषक जी धर्मावतार ! कुछ नहीं।

कर्ण झूठ बोलता है और मुँह के सामने।

दुर्योधन चला जा सामने से।

कर्ण जा मुँह मत दिखा।

प्रतिन्यास विदूषक मुँह बनाकर मुँह फेर लेता है।

दुर्योधन (झिड़ककर) बाहर जाओ।

विदूषक जाता हूँ सरकार !

प्रतिन्यास विदूषक बाहर जाता है।

कर्ण इसके सामने मन्त्रणा करना ठीक नहीं है।

प्रतिन्यास (शकुनी कहता है) मन्त्रणा क्या है। मृगया खेलने चलोगे न ? पशु भी तो इसी वन में है।

कर्ण और दुर्योधन हाँ हाँ ठीक है।

प्रतिन्यास इसी समय विदूषक को पकड़े हुए एक राक्षस आता है। कर्ण क्रोधित होकर पूछता है।

कर्ण तू कौन है ? नहीं जानता कि किसके सामने खड़ा है !

राक्षस जानता हूँ बुद्धि का जिसे अजीर्ण है और जिसे केवल कर्ण का सहारा है उस कौरवाधिपति के सामने।

कर्ण रे नाथ सोच तव वग नगीच आई
जा कौरवाधिप समीप कर ढिठाई।

क्यों हो अभीत इत आवन दुष्ट कीन्हों
देन चताव मम खड्ग मौन चीन्हो ?

दुःशासन क्या तू क्यों यहाँ आया है ?

राक्षस महाराज गंधर्वाधिराज चित्रसेन ने कहा है कि दुर्योधन से कहो कि मृगया के खेलने का विचार यहाँ न करें। उत्सव कर चुके। अब यदि अपना कुशल चाहें तो यहाँ से हस्तिनापुर को प्रस्थान करें।

कर्ण (क्रोधित होकर) जा अपने स्वामी से कह दे कि हम लोग अवश्य मृगया खेलेंगे।

राक्षस अच्छा।

प्रतिन्यास राक्षस सिर हिलाता हुआ जाता है और विदूषक की टाँग पकड़ कर खींचता है और विदूषक कहता है।

विदूषक अरे छोड़। मत दुख दे मैं तो जिसकी विजय होगी उसी के पक्ष में रहूँगा।

प्रतिन्यास यह रही पहली झाँकी संस्कृत नाटक के इसमें प्राण हैं तो पारसी थियेट्रिकल कंपनी का शरीर है। एक करैक्टर गाना गाता है दूसरा कविता पढ़ता है और तीसरा जोर से बोलता है। कथा पुरानी है लेकिन इसमें प्राण नहीं हैं। यहाँ प्रसाद जी संस्कृत के पुराने और हिन्दी के नए नाटकों के रास्ते पर चल रहे हैं। आइए अब इसके बाद की दूसरी झाँकी देखें। इसमें पश्चिम नाट्य-कला आ गई है लेकिन यह कथा अधिकतर एनिडकथन-कान की कला से भरपूर हैं। इसमें स्वगत कथन और अभिनयात्मकता का विशेष प्रभाव है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण अजातशत्रु है। इसका भी एक चित्र देखिए मगध की राजकुमारी और उदयन की रानी पद्मावती का कमरा है। पद्मावती वीणा बजाना चाहती है। कई बार

प्रयास करने पर भी नहीं सफल होती। वह कहती है।

पद्मावती जब भीतर की तन्त्री बिकल है तब यह कैसे बजे? मेरे स्वामी मेरे नाथ यह कैसा भाव है प्रभु!

प्रतिन्यास वह फिर वीणा उठाती है और रख देती है फिर गाने लगती है।

मीड़ मत खिंचे बीन के तार।

निर्दय उंगली अरी ठहर जा।
पल भर अनुकम्पा से भर जा॥
यह मूर्छित मूर्छना आह सी।
निकलेगी निस्सार। मींड मत०—

छेड़ छेड़ कर मूक तन्त्र को।
विचलित कर मधु मौन मन्त्र को॥
बिखरा दे मत शून्य पवन भी।
लय हो स्वर साकार। मींड मत०—

मसल उठेगी सकरुण वीणा।
किसी हृदय को होगी पीड़ा॥
नृत्य करेगी नग्न विकलता।
परदे के उस पार। मींड मत०—

यह सौभाग्य ही है कि भगवान गौतम आ गए हैं अन्यथा पिता की दुरवस्था सोचते सोचते तो मेरी बुरी अवस्था हो गई थी। मैं श्रमण का अमोघ सान्त्वना मुझे धैर्य देती है। किन्तु मैं यह क्या सुन रही हूँ स्वामी मुझसे असन्तुष्ट हैं! भला वह कल्पना मुझसे सहन कैसे की जायगी! कई बार दासी गई किन्तु वहाँ तो तक़ ही ऐसा है कि किसी अनुनय विनय का साहस ही नहीं होता। फिर भी कोई चिन्ता नहीं। राज भक्त प्रजा को विद्रोही होने का भय ही क्यों हो?

हमारा प्रेम निधि सु॒न्दर सरल है।
अमृतमय ह नहीं स्नम गरल ह ॥
[नेपथ्य मे—भगवान बद्ध की जय !]

पद्मावती अहा सघ सहित करुणानिधान जा रहे ह दर्शन तो करू !

प्रतिन्यास और पद्मावती भगवान बद्ध को खिडकी से देखती ह। उसी समय उन्यन प्रात ह।

उदयन (क्रोध से) पापीयसी देख न यह तर हृदय का विष तरी वासना का निष्कप जा रहा ह। इसीलिए न वह नया झरोखा बना ह !

प्रतिन्यास पद्मावती चौंककर खडी हो जाती ह और हाथ जोडकर कहती ह।

पद्मावती प्रभ ! स्वामी ! क्षमा हो। यह मति मरी वासना का विष नहीं किन्तु अमृत ह। नाथ जिसके रूप पर आपकी भी असीम भक्ति ह उसी रमणी रत्न मागधी का भी जिन्होंने तिरस्कार किया था शांति के सागर करुणा के स्वामी उन बद्ध को मांस पिंडों की भी आवश्यकता न ी।

उदयन किन्तु मरे प्राणों का ह। क्यों ? इसलिए न वीणा में सांप का बच्चा छिपाकर भजा था ? तू मगध की राजकुमारी ह प्रभत्व का विष जा तर रक्त में घुमा व कितनी ही हत्याए कर सकता ह। दुराचारिणी ! तरी चाल का दांव मझ पर नहीं चला। अब तरा अन्त ह सावधान !

प्रतिन्यास और उन्यन तलवार निकाल लत है।

पद्मावती म कौशाम्बी नरश की राजभक्त प्रजा हूँ स्वामी ! किसी घटना का आपक मन पर अधिकार हो गया ह। वह कलक मर सिर पर आ पड़ी। विचार की दृष्टि में यदि अपराधिनी हूँ तो दण्ड भी मझ स्वीकार ह। और वह दण्ड वह शांति

दायक दण्ड यदि स्वामी के कर कमलों से मिले तो मेरा सौभाग्य है। प्रभु! पाप का दण्ड ग्रहण कर लेने से वही पुण्य हो जाता है।

प्रतिन्यास पद्मावती सिर झुका कर घुटने टेकती है।

उदयन पापीयसी! तेरी वाणी का घुमाव फिराव मुझे अपनी ओर नहीं आकर्षित करेगा मुझे इस हलाहल से भरे हुए हृदय को निकालना ही होगा। प्रार्थना कर ले!

पद्मावती मेरे नाथ! इस जन्म के सर्वस्व और उस जन्म के स्वर्ग! तुम्हीं मेरी गति हो और तुम्हीं मेरे ध्येय हो जब तुम्हीं समक्ष हो तो प्रार्थना किसकी करूँ? मैं प्रस्तुत हूँ।

उदयन अच्छा।

प्रतिन्यास और उसी समय उदयन तलवार उठाता है वासवदत्ता प्रवेश करती है।

वासवदत्ता ठहरिए मागधी को दासी नवीना आ रही है जिसने सब अपराध स्वीकार किया है। आपको मेरे इस राज मन्दिर को सीमा के भीतर इस तरह हत्या करने का अधिकार नहीं है। मैं इसका विचार करूँगी और प्रमाणित कर दूँगी कि अपराधी कोई दूसरा है। वाह इसी बुद्धि पर आप राज्य शासन कर रहे हैं? कौन है बुलाओ मागधी और नवीना को।

दासी महादेवी जी आना चाहती हैं।

उदयन देवी मेरा तो हाथ ही नहीं उठता है! यह क्या माया है!

वासवदत्ता आर्य पुत्र! यह सती का तेज है सत्य का शासन है, हृदयहीन मद्यप का प्रलाप नहीं। देवी पद्मावती! तू पति के अपराधों को क्षमा कर।

पद्मावती (उठकर) भगवान् यह क्या? मेरे स्वामी! मेरा अपराध क्षमा हो। नसें चढ़ गई होंगी।

प्रति्यास पद्मावती उ्यन का हाथ सीधा करती है, इसी समय दासी आती है।

दासी महाराज ! भागिए महादेवी ! हटिए वह देखिए आग की लपट इधर ही चली आ रही है। नई महारानी के महल में आग लग गई है और उनको पता नहीं है। नवीना मरती हुई कह रही थी कि मागधी स्वयं मरी और मुझे भी उसने मार डाला ! वह महाराज का सामना नहीं करना चाहती थी।

उदयन क्या षड्यन्त्र ! अरे मैं क्या पागल हो गया था ! देवी ! अपराध क्षमा हो।

प्रतिन्यास उदयन पद्मावती के सामने घुटने टेकते हैं।

पद्मावती उठिए उठिए महाराज ! दासी को लज्जित न कीजिए।

वासवदत्ता यह प्रणय लीला दूसरी जगह होगी। चलो हटो यह देखो लपट फैल रही है।

प्रति्यास वासवदत्ता दोनों का हाथ पकड़ कर खींचकर खड़ी हो जाती है पर्दा हटता है। मागधी के महल में आग लगी हुई दिखाई पड़ती है (कुछ रुककर) यह रही दूसरी झाँकी विचारों की सत्यता और अभिनय की मनोरमता प्रारम्भ से अन्त तक बराबर चला आता है। इसमें जीवन का संगीत और संघर्ष दोनों ही है। सनातशास्त्र ने ही जयशंकर प्रसाद को प्रथम श्रेणी का नाटककार घोषित कर दिया।

अब उनकी तीसरी और आखिरी झाँकी भी देखिए। उसमें पश्चिम का नाट्य कला का स्वतन्त्र प्रभाव है। इसमें प्रसाद की मौलिकता अपनी अन्तिम सीमा पर पहुँची हुई है। उसमें मनोवैज्ञानिक सरसता का पूर्ण उदय हो गया है जैसे पूर्णमासी का चाँद हो। स्कन्दगुप्त नाटक में अभिनय पूर्ण है। स्कन्दगुप्त की माँ महादेवी की समाधि के समीप प्रदेश पर ...

टहलते हुए आता है।

पर्णदत्त सूखी रोटियां बना रखना पड़ती है जिन्हें कुत्तों को देते हुए सकोच होता था उन्हीं कुत्सित अन्नों का सचय अक्षय निधि के समान! उन पर पहरा देता हू। मैं रोऊंगा नहीं परन्तु यह रक्षा क्या केवल जीवन का बोझ वहन करने के लिए है? नहीं पर्ण रोना मत। एक बूद भी आसू आंखों में न दिखाई पड़े, तुम जीत रहो। तुम्हारा उद्देश्य सफल होगा। भगवान यदि होंगे तो कहेंगे कि मेरी सृष्टि में एक सच्चा हृदय था। सताप कर। उछलते हुए हृदय! सतोष कर। तू रोटियों के लिए नहीं है तू उसका मूल दिखाता है जिसने तुमको उत्पन्न किया है, परन्तु जिस काम को कभी नहीं किया उसे करते नहीं बनता स्वांग भरते नहीं बनता देश के बहुत से दुर्दशा ग्रस्त वीर हृदयों की सेवा के लिए करना पड़ेगा। मैं क्षत्रिय हूँ। मेरा यह पाप ही आपद्धर्म होगा साक्षी रहना, भगवन्!

प्रतिन्यास एक नागरिक प्रवेश करता है।

पर्णदत्त बाबा कुछ दे दो।

नागरिक और वह तुम्हारी कहाँ गई वह

प्रतिन्यास नागरिक इशारा कर रहा है।

पर्णदत्त मेरी बेटी? स्नान करने गई है। बाबा! कुछ दे दो।

नागरिक मुझे उसका गान बड़ा प्यारा लगता है अगर वह गाती तो तुम्हें अवश्य कुछ मिल जाता। अच्छा फिर आऊंगा।

प्रतिन्यास नागरिक चला जाता है।

पर्णदत्त (दांत पीसकर) नीच! दुरात्मा! विलास का नारकीय कीड़ा! बालों को संवारकर अच्छे कपड़े पहनकर अब भी घमंड से तना हुआ निकलता है। कुल वधुओं का अपमान सामने करते हुए भी अकड़ कर चल रहा है। अब तक विलास और नीच

वासना नही गई। जिस देश के युवक ऐसे हो उसे अवश्य दूसरो के अधिकार में जाना चाहिए। देश पर यह विपत्ति फिर भी यह निराली धा।

प्रतियास इसी समय देवसेना आती है।

देवसेना क्या है बाबा! क्या चिन्ता रहे हो? जान लो जिसने नहीं दिया वह कुछ तुम्हारा तो नहीं ले गया।

पर्णदत्त देवसेना! अन्न पर स्वत्व है भूखो का और धन पर स्वत्व है देशवासियो का प्रकृति ने उन्हें हमारे लिए हम भूखों के लिए रख छोड़ा है। वह याती है उसे लौटाने में इतनी कुटिलता! विलास के लिए उनके पास पुष्कल धन है और दरिद्रो के लिए नही। अन्याय का समर्थन करते हुए तुम्हें भूल न जाना चाहिए कि

देवसेना बाबा! क्षमा करो, जाने दो। कोई तो देगा।

पर्णदत्त हमारे ऊपर सकडो अनाथ वीरो के बालको का भार है। बेटी! वे युद्ध में मरना जानते है परन्तु भूख से तडपते हुए उन्हें देख कर आँखो से रक्त गिर पड़ता है।

देवसेना बाबा! महादेवी की समाधि स्वच्छ करती हुई जा रही हूँ। कई दिन से आज नही आया मातृगुप्त भी नहीं सब कहाँ है?

पर्णदत्त आवेगें बेटी! तुम बैठो मै अभी आता हूँ। (पर्णदत्त जाता है।)

देवसेना संगीत-सभा की अंतिम लहरदार तान धूपदान की एक क्षीण गंध धूम रेखा कुचले हुए फूलो का म्लान सौरभ और उत्सव के पीछे का अवसाद इन सबो की प्रतिकृति मेरा क्षुद्र नारी जीवन! मेरे प्रिय गान अब क्या गाऊँ और क्या सुनाऊँ! इस बार बार के गाए हुए गीतो में क्या आकर्षण है! क्या बल है जो खींचता है! केवल सुनने ही को नहीं प्रत्युत जिसके

साथ अनन्त काल तक कंठ मिला रखने की इच्छा जग जाती है! (देवसेना गाती है।)

शून्य गगन में खोजता जैसे चन्द्र निराश।
राका में रमणीय यह किसका मधुर प्रकाश॥
हृदय तू खोजता किसको छिपा है कौन-सा मुझ में?
मचलता है बता क्या दूँ छिपा तुझ से न कुछ मुझ में॥
रस निधि में जीवन रहा मिटी न फिर भी प्यास।
मुँह खोले मुक्तामयी सीपी स्वागत आस॥
हृदय तू है बना जलनिधि लहरियाँ खेलती तुझ में।
मिला अब कौन सा नव रत्न जो पहले न था तुझ में॥

[गाते हुए चली जाती है।]

प्रतिन्यास वेश बदले हुए स्कन्दगुप्त का प्रवेश।

स्कन्द जननी! तुम्हारी पवित्र स्मृति को प्रणाम!

प्रतिन्यास स्कन्दगुप्त समाधि के समीप घुटने टेक कर फूल चढ़ाते हैं।

स्कन्द माँ! अंतिम बार आशीर्वाद नहीं मिला, इसी से यह कष्ट, यह अपमान। माँ! तुम्हारी गोद में पलकर भी न मर सका!

प्रतिन्यास देवसेना प्रवेश करती है।

देवसेना हाँ राजाधिराज! धन्य भाग्य आज दर्शन हुए!

स्कन्द देवसेना! बड़ी-बड़ी कामनाएँ थीं!

देवसेना सम्राट!

स्कन्द क्या तुमने यहाँ कोई कुटी बना ली है?

देवसेना हाँ यहीं गाकर भीख माँगती हूँ और आर्य पर्णदत्त के साथ रहती हुई महादेवी की समाधि परिष्कृत करती हूँ।

स्कन्द मालवेश कुमारी देवसेना! तुम और यह कर्म! समय जो चाहे करा ले! कभी हमने भी अपने काम को क्रम बनाया था! (ठहरकर) देवसेना, यह सब मेरा प्रायश्चित्त है। आज

मैं बन्धुवर्मा की आत्मा को क्या उत्तर दूँगा जिसने निःस्वार्थ भाव से सब कुछ मेरे चरणों में अर्पित कर दिया था उससे कैसे उऋण होऊँगा! मैं यह सब देखता हूँ और जीता हूँ!

देवसेना मैं अपने लिए हो नहीं माँगती देव! आर्य पर्णदत्त ने साम्राज्य के बिखरे हुए सब रत्न एकत्र किए हैं! वे सब निरवलम्ब हैं किसी के पास टूटी हुई तलवार ही बची है तो किसी के पास जीर्ण वस्त्र खंड। उन सब की सेवा इसी आश्रम में होती है।

स्कन्द वृद्ध पर्णदत्त! तात पर्णदत्त! तुम्हारी यह दशा! जिसके लोहे से आग बरसती थी वह जङ्गल की लकड़ियाँ बटोरकर आग सुलगाता है! देवसेना! अब उसका कोई काम नहीं। चलो महादेवी की समाधि के सामने प्रतिश्रुत हो! हम तुम अब अलग न होंगे साम्राज्य तो नहीं है मैं बचा हूँ। अब अपना ममत्व तुम्हें अर्पित करके उऋण होऊँगा और एकान्तवास करूँगा।

देवसेना सो न होगा सम्राट! मैं दासी हूँ मालव ने जो देश के लिए उत्सर्ग किया है उसका प्रतिदान लेकर मृत आत्मा का अपमान न करूँगी। सम्राट देखो यहीं पर सती जयमाला की भी छोटी-सी समाधि है। उसके गौरव की भी रक्षा होनी चाहिए।

स्कन्द देवसेना बन्धु बन्धुवर्मा की भी तो यही इच्छा थी।

देवसेना परन्तु क्षमा हो सम्राट! उस समय आप विजया का स्वप्न देखते थे अब प्रतिदान लेकर मैं उस महत्त्व को कलंकित न करूँगी। मैं आजीवन दासी बनी रहूँगी परन्तु आपके प्राप्य में भाग न लूँगी।

स्कन्द देवसेना! एकान्त में किसी कानन के कोने में तुम्हें देखता हुआ जीवन व्यतीत करूँगा। साम्राज्य की इच्छा नहीं, एक

बार कह दो !

देवसेना तब तो और भी नहीं। मानव का महत्व तो रहेगा ही परन्तु उसका उद्देश भी सफल होना चाहिए। आपको अकमण्य बनाने के लिए देवसेना जीवित न रहेगी ! सम्राट ! क्षमा हो ! इस हृदय में आह कहना ही पड़ा स्कन्दगुप्त को छोड़ कर न तो कोई दूसरा आया और न वह जायगा ! अभिमानी भक्त के समान निष्काम होकर मुझे उसी की उपासना करने दीजिए उसे कामना के भंवर में फँसा कर कलुषित न कीजिए ! नाथ ! मैं आपकी ही हूं मैंने अपने को दे दिया है ! अब उसके बदले में कुछ लिया नहीं चाहती।

प्रतिन्यास देवसेना स्कन्द के पैरों पर गिर पड़ती है और स्कंद सबोध देते हुए कहता है !

स्कंद उठो देवसेना ! तुम्हारी विजय हुई ! आज मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं कुमार-जीवन ही व्यतीत करूंगा। मेरी जननी की समाधि इसमें साक्षी है।

देवसेना हैं हैं यह क्या किया !

स्कंद कल्याण का श्रीगणेश ! यदि साम्राज्य का उद्धार कर सका तो उसे पुरगुप्त के लिए निष्कंटक छोड़ जाऊंगा !

देवसेना (गहरी साँस लेकर) देवव्रत ! तुम्हारी जय हो !

प्रतिन्यास यह प्रसाद की तीसरी झाँकी है। जीवन कैसा है यह प्रसाद जी ने बड़ी सुन्दरता से पात्रों के मुख से कहला दिया है। उनके नाटकों में स्त्री सबसे बड़ी शक्ति है जिसके बल पर कभी जीवन नीचे गिरता है कभी ऊपर उठता है और जब स्त्री ऊंचे आदर्श की होती है तो वह सारे जीवन पर प्रकाश डालती है। करुणा की रागिनी में गूंजकर उसकी वाणी जीवन को उच्च

बनान का अमर सदेश देती ह ! प्रसाद के पुरुष-पात्रों में अगर बल ह तो स्त्री पात्रों में तज । और देवसेना तो सार भारतीय साहित्य को उनको अमर दन ह !



छायावाद-युग

पात्र

निर्देशक
विराट
मृदुल
मनोज
तीन विद्यार्थी
प्रोफेसर
साहित्य सरस्वती
नवयुग

निर्देशक हिन्दी-साहित्य के इतिहास में छायावाद युग अपनी आधुनिकता और नवीनता के कारण युगान्तरकारी युग समझा जा सकता है। मान लीजिए किसी शरद की सन्ध्या में बादल लाल होकर सारे आकाश में छा जायँ और दिन फूल उठे लेकिन कोई यह न समझ सके कि इतनी लालिमा कहाँ से आकर आकाश के कण कण में समा गई और कैसे समा गई! इसी प्रकार जब यह छायावाद नवीन युग की अरुणिमा लेकर उठा तो वह बहुतों की समझ में नहीं आ सका। फूल का सौंदर्य समझने के लिए निन्दय आलोचकों ने पंखुड़ियों को अलग अलग कर डाला लेकिन इससे फूल, फूल ही नहीं रहा। छायावाद युग को समझने के लिए भी उसकी पंखुड़ियाँ अलग अलग तोड़ी गईं लेकिन इससे छायावाद-युग खंड खंड होकर रह गया सौंदर्य-हत हो गया। हिन्दी-साहित्य का कोई युग इस भाँति भ्रान्तियों से जर्जरित नहीं हुआ जितना छायावाद-युग।

और जब कोई युग किसी वनौषधि की भाँति समय की भूमि पर उग उठता है तो उपवन का संरक्षक माली उसकी उपयोगिता न समझकर उसे अपने फावड़े से खोदकर दूर करना चाहता है उसी भाँति युग की संपूर्ण संवेदना लिए हुए जब छायावाद उभरा तो साहित्य-समालोचकों ने भी उसे संदेह की दृष्टि से देखा और उखाड़ फेंकना चाहा। छायावाद किसी शिशु की भाँति यह नहीं बतला सका कि दर्द किस जगह है। डाक्टरों ने नश्तर पर नश्तर लगाना शुरू कर दिए। पेट में दर्द होने पर उन्होंने सिर का आपरेशन किया और सिर में दर्द होने पर पेट का। इस प्रकार छायावाद क्षत विक्षत

होकर रह गया।

छायावाद युग-सम्मत था। वह किसी व्यक्ति विशेष की प्रवृत्ति नहीं थी। कुछ प्रमुख साहित्यकारों की प्रतिभा का कवच पहिनकर वह साहित्य क्षेत्र में अवतरित हुआ। समालोचकों के साथ स्वयं कुछ कवियों ने उसे नहीं समझा। अतः छायावाद के शत्रु राजयक्ष्मा के कीटाणुओं की भांति छायावाद के अन्तर्गत ही थे।

देखिए ये छायावादियों के नाम से पुकारे जाने वाले कुछ कवि-गण हैं जो किसी कवि-सम्मेलन के बाद चाय पीने के लिए एक कमरे में बैठे हुए बातें कर रहे हैं। कुछ की आँखों में सुरमा है ओठों में लिपस्टिक नहीं-नहीं सिगरेट है। केश कमर तक बढ़ने की चेष्टा में हैं यद्यपि अभी कंधा तक ही हैं। वे नाग वाणी में वन की पवित्रता रखने का प्रयत्न करते हुए नौटंकी के धरातल पर उतर आते हैं।

एक (कृत्रिम हंसी हंसते हुए) हि हि हि धन्य हो विराट जी! कवि सम्मेलन में आपकी कविता के श्रवण मात्र से हृत्तन्त्री के तार झ हा हा हा एक से दस दस से सौ और सौ से सहस्र-सहस्र हो गए! श्रोताओं की आँखें कभी मूमती थीं कभी झपती थीं कभी झूमती थीं। आहा! क्या पंक्ति है! और आपने पढ़ा भी कितने सुन्दर ढंग से? जैसे श्रीमती सरस्वती देवी ने उस पंक्ति को ही अपनी वीणा का तार बना लिया हो। आहा! इसी तरह मैंने भी एक पंक्ति लिखी है (स्वर से) मैं आई हूँ द्वार तुम्हारे ए ए

विराट बहुत सुन्दर! मृदुल जी! अनुभूति से रहित होकर काव्य रचना नहीं हो सकती। आपने अनुभूति के स्वर्ण कण रज कण में खोज हैं। तभी तो आपकी लेखनी ऐसी पंक्तियाँ

लिख सकती हू । आपकी रचना बहुत ही सुदर थी ।

मृदुल (नम्रता दिखाते हुए) हाँ या ही लिख लेता हूँ । म एक दिन राजटा पट रहा था । रूप चित्रण वह कुछ कर नही सकता । मन उसी की एक पक्ति लकर सौदय की सृष्टि की थी —

प्रियतम, जावन-तत्री लकर,

म आई हूँ द्वार तुम्हारे ।

पीडा का ससार छिपा ह,

गाले ह तारा क तार ।

विराट् वाह वा ! तारा के तार क्या बात कही ह । तारो के तारे भी गीले ह खूब !

मृदुल और मा सुनिय सुनिए मनाज जी ! (अत्यन्त कोमल स्वर मे)

पीडा मेरा घायल हाकर

साँसो में बठी ह सूनी ।

वह अनन्त की प्यास लिए ह

पूरी ह पर ऊनी ऊनी ।

मनोज वाह, वाह ! पूरी होकर भी ऊनी ! वाह !

मृदुल जा यह रहस्यवाद ह । छोटा-सा गीत ह । मरी अपनी अनुभूति ह ।

मनोज बहुत अच्छा ह और विराट जी ! आपका वह कौन सा गीत ह ? अनन्त की प्यास वाला !

विराट् वह तो मेरा पुराना गीत ह ! इधर नया कुछ नही लिखा ।

मनोज अजा आपका पुराना भी नया ह । सुनाइये न !

मृदुल मेरी कविता तो पूरी हुई नहीं !

मनोज वह बाद में सुन ली जायगी ।

मृदुल (क्षोभ से) अच्छा !

मनोज हाँ सुनाइए विराट् जी!

विराट् मैं सुनाऊँ? अच्छा तो सुनिए। (गुनगुनाते हैं। स्वर से गाते हुए)

यह अनन्त की प्यास माँगती है
आँसू की धारा रे।

मृदुल वाह क्या आँसू की धारा माँगी है!

विराट् यह अनन्त की प्यास माँगती है
आँसू की धारा रे।
कभी न डूबा मस्तक के उस अरुण
बिन्दु का तारा रे॥

मनोज वाह वाह अरुण बिन्दु का तारा रे! क्या बात कही है! यद्यपि अनन्त की प्यास और अरुण बिन्दु के तारे में कोई सम्बन्ध नहीं मालूम होता फिर भी बात खूब कही है। देखिये, मेरा भी एक छन्द है। (अत्यन्त मधुर स्वर से)

यह प्राण प्यासे प्यासे हैं
मैं जीवन धारा सींच रहा।
तुम मेरी साँसों में बैठी हो
इससे साँसें खींच रहा!

मृदुल (चिढ़कर) साँसें खींच रहा! साँस न हुई रस्सा हुआ!

मनोज आप मस्त हैं! चार कविता लिख लेने से कोई कवि नहीं बनता।

मृदुल आप भूल हैं कविता लिखना रस्सा खींचना नहीं है।

विराट शान्त! शान्त!

निर्देशक इन कवियों ने ही छायावाद को बदनाम किया। दूसरी ओर समालोचकों का एसा वर्ग था जो छायावाद को मायावाद और जायावाद से जोड़ कर एक ओर तो कवियों की शृंगार-चेष्टाओं को हीन-दृष्टि से देख रहा था दूसरी ओर

छायावाद के स्वानुभूतिमूलक स्वच्छन्द भावों को तारतम्यहीन समझकर अनन्त की ओर जसे परिहास-पूर्ण शब्दों से लाञ्छित कर रहा था। देखिये ये समालोचक जो संयोग से प्रोफ़ेसर भी हैं अपने क्लास में लेक्चर दे रहे हैं

प्रोफ़ेसर द्विवेदी युग की इतिवृत्तात्मक कविता में द्विवेदी युग के वस्तुवाद के चित्रण में एक सम्मोहन था एक उमंगमय प्रयोग था जिसमें परिस्थिति की स्थूलता अपने चमकीले रंगों में उभर रही थी जैसे किसी बालक ने चमकदार और रंग बिरंगे पत्थरों को अपने टेबल पर सजा कर रख दिया हो। यह कविता एक प्रदर्शनी थी जिसमें कहीं रवि वर्मा के चित्रों के आधार पर पौराणिक कथाओं पर कविताएं थीं और कहीं कृषक कोयल और वसन्त ढाक के तीन पात की तरह अलग अलग झूम रहे थे बिलकुल अलग जैसे मेरी ये उंगलियाँ हैं एक दो तीन।

एक विद्यार्थी प्रोफ़ेसर साहब! ढाक के तीन पात की तरह से क्या मतलब?

प्रोफ़ेसर जैसे आप आपकी पुस्तक और आपकी पढ़ाई तीनों अलग अलग हैं जिनमें परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं है।

(क्लास की हँसी)

प्रोफ़ेसर हाँ तो मैं कह रहा था कि द्विवेदी युग की कविता बाहरी थी भीतरी नहीं। वह केवल मधुर-पल्लव थी उसमें निवास करने वाली मुस्कान नहीं। वह गति थी, गति की मस्ती नहीं, वह मानसरोवर थी हंस नहीं।

दूसरा विद्यार्थी वह प्रोफ़ेसर थी प्रेज़ेन्स नहीं।

(हँसी)

प्रोफ़ेसर हाँ ऐसा ही समझ लीजिये! तो कविता बाहरी रूपरेखा से भीतरी रहस्यों में जाना चाहती है। प्रकृति के अन्तराल में, जो

विश्वात्मा की विभूति ह, फूल के हृदय में जो सुगंधि ह वसत के क्रोड में जा मलय पवन ह आकाश के विस्तार में, जो उपा की लालिमा ह कोमल रूपा म जो लाज भरा सौदय ह (बीच ही मे एक विद्यार्थी से) क्या आप सो रह ह ?

तीसरा विद्यार्थी (चौंक्कर) ए जी नही जी नही ! मैं म तो

दूसरा विद्यार्थी स्वप्न लोक म उड जा रह थ।

प्रोफेसर इसी तरह छायावादी-कवि उड ना रह ह। समझत ह कि व प्रकृति के अतराल में प्रवश कर रह ह लकिन व प्रवश करत ह मच्छडा की तरह। गनगुनात ह तो समझत ह सप्त स्वरा की सरिता बहा रह ह। सुदर शरीर क एक अग से उड कर दूसर अग पर बठत ह और अपन दशन की तीव्र नोक से शरीर के भातर प्रवश करना चाहत ह। कहत ह—म स्थूल से सूक्ष्म में प्रवश कर रहा हू। म कहता हू व छायावाद नाम का मलरिया फला रह ह यह मलरिया जो सक्रामक ह। पास क पढ लिखा को लगता ह और व भा छायावादी बन जात ह जी ! पर छायावादी। जी चाहता ह इन मच्छडा पर मैं फिलट छिडकना शरू कर दू। और हजारा की सख्या म य जा छायावादी मच्छड उत्पन हो गय ह इन्हें एक हा स्प्रे में दरअसल अनत की ओर भज दू।

पहला विद्यार्थी अनत की ओर क्या प्रोफसर साहब ?

प्रोफेसर अनत की ओर ए प्रिय ! स्वच्छन्दतावादी ! तु चल अनन्त की ओर। आज क युग में कोई भी अनत की ओर स कम प्रयाण करता ही नहीं। इन छायावादी कवियो न स्वच्छन्दतावादियों को भी अनन्त की ओर चलन का सकत किया ह। अनत की ओर

'जिन्हें अपने अन्त का भी ज्ञान नहीं, उन्हें अनन्त का क्या ज्ञान होगा ? जिन्दगी में डूबे हुए हैं, सिगरेट पीते हैं, सिनेमा देखकर एक दिल के हजार टुकड़े करते हैं, एक इधर गिराते हैं, एक उधर और कविता में लिखते हैं 'चल अनन्त की ओर'। अनन्त की ओर जाने में साधना चाहिए, तपस्या चाहिए।

दूसरा विद्यार्थी लेकिन प्रोफेसर साहब ! हम छायावाद का रूप तो स्पष्ट नहीं हुआ !

प्रोफेसर जब छायावाद ही स्पष्ट नहीं है तो उसका रूप क्या स्पष्ट होगा ? सारी कविता पढ़ जाइए, अगर मतलब आपकी समझ में आ जाए तो आपको सौ रुपये दूं। कविता समाप्त करने के बाद आप विचार करें कि आप क्या पढ़ गये तो मालूम होगा जैसे रस-कलश में घोड़ दौड़ कर न जाने कहाँ से कहाँ पहुँच गये। मन ऐसा हो जाता है जैसे किसी फुटबाल में से हवा निकल जाय। या जैसे ताजी चूने से पोती हुई दीवाल आपके सामने आ जाए बिलकुल साफ शून्य।

पहला विद्यार्थी लेकिन प्रोफेसर साहब ! वह स्वर से भी तो पढ़ी जाती है !

प्रोफेसर तो समझ लीजिए जैसे बैलगाड़ी दूर चली जाय और बैलों के गले से घंटी की आवाज

[घंटे की आवाज होती है।]

तीसरा विद्यार्थी (चौंककर) देखिए यह छायावाद बोला !

[हँसी]

प्रोफेसर बस टाइम इज अप !

निर्देशक इस प्रकार कवियों और समालोचकों ने आरम्भ में छायावाद की खिल्ली उड़ाई। लेकिन यह अनुचित था। किसी ने छाया

वात को समझने की चष्टा नहीं की । यदि किसी ने साहित्य की गति समझने की चष्टा की होती तो वह उनके चरण चिह्नों पर चलकर छायावाद के सिंह-द्वार पर पहुचने में समय हो सकता था ।

य ह— साहित्य सरस्वती । (वीणा की ध्वनि) इनके मधुर-कठ से साहित्य की गति विधि आपके सामने स्पष्ट हो जायगी ।

साहित्य सरस्वती मरी वीणा क स्वर निरतर गतिशील ह । इन तारों में मानव जीवन की अपार सवेदनाए ध्वनित हो रही ह । कितने कवि ह जो इन तारो के स्वर में स्वर मिला कर गा रह ह । भिन्न भिन्न दश कालो म कवियो की वाणियाँ मानव-जीवन की अभि यक्तियो में पवित्र बना ह । ससार की भाषाओं में सबसे मधुर ब्रजभाषा विश्व-काव्य की भाषा ह । इसमें कल्प वृक्ष के फूलो की सुगधि ह । नन्दन कानन के मलय की गति ह और इद्र की शची का सम्मोहक रूप ह । भाषा के माधुय का निखार रीति-काल के कवियो न बडी साधना से किया । इसके अतिम काल में यह ह भारतदु हरिश्चद्र का काव्य जिसन ब्रजभाषा के माधुय में मन के भावो का माधुय मिला दिया ह ।

(पहले नूपुरों का नत्य द्रुत गति से होता है, फिर यह मन्द परों के धीम नत्य म परिवर्तित हो जाता है । उस धीमे नत्य की पष्ठभूमि म क । पढ़ी जाती है ।)

कान पर कास चलि चलि थकि गए पाय
सुख क कसान परे ताल पर नस के ।
राय राय नननि में हाय पर जाल परे
मन्न के पाल पर प्रान पर बस के ॥

'हरीचंद अगनि हवाले परे रोगन के,
सोगन के भाल पर, तन बल खसके।
पगन में छाले पर, नाघिबे को नाले पर,
तऊ लाल लाले पर रावरे दरस के।

सा० सरस्वती युग परिवर्तन हुआ। साहित्य महारथी महावीर प्रसाद द्विवेदी ने ब्रजभाषा में पूर्ण आस्था रखते हुए भी खड़ी बोली को काव्य में सम्यक विधि से प्रवेश दिया। किन्तु खड़ी बोली ब्रजभाषा के माधुर्य से बहुत दूर थी। वह प्रयोग की वस्तु थी। गद्य की परुषता लिए हुए था, फिर भी श्री मैथिलीशरण गुप्त ने उस परुषता को कम कर उसे माधुर्य से सींचना प्रारम्भ किया। उन्होंने जयद्रथ वध में उत्तरा के करुण कंठ से जो मर्म-व्यथा की तरलता व्यक्त की है वह खड़ी बोली काव्य के प्रारम्भिक काल में अनुपम है।

(करुण स्त्री-कंठ से)

हे जीवितेश ! उठो उठो यह नींद कैसी घोर है !
है क्या तुम्हारे योग्य यह तो भूमि-सेज कठोर है।
रख शीश मेरे अंक में जो लेटते थे प्रीति से
यह लेटना अति भिन्न है उस लेटने की रीति से।
कितनी विनय मैं कर रही हूँ नम्रता से रोते हुए
सुनते नहीं हो किन्तु तुम बपुष पड़े सोते हुए।
अप्रिय न मन से भी कभी मन तुम्हारा है किया
हृदयेश ! फिर इस भाँति क्या निज हृदय निर्दय कर लिया।।

सा० सरस्वती खड़ी बोली काव्य का विकास होता गया। श्री मैथिलीशरण गुप्त के साथ श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय, श्री गोपाल शरण सिंह श्री रामनरेश त्रिपाठी आदि हिन्दी काव्य में नये नये प्रयोग करते गए किन्तु ये प्रयोग पौराणिक धार्मिक,

एतिहासिक सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र में होते रहे। इन प्रयोगों पर अंग्रेजी कविता संस्कृत काव्य साहित्य हिन्दी की पुरानी काव्य धारा तथा बंगला कविता का विशेष प्रभाव पडता रहा। इस प्रकार खड़ी बोली इन प्रभावों की परिधि में आकर अधिकाधिक काव्य के उपयुक्त बनती गयी। अब इसमें इतिवृत्तात्मकता के साथ कल्पना भावना और अभिव्यंजना भी आने लगी। किन्तु खड़ी बोली काव्य का विकास अभी और आगे होना को था और फलस्वरूप छायावाद-युग का आविर्भाव हुआ। इस युग का आविर्भाव कैसे हुआ यह मैं स्पष्ट कर दूं।

यह १९१४ का प्रथम युद्ध।

ससार की दो महान शक्तियाँ अपनी संपूर्ण तयारी से युद्ध के मैदान में एकत्रित हुई और युद्ध की ज्वाला ससार के एक कोने से दूसरे कोने तक पहुंच गई। सांस्कृतिक विकास स्तब्ध रह गया और विज्ञान अपने दृढ़ चरणों से मानव-जीवन को रौंदता आगे बढ़ने लगा। राजनीतिक और सामाजिक जीवन की समस्त मान्यतायें छिन्न विछिन्न हो गयीं और राजनीति रक्त के सिंहासन पर बैठ गई। जब यह युद्ध समाप्त हुआ तो ससार ने एक नया प्रकाश देखा। दूसरे के बल पर खड़ा होना देश के लिए घातक है। भारत ने विदेशियों के आतंक में अपनी निर्बलता का अनुभव किया और राष्ट्र चेतना की एक नई लहर आन्दोलित हो उठी।

भारत की संस्कृति अत्यन्त प्राचीन है। वह विश्व कल्याण के प्रशस्त पथ पर बढ़ी है। उसने राष्ट्र चेतना में प्रेम और अहिंसा को स्थान दिया। व्यक्ति सामने आया और उसने मानवतावाद को सामने रखकर प्राचीन सकीर्ण परिपाटियों से

जीवन को मुक्त करने का संदेश दिया। वह स्वानुभूति की अभिव्यक्ति के लिए जागरूक हुआ और उसने काव्य नाटक उपन्यास और कहानियों में यह स्वच्छंद प्रवृत्ति प्रतिष्ठित कर दी। उसने अपने सामने नये मानदंड रक्खे उसने समाज की नवीन कल्पना को और अपनी भावना की अभिव्यक्ति के लिये उसने नये मूल्य अंकित किए। देखिए ! यह नवयुग बोल रहा है।

नव युग मेरा युग संक्रान्ति युग है बड़े अन्तर्द्वन्द्व का युग है। एक ओर तो प्राचीन संस्कृति और उसमें निहित दर्शन की देश काल निरपेक्ष महानता के प्रति आकर्षण है और दूसरी ओर क्षण क्षण में बदलने वाले युग के नये मूल्यों और नयी मान्यताओं का आग्रह है। फलस्वरूप साहित्यकारों ने प्राचीन साहित्य से चिन्तन ग्रहण किया बदलती हुई परिस्थिति से नवीन दृष्टि और अनुभूति तथा अपनी आदर्श या यथार्थ प्रियता से कल्पना। इस प्रकार मेरा युग काव्य के क्षेत्र में एक मानवतावादी स्वच्छन्द परिवर्तनों का युग है जिसमें क्रान्ति का अर्थ मिला है। यह क्रान्ति चिन्तन नवीन दृष्टि की अनुभूति और कल्पना से उत्पन्न हुई है। चिन्तन, नवीन दृष्टि और कल्पना ने अभिव्यंजन-पद्धति ग्रहण की, और इस अभिव्यंजन-पद्धति में प्रतीक और चित्रात्मकता की शक्ति आप से आप आ गयी है। विश्व प्रेम और मानवतावाद ने मुझे दार्शनिकता प्रदान की है। इस दार्शनिकता की अभिव्यक्ति में लौकिक और अलौकिक प्रेम के दोनों ही क्षेत्र लीन हो गए और इस सांस्कृतिक चेतना या समस्त अभिव्यंजना को छायावाद का नाम दिया गया है। प्रस्तुत की व्यंजना अप्रस्तुत से होने के कारण अथवा मूर्त को अमूर्त से इंगित करने के कारण

मुझे छाया शब्द दिया गया और मेरा नाम छायावाद पड़ा। मेरे नाम का सर्व प्रथम प्रयोग श्री मुकुटधर पांडेय ने सन १९२२ में किया था।

यह मेरा युग है। चाहें तो मुझे आप छायावाद-युग कह सकते हैं। छायावाद से आप केवल काव्य-शैली ही न समझें इसे आप मानवतावाद की स्वच्छन्द-दृष्टि कह दें जिससे मैं व्यक्ति की सवेदनाओं को नये-मूल्यों में आँकना चाहता हूँ। मेरी इस छायावादी चेतना में कविता, नाटक उपन्यास और कहानी सभी का समावेश है। यदि आप देखना चाहें तो मैं सर्वप्रथम आपको कल्पना क्षेत्र में ले चलूँ जहाँ पं० सुमित्रानन्दन पंत ने छाया को सम्बोधन कर मेरा छायावाद नाम सार्थक किया है।

(पुरुष कंठ से छाया शीर्षक पं० सुमित्रानन्दन पंत *की कविता का पाठ*)

कौन कौन तुम परिहृत वसना
म्लान मना भू पतिता सी
वात-हता विच्छिन्न लता सी
रति-श्रान्ता व्रज-वनिता सी
नियति वंचिता आश्रय रहिता
जर्जरिता पद-दलिता सी
धूलि धूसरित मुक्त कुंतला
किसके चरणों की दासी ?
कहो कौन हो दमयंती-सी
तुम द्रुम के नीचे सोई ?
हाय ! तुम्हें भी त्याग गया क्या
अलि ! नल-सा निष्ठुर कोई ?

पाले पत्तों की शय्या पर
तुम विरक्ति सी मूर्छा सी
विजन विपिन में कौन पड़ी हो
विरह मलिन दुख विधुरा-सी ?
गूढ़ कल्पना सी कवियों की
अज्ञाता के विस्मय सी
ऋषियों के गभीर हृदय सी
बच्चों के तुतले भय सी
आशा के नव इन्द्रजाल सी
सजनि, नियति-सी अन्तर्धान
कहो कौन तुम तरु के नीचे
माया सी हो छिपी अजान ?
× × ×
गाओ गाओ विहग बालिके !
तरुवर से मृदु मंगल गान,
मैं छाया में बैठ तुम्हारे
कोमल स्वर में कर लूं स्नान।
हाँ सखि आओ बाँह खोल हम
लग कर गले जुड़ा लें प्राण।
फिर तुम तम में मैं प्रियतम में
हो जावें द्रुत अन्तर्धान।

नवयुग ये नवीन-कल्पनाएँ ये नवीन मान्यताएं यह नवीन मानवीकरण मेरे युग का प्रधान लक्षण है। अब आप मेरा स्वच्छन्दवाद श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला की 'जूही की कली' में देखें (सुहृद पुरुष-कंठ से जूही की कली का पाठ)
विजन वन वल्लरी पर

सोती थी सुहाग भरी स्नेह स्वप्न मग्न
कमल कोमल तनु तरुणी जुही की कली
दृग बन्द किये शिथिल पत्रांक में।
वासती निशा थी
विरह विधुर प्रिया सग छोड
किसी दूर देश में था पवन
जिसे कहते हैं मलयानिल
आई याद बिछुड़न से मिलन की वह मधुर बात
आई याद कांता की कंपित कमनीय गात
आई याद चांदनी की धुली हुई आधी रात
फिर क्या ? पवन
उपवन सरसरित गहन गिरि कानन
कुंज लता पुंजों को पार कर
पहुंचा जहाँ उसने की केलि खिली कली साथ
सोती थी जाने कहो कैसे प्रिय आगमन वह ?
नायक ने चूमे कपोल
डोल उठी वल्लरी की लड़ी जैसे हिंडोल
इस पर भी जागी नहीं चूक क्षमा माँगी नहीं
निद्रालस वंकिम विशाल नेत्र मूंदे रही
किंवा मतवाली थी यौवन की मदिरा पिये कौन कहे ?

नवयुग जुही की कली का इतना मनोवैज्ञानिक और निस्संकोच चित्रण सभवत किसी साहित्य में न हो। अब चिन्तन और चिन्तन की स्मृति का झाँकी थी जयशंकर 'प्रसाद' के गीत में देखिये

ये कुछ दिन कितने सुन्दर थे !
जब सावन घन सघन बरसते

इन आँखों की छाया भर थे
वे कुछ दिन कितने सुंदर थे।
सुर धनुरंजित नव जलधर से
भर छितिज व्यापी अम्बर से
मिल चूमते जल सरिता के
हरित कूल युग मधुर अधर थे
वे कुछ दिन कितने सुन्दर थे।
प्राण पपीहा के स्वर वाली
बरस रही थी जब हरियाली
रस जलकन मालती मधुन से
जो मदमाते गंध विधुर थे
वे कुछ दिन कितने सुंदर थे।

नवयुग जीवन की चिंतनमयी लालसा इससे अधिक और क्या हो सकती है ? अब मेरे युग की अनुभूति की रसात्मकता श्रीमती महादेवी वर्मा के सान्ध्यगीत में देखिये —

(नारी-कंठ से महादेवी वर्मा के 'सान्ध्यगीत' का पाठ)

जाने किस जीवन की सुधि ले
लहराती आती मधु बयार।
रंजित कर दे यह शिथिल चरण
ले नव अशोक का अरुण राग
मेरे मंडन को आज मधुर ला
रजनीगंधा का पराग
यूथी की मीलित कलियों से
अलि दे मेरी कबरी सँवार।
पाटल के सुरभित रंगों से
रँग दे हिम-सा उज्ज्वल दुकूल

मयाग से उसी वक्त एक कटा हुआ कनकौआ हमारे ऊपर से गुजरा। उसकी डोर लटक रही थी। लड़कों का एक गोल पीछे पीछे दौड़ा चला आता था। भाई साहब लम्बे हैं ही। उछल कर उसकी डोर पकड़ ली और बेतहाशा होस्टल की तरफ दौड़े। मैं पीछे पीछे दौड़ रहा था।

नवयुग कितनी सरलता स्वाभाविकता और विनोद के साथ प्रेमचन्द ने दो भाइयों के मनोविज्ञान का मनमोहक चित्र खींचा है। आतंक डालने में जब असफलता मिलती है तो दशा कितनी दयनीय हो जाती है। यद्यपि स्नेह के आधार पर हमारे मन में उसके प्रति श्रद्धा उत्पन्न होती है। प्रेमचंद ने समस्त परंपराओं से मुक्त होकर कलात्मक रूप से मनोवैज्ञानिक व्यक्ति को उभारा है। कितना स्वच्छन्द किंतना लोकरंजक दृष्टिकोण है। नाटकों के क्षेत्र में भी इसी का अभाव है। यों तो भारतीय रंगमंच विस्मृति की वस्तु हो गया था किन्तु श्री भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने नाट्य रचना कर इस साहित्य को पुनः अंकुरित किया। पौराणिक और ऐतिहासिक आधार पर नाट्य रचना कर उन्होंने जैसे नाटक को रंगमंच के धरातल तक ला देना चाहा। लेकिन नाट्य की साधना शत [illegible] की थी और नाटक प्रयोग शाला मात्र। भारतेन्दु के प्रदत्त को कलात्मक बनाने का काम श्री जयशंकर प्रसाद ने किया। उन्होंने भी अपना नाटक साहित्य इतिहास के सोपान पर प्रतिष्ठित किया किन्तु ऐतिहासिक घटनाओं और व्यक्तियों में उन्होंने इतनी स्फूर्ति प्रेरणा और कल्पना भरी कि वे हमारी श्रद्धा और सम्मान के प्रतीक बन गये। मनोविश्लेषण और अन्तर्द्वन्द्व की कला उनके पात्रों में है। ऐतिहासिक सूत्र लेकर उन्होंने पात्रों की स्वाभाविकता और व्यक्तित्व की पूर्ण प्रतिष्ठा की। पात्रों की विश्लेषण

शली इस युग के फल-स्वरूप ह। आप देखें कि 'स्क'"गुप्त' नाटक के अतिम दृश्य में नाटककार 'प्रसा" न देवसेना का चरित्र कितनी उन्नत्त दृष्टि से चित्रित किया ह —

हृ"य का कोमल कल्पना ! सो जा। जीवन में जिसकी सभावना नही, जिसे द्वार पर आए हुए लौटा "िया था उसके लिए पुकार मचाना क्या तर लिए कोई अच्छी बात ह ? आज जीवन के भावी सुख आशा और आकाक्षा—सबसे म विग्न लती हूँ।

आह ! व"ना मिला विग्ाई।

नवयुग यह मरा सदेश म परिचय ह। का"य उपयास कहानी और ना"क के मा"यम से छायावा" युग को जो देन है आशा ह, उसके सबध में आपके मन में कभी कोई भ्रान्ति न होगी।

निदशक छायावा" युग का स्पष्टीकरण स्वय नवयुग ने आपके समच किया। हि"ा सा"ित्य क इतिहास में खडी बाला का माधुय और ओज वास्तव में छायावा"-युग द्वारा ही विकसित हो सका। इसकी साधना करन वाला में अनक कलाकार ह जो अपन भ्रान दृष्टिकोण से जीवन का मूल्यांकन करने में समथ ह। यह छायावा" युग आधुनिक "िदी साहित्य का एक महत्वपूण युग समझा जायगा।



कविता का युग-पथ

[एक नाटकीय-परिसवाद]

परिसवाद के सदस्य

श्री सुमित्रानन्दन पन्त
डा० रामकुमार वर्मा
श्री 'बच्चन'
श्री वात्स्यायन 'अज्ञेय'
श्री शिवमंगल सिंह 'सुमन'

[यह परिसंवाद आकाशवाणी इलाहाबाद केन्द्र पर हुआ था। कवियों द्वारा कहे गए सवालों का ध्वनि आलेख कर लिया गया था। आकाशवाणी के सौजन्य से ही यह प्रथम बार प्रकाशित हो रहा है।]

(आकाशवाणी के कक्ष में श्री सुमित्रानन्दन पन्त बैठे हुए डा० रामकुमार वर्मा की पुस्तक 'कबीर का रहस्यवाद' पढ़ रहे हैं। उनकी मुख मुद्रा गंभीर है। कुछ देर में डा० रामकुमार वर्मा आते हैं।)

पन्त जी आइए डा० रामकुमार आइए! आपकी पुस्तक 'कबीर का रहस्यवाद' मुझे मिल गई बहुत धन्यवाद। मेरी प्रति खो गई है।

डा० रामकुमार आप नहीं खो गये पन्त जी! यही बहुत है।

(हास्य)

पन्त जी कौन जाने? अच्छा यह तो बतलाइए डाक्टर रामकुमार! आज की हिन्दी कविता की रहस्यवादी भावना कबीर की रहस्यवादी भावना से किस प्रकार भिन्न है? अहा बच्चन जी! नमस्ते! (बच्चन जी का प्रवेश) आइए बैठिए हाँ तो ? (बच्चन जी बैठते हैं।)

डा० रामकुमार पन्त जी! रहस्यवाद के सम्बन्ध में यों ही कुछ कह देना बड़ा कठिन है क्योंकि वह अन्तर्जगत का विषय है। इसको भाषा द्वारा व्यक्त करना कवियों के लिए सदैव कठिन रहा है। उसका सम्बन्ध उनकी अनुभूति से रहा है

बच्चन जी आपका तात्पर्य है शायद सूक्ष्म अनुभूति से?

डा० राम० अनुभूति तो सूक्ष्म होती ही है मेरा अभिप्राय है सूक्ष्म विषयों ...

की अनुभूति से। रहस्यवादी-कवि केवल वाणी के ही वर-पुत्र नही रहे हैं वे महान साधक भी रहे हैं और कबीर तो महान् साधक ही नही महान सिद्ध भी थे। उनकी साधना चेतना के उच्च से उच्चतम सोपानो पर चढ कर उसके रहस्यपूर्ण शिखरों की अनिर्वचनीय अनुभूति को झीनी झीनी बीनी चदरिया के रूप मे अभिव्यक्त करने मे समर्थ हुई है।

पन्त जी अज्ञेय जी आ गए है! (अज्ञेय जी का प्रवेश) आप इधर बैठिए अज्ञेय जी (अज्ञेय जी बैठते हैं।) रहस्यवाद पर चर्चा चल रही है!

डा० रामकुमार एक सच्चे रहस्यवादी की तरह कबीर की सूक्ष्म अनुभूतियो का सम्बन्ध सदैव हृदय-तत्व तथा उच्च कोटि की आनन्द भावना से रहा है।

पन्त जी लेकिन आधुनिक छायावादी कविता की रहस्य भावना के बारे मे आप क्या सोचते है?

बच्चन जी हाँ रामकुमार जी! इसके सम्बन्ध में बतलाइए।

डा० रामकुमार आपको ज्ञात ही है कि इस युग की विषम परिस्थितियो के कारण आज के कवियो को इस प्रकार की अन्तर्मुखी भावना के लिये विशेष अवसर नहीं प्राप्त हो सका है और उनकी रहस्यात्मक अनुभूति भी शायद उतनी ऊर्ध्व अथवा गहन नहीं हो सकी है। बस कवि की प्रतिभा अथवा विशेष दृष्टि सभी अवस्थाओं तथा परिस्थितियो में विराग तथा जड को भी भेद कर उसके भीतरी सत्य की सत्ता का दर्शन कराती रही है। और आज के काव्य में भी इसके अनेक उदाहरण मिल सकते हैं।

बच्चन जी अच्छा रामकुमार जी! तो आप अपनी कोई रचना सुनाइए जिससे आधुनिक-काव्य सम्बन्धी आपका दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाए।

अज्ञेय जी निश्चय ही।

डा० रामकुमार म यह कसे कहूँ कि मैं उस गहराई तक पहुँच सका हूँ जिस गहराई पर आकर कविता रहस्यवाद के अतगत आ सकती ह। किन्तु साधना की दिशा से म अपरिचित नहीं हूँ। और आपको म अपनी एक एसी रचना स्वर स सुनाता हूँ —

(मौन करुणा)

म तुम्हारी मौन करुणा का सहारा चाहता हूँ।
जानता हूँ इस जगत में
फूल की ह आयु कितनी
और यौवन की उभरती
साँस में ह वायु कितनी!
इसलिए आकाश का विस्तार
सारा चाहता हूँ।
म तुम्हारी मौन करुणा का सहारा चाहता हूँ।
प्रश्न चिह्नों में उठी हैं
भाग्य सागर की हिलोरें
आँसुओं से रहित होंगी
क्या नयन की नमित कोरें?
जो तुम्हें कर दे द्रवित
वह अश्रु धारा चाहता हूँ।
म तुम्हारी मौन करुणा का सहारा चाहता हूँ।
जोड़ कर कण-कण कृपण
आकाश न तारे सजाए
जो कि उज्ज्वल ह सही
पर क्या किसी क काम आए?
प्राण! मैं तो माग दशक

एक तारा चाहता हूं।
मैं तुम्हारी मौन करुणा का सहारा चाहता हूं।

यह उठा कैसा प्रभंजन!
जुड़ गयीं जैसे दिशाएं!
एक तरणी एक नाविक
और कितनी आपदाएं!
क्या कहूं! मझधार में ही
मैं किनारा चाहता हूं!
मैं तुम्हारी मौन करुणा का सहारा चाहता हूं।

पन्त जी बहुत सुन्दर!

बच्चन जी और अज्ञेय जी बहुत सुन्दर वाह!

पन्त जी डा० रामकुमार! आपने काव्य में रहस्य भावना के सम्बन्ध में जो कुछ कहा उससे मैं यह समझा कि रहस्यवाद के आनन्द का अनुभूति से अविच्छिन्न सम्बन्ध है। किन्तु आनन्द की अनुभूति के तो अनेक स्वरूप और अनेक स्तर हो सकते हैं न?

डा० रामकुमार इसमें क्या सन्देह है? बच्चन जी की मधुशाला को ही लीजिये बच्चन जी ने अपनी आनन्द भावना में जैसे उमरखैयाम को नवीन रूप से हमारे सामने रख दिया है।

बच्चन जी उमरखैयाम की आनन्द भावना से प्रारम्भ में अवश्य बहुत कुछ प्रभावित हुआ हूं किन्तु मेरी प्रेरणा के स्रोत और भी रहे हैं। उमर में ऐन्द्रिक सुख की भावना अधिक मिलती है। किन्तु मैंने भारतीय होने के कारण आध्यात्मिक आनन्द को ही अपना लक्ष्य बनाया है। यद्यपि जीवन के सुखों को त्यागकर मैं आध्यात्मिक आनन्द नहीं चाहता।

डा० रामकुमार यह स्वाभाविक भी है।

बच्चन जी और मुझे इन दोनों में कोई विरोध भी नहीं दिखाई देता। जैसे मेरी मधुशाला की एक रुबाई लीजिए

मैं मदिरालय के अन्दर हूँ
मेरे हाथों में प्याला,
प्याले में मदिरालय बिंबित
करने वाली है हाला,
इस उधेड़-बुन में ही मेरा
सारा जीवन बीत गया—
मैं मधुशाला के अन्दर या
मेरे अन्दर मधुशाला !

अज्ञेय जी लेकिन बच्चन जी ! उमरखय्याम को भी मात्र सुखवाद ही का उपासक नहीं कहा जा सकता।

बच्चन जी यह ठीक है। किन्तु उमर बुद्धि के स्तर से ऊपर नहीं उठ सका है और मुझे आध्यात्मिक प्रेरणाओं से भी सहायता मिली है।

पन्त जी अच्छा तो आप अपनी कोई नवीनतम रचना सुनाकर अपने इस ज्ञान-वाद और सुखवाद के सामंजस्य को चरितार्थ कीजिए।

डा० रामकुमार हाँ बच्चन जी ! मैं भी यही कहने जा रहा था।

अज्ञेय जी लीजिए सुमन जी भी आ गये !

(सुमन जी का प्रवेश)

डा० रामकुमार आइए सुमनजी बच्चन जी की कविता सुनिये ! (सुमन जी बैठते हैं।)

बच्चनजी मैं आपको मिलन-यामिनी का एक गीत सुना रहा हूँ —

स्वप्न में तुम हो तुम्हीं हो जागरण में ।

कब उजाले में मुझे कुछ और भाया,
कब अंधर ने तुम्हें मुझसे छिपाया
तुम निशा में औ' तुम्हीं प्रात किरण म
स्वप्न में तुम हा तुम्हीं हो जागरण में ।

जो कहो मन तुम्हारी थी कहानी
जो सुनी, उसमें तुम्हीं तो थी बखानी
बात म तुम औ तुम्हीं वातावरण म
स्वप्न म तुम हो तुम्हीं हो जागरण म ।

ध्यान ह केवल तुम्हारी ओर जाता
ध्यय म मेर नहीं कुछ और आता
चित्त म तुम हो तुम्हीं हो चितवन में,
स्वप्न म तुम हो तुम्हीं हो जागरण में ।

रूप बनकर घूरता जो वह तुम्हीं हो
राग बनकर गूजता जो वह तुम्हीं हा
तुम नयन म औ तुम्हीं अत करण में
स्वप्न में तुम हो तुम्हीं हो जागरण में ।

डा० रामकुमार वाह, क्या मार्मिक अभिव्यजना ह ! व्यक्ति का और विराट का सान्त और अनन्त का कैसा सम्मत सामजस्य तथा सम्बध दिखलाया गया ह !

सब लोग निस्सदेह !

पत जी आपके अकस्मात आगमन स आज की गोष्ठी और भी परिपूर्ण हो गई सुमन जी ! हम अभी अभी आधुनिक हिन्दी-कविता के सम्बध में अपने विचारों का आदान प्रदान कर रह थ ।

सुमन जी इससे अच्छा क्या हो सकता है कि आप सब लोगों से एक साथ ही भेंट हो गई। कहिये वात्स्यायन जी! अच्छी तरह हैं? आपने भी तो हिन्दी-कविता में अनेक सुन्दर और नवीन प्रयोग किये हैं। उनके सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण बतलाने का कष्ट करेंगे?

अज्ञेय जी किस प्रकार का दृष्टिकोण?

पन्त जी पहिले आप यह बतलाइये कि आपके इन प्रयोगों के भीतर कौन-सी मूल प्रेरणाएं काम करती रही हैं।

बच्चन जी आप का प्रश्न कठिन है।

अज्ञेय जी मूल प्रेरणाएं? वही जो सब कविता की होती हैं अपने अहं की अभिव्यक्ति या सिद्धि। लेकिन अगर आपका प्रश्न प्रयोगों के बारे में है तो मुझे पहली बात यह कहनी है कि प्रयोग प्रत्येक कवि करता है। वाल्मीकि का 'मा निषाद' एक प्रयोग ही था जो आदि काव्य बन गया।

डा० रामकुमार लेकिन आत्माभिव्यक्ति के प्रयोग, और टेकनिक के प्रयोग में अन्तर है न?

अज्ञेय जी है भी और नहीं भी। टेकनिक अपने में इष्ट नहीं न प्रयोग अपने आप में इष्ट हो सकता है। दोनों साधन हैं और क्योंकि आज के कवि का व्यक्तित्व या अहं अपेक्षाकृत जटिल है इसलिए उसकी अभिव्यक्ति के साधनों में नयी गहराई की जरूरत होती है। आज हम जिस तरह जड़ पदार्थ के भीतर अणु शक्ति का आविष्कार कर के चकित भी हैं और गर्वित भी उसी तरह हम शब्द की अन्तर्हित शक्ति को भी उद्घाटित और नियंत्रित करना चाहते हैं खिलवाड़ के लिये नहीं इसलिये कि हमारे पास उस शक्ति के लिये काम है। शब्द की शक्तियों में संगीत भी एक शक्ति है, वो

वह क्या नहीं उपभोज्य है ? स्वयं पंत जी ने और निराला जी ने उसके सुन्दर और सफल प्रयोग किये हैं। हाँ कि नहीं ? कुछ कवि उस शक्ति को अधिक महत्व देते हैं, कुछ कम ! मैं अधिक महत्व देने वाला में से हूँ। इसके अलावा स्वरों का मैं विशेष उपयोग करना चाहता हूँ जिसके पीछे भारतीयेतर कविता के अध्ययन का भी प्रभाव है। भारतीय कविता में वर्णानुप्रास में व्यंजनों की ही प्रधानता रही है और स्वरों से डिज़ाइन में तो कोई स्थान ही नहीं रहा। यह तो शब्द मौजूद का बात है।

सुमन जी लेकिन इस बात में से क्या का ध्यान ही उतर में नहीं पड़ जाता ? यह केवल प्रतीकों को जन्म देता है और प्रतीक भी निरे बौद्धिक।

अज्ञेय जी दूसरी बात किसी हद तक ठीक है, लेकिन प्रतीकों के बौद्धिक होने से आनन्द लाभ क्या कम होना चाहिए ? मैं तो मानता हूँ कि आज का कविता पाठक सामाजिक कम बौद्धिक अधिक है और इसलिए बौद्धिक प्रतीक कविता को उसके अधिक निकट लाते हैं। आज के सभ्य जीवन की अनुभूति प्रतीक, कम ... कहा जाता है क्योंकि आज की अनुभूतियाँ शुद्ध अनुभूतियाँ नहीं हैं, अनुभूति और वितर्क और रेशनलाइज़ेशन का एक जटिल सम्पुंजन है।

डा० रामकुमार यानी सभ्यता वरदान नहीं, एक सज़ा है जो हमें गूंगा बना देती है ?

अज्ञेय जी आप कभी कह सकते हैं लेकिन वह सज़ा नहीं, वह निरे व्यक्ति के अधिक निकट हुए सामाजिक रूप का नीकापेक्षा नियन्त्रण है।

पंत जी अब आप कोई कविता सुनाइए जिसमें इन बातों का स्पष्टी

करण हो।

अज्ञेय जी "लीजिए हरी घास पर" सुनाता हूँ। यह प्रेम ही की कविता है लेकिन उसका कथ्य प्रेम के अलावा उसका नाटकीय एक्टिंग भी है और बहुत से मानसिक घात प्रतिघात और गुत्थियाँ भी हैं —

आओ बैठें
इसी ढाल पर
हरी घास पर।
माली चौकीदार का यह समय नहीं है
और घास तो
अधुनातन मानव मन की भावना की तरह
सदा बिछी है—हरी न्योतती
कोई आकर रौंदे।

आओ बैठो।

तनिक और सटकर कि हमारे बीच स्नेह भर का
व्यवधान रहे बस,
नहीं दरारें सभ्य शिष्ट जीवन की।
चाहे बोलो।
चाहे धीरे धीरे बोलो,
स्वगत गुनगुनाओ
चाहे चुप रह जाओ
हो प्रकृतस्थ तनो मत कटी छँटी उस बाड़ सरीखी,
नमो खुल खिलो सहज मिलो
अन्तःस्मित अन्तःसंयत
हरी घास-सी।

क्षण भर भुना सकें हम
नगरी का बचन कुम्हलाती गहमह मधुलान्ट—
और न मानें उसे
पलायन

क्षण भर देख सकें
आकाश धरा
दूर्वा, मधाली
पौधे
लता डोलती,
फूल
झरे पत्ते
तितली भनगे
फुनगी पर पूंछ उठाकर इतनी छोटी सी चिड़िया—
और न सहसा चोर कह उठे मन में
प्रकृतिवाद है स्खलन
क्योंकि युग जनवादी है।

(आदि आदि)

सुमन जी अत्यन्त सुघरी रचना है और एकदम ही नवीन माध्यम।

बच्चन जी इसमें संदेह नहीं।

डा॰ रामकुमार अच्छा पन्त जी! आपकी पूर्ववर्ती रचनाओं में और विशेषकर 'पल्लव' 'गुंजन' में जो आपका ध्वनि-सम्बन्धी दृष्टिकोण रहा है क्या वह उन्हीं भावनाओं से परिचालित रहा है जिनकी व्याख्या अज्ञेय जी ने अभी की है?

पन्त जी बहुत कुछ। मैं कविता में व्यंजन-संगीत से स्वर-संगीत को

अधिक महत्व देता हूँ जसा कि मन पल्लव की भूमिका में भी विस्तारपूवक कहा ह । म श" शक्ति और अथ शक्ति के सामजस्य को सफल काव्य रचना के लिये अनिवाय मानता हूँ। प्रारभिक रचनाओं से मरा श" शक्ति के प्रयोगा की ओर अधिक ध्यान रहा ह ।

डा० रामकुमार हमार प्राचीन साहित्य में ध्वनि की जो परिभाषा दी गई ह क्या आपकी परिभाषा उससे कुछ भिन ह ?

पन्त जी अभिधा लक्षणा "यजना की दष्टि से ध्वनि का अथ दूसरा हाता ह किन्तु जिस म चित्र भाषा कहता हू उसमें मैं प्राचीन सस्कृत साहित्य स ही नहीं अग्रेजी साहित्य से भी प्रभावित हुआ हू । और स्वर-सगीत की ओर मरा ध्यान अग्रेजी का"य सा॒ित्य के ज्ञान स ही गया ह ।

सुमन जी पन्त जी इधर क्या आप ध्वनि-सगीत से दूर होकर विचार प्रधान नहीं बनत जा रह ह ?

डा० रामकुमार एसी शका बहुतों को ह ।

पन्त जी आप एसा कह सकते हं । मेरी इधर की रचनाओ में विचार गाम्भीय अधिक होगा एसा होना स्वाभाविक ही ह । कि"तु जसा मैं प्रारम्भ में कह चुका हूँ श" और अथ के सामजस्य की ओर मरा प्रयत्न सदव रहा ह । मेरी नवीनतम रचनाए भी ध्वनि-सगीत से शू"य नहीं हैं । यह अवश्य ह कि उनका अलंकरण उतना व्यक्त न रह कर प्रच्छ"न हो गया ह ।

सुमन जी क्या आप अपनी नवीनतम रचना सुनाकर इसकी पुष्टि कर सकते हैं ?

पन्त जी मैं कवल सुना सकता हूँ पुष्टि करना आपका काम ह । सुनिय मैं आपको उत्तरा की एक कविता सुना रहा हूँ

सा माग भगाना ग उप मा
 फिर दव दूा मा भोतर,
सुर धनुषा म मिस पंत पान
 नव स्वप्न उतरत जन भू पर !

रग रग म धाया जन ।मी
 प्राभा पनडियाँ पत्तों झर
फिर मना-लहरियां पर निरतीं
 बिम्बित सुर ग्रप्सरियाँ नि स्वर !

यह र भू का निर्माण काल
 हसता नव जीवन ग्ररुणोदय
न रही जम नव मानवता
 ग्रब सव मनुजता होती क्षय !

घू घू कर जलता जीर्ण जगत
 लिपटा ज्वाला में जन ग्रतर
तम म पवत पर टूट रही
 विद्युत प्रताप सा ज्योति प्रखर !

सघषण पर कर सघषण
 यह दविक भौतिक भू-कम्पन
उल्लित जन मन का समुद्र
 युग रक्त जिह्व करता नतन !

ढह रह ग्रघ विश्वास शृग
 युग बदल रहा यह ग्रहा ग्रहन !
फिर शिखर चिरतन रह निखर
 यह विश्व-सचरण रे नूतन !

बज रहे घटिया से तरु न्न
छवि-ज्वार पल्लवित जग जीवन
नव ज्योति चरण धर रहा सृजन
फिर पुष्प वृष्टि करते सुर गण !

अब स्वर्ण द्रवित र अतनभ
झरते नीरव शोभा निर्झर
अवतरित हो रही सूक्ष्म शक्ति
फिर मौन गुजरित उर अम्बर

बढ़ता प्रकाश तम-बाँहों में
सुर मानव तन करते धारण
फिर लोक चेतना रग भूमि
भू-स्वर्ग कर रहे परिरभण !

डा० रामकुमार बहुत सुन्दर ! (सुमन से) आप क्या सोचते हैं सुमन जी ! हिन्दी का मुक्त-काव्य ध्वनि-सगीत की रक्षा करने में सफल हुआ है ?

बच्चन जी हाँ इस पर अवश्य प्रकाश डालिए सुमन जी ! आपने छन्दबद्ध और छन्द मुक्त दोनो तरह की सफल कविता की है।

सुमन जी मेरी दृष्टि में ध्वनि की उपयोगिता केवल भावना की अभिव्यक्ति के लिये है। छन्दबद्ध काव्य ने केवल जीवन के सुन्दर और सगीतमय क्षणों तथा भावनाओं को ही वाणी दी है वह जीवन की विषमताओं तथा युग के सघर्ष के लिए और आज की क्रान्ति और विद्रोह की भावनाओं के लिए सरल तथा सफल माध्यम नहीं बन सका है। वह भावनाओं के उभार को भी पूर्ण स्वाभाविकता के साथ अभिव्यक्त

करने में असफल रहा है।

पन्त जी और मुक्त काव्य ?

सुमन जी अगर लय या रिदम की दृष्टि से देखें तो मुक्त छन्द की भी अपनी एक लय है जो युग जीवन के प्रवाह का वहन करने में सफल हो सकी है। उसके छोटे-बड़े चरण युग-जीवन की तथा विशृंखलता को अधिक अभिव्यक्त कर सके हैं। वह युग मन के आन्दोलन तथा असंगति को संगति तथा प्रगति की ओर ले जाने में पूर्णत सफल हुई है।

अज्ञेय जी यह युग की प्राणमय और शक्तिमय पुकार है।

सुमन जी उसका नाटकीय आज तथा वक्तव्य जनता के स्वाभिमान को ही वाणी न दे सका है वह आज की बिखरी हुई वास्तविकता तथा विविधता में एकता तथा संगठन भी स्थापित करने में समर्थ हुआ है।

डा० रामकुमार मुक्त छन्द के सम्बन्ध में आज आपने अनेक बातें अच्छी कही। अब आप मुक्त छन्द की अपनी एक कविता सुना कर अपने विचारों को मूर्तिमान भी बना दीजिए।

अज्ञेय जी मेरा भी यही अनुरोध है।

सुमन जी अच्छी बात है। मैं आपको मुक्त छन्द से अपनी शरद-सी तुम कर रही होगी कहीं शृंगार शीर्षक रचना सुना रहा हूँ क्योंकि मुक्त छन्द भी एक प्रकार से कविता का मुक्त काव्य ही है।

काँस सी मेरी व्यथा बिखरी चतुर्दिक
बाढ़ सा उमड़ा हृदयगत प्यार
मेघ भारी के झमाझम झर रहे जो—
शरद-सी तुम कर रही होगी कहीं शृंगार।

लुट रहा ह
छुट रहा ह
रुद्ध क्षुब्ध प्रवाह
जीवन मुक्त अन्तर्दाह

सुलगता आकाश धरती पुलक माना
आज हरियाली गई पथ भूल ।
हृत उमगा का भला कोई ठिकाना
खो गई सरि खो गये दो कूल ।
तप्त अन्तर म घुमडती तरलता म्रिय माण

गल गये पाषाण
वष भर की वदना सिमटी
कि लहराया अतल उन्मुक्त पारावार ।
नील नभ स स्निग्ध निमल केश
गूथे जा रहे हागे सवार सवार
पिस रही मेंहदी महावर रच रहा
तारिकावलि चद्रिका की हो रही होगी सहेज-समार ।

म प्रतीक्षा रत
धो रहा पथ
हृसमात्र मुक्त वन्दनवार
शस्य-चामर चारु शन्य-शफालिका का हार ।

पत जी धन्यवाद ।



